# ARCHAEOLOGY OF FAIZABAD DISTRICT
# फैजाबाद जनपद का पुरातत्व

डी० फिल० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

शोधकर्ता
विजय प्रकाश वर्मा

निर्देशक
डा० जे० एन० पाल
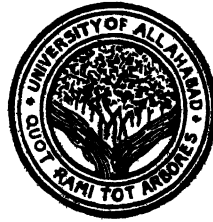
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

1993

## प्रस्तावना

प्रथम सहस्राब्दी ई०पू० के मध्य में गंगा के मैदान में द्वितीय नगरीकरण के साथ संस्कृति और सभ्यता के विकास में जो प्रगति हुई, उसके अधिकांश पुरातात्त्विक अवशेष इस क्षेत्र की बड़ी नदियों के तट पर प्राप्त हैं, लेकिन गंगा जैसी बड़ी नदियों से दूर स्थित क्षेत्रों में सांस्कृतिक विकास का क्या स्वरूप था ? इसकी स्पष्ट जानकारी अभी तक नहीं हो पायी है । इस समस्या को ध्यान में रखकर ।आर्क्यालजी आफ फैजाबाद डिस्ट्रिक्ट। फैजाबाद जनपद का पुरातत्त्व विषय पर इस शोध कार्य का चयन किया गया । फैजाबाद जनपद गंगा के मैदान के मध्यवर्ती भाग में गंगा और हिमालय की तराई के मध्य में स्थित होने के कारण इस समस्या पर उल्लेखनीय प्रकाश डाल सकता है । उपयुक्त जलवायु और उपजाऊ मिट्टी के कारण यह क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक सम्पन्न था और इसीलिए यह उत्तर प्रदेश के अत्यधिक जनसंकुल जनपदों में से एक है । इसीलिए संभवत: प्राचीनकाल से लेकर आधुनिककाल तक इस क्षेत्र में सांस्कृतिक विकास का अविच्छिन्न क्रम प्राप्त होता है । इसीलिये यह जनपद अत्यधिक जनसंकुल जनपदों में से एक है । फैजाबाद जनपद के दक्षिण में मध्य पाषाणकाल से मानव संस्कृति के अस्तित्व के प्रमाण मिलने लगते हैं । पशुओं और वनस्पतियों से समृद्ध इस क्षेत्र ने मध्यपाषाणयुगीन मानव को स्थायी आवास बनाने के लिए प्रेरित किया । यद्यपि फैजाबाद जनपद का गहन सर्वेक्षण अभी तक पूर्ण नहीं हो पाया है लेकिन यह असंभव नहीं कि इस क्षेत्र में भी मध्यपाषाणयुगीन मानव के अवशेष दबे पड़े हों । मध्यपाषाणकाल से लेकर आधुनिक काल तक के सांस्कृतिक विकास के स्वरूप का निर्धारण करना प्रस्तुत शोध का एक प्रमुख उद्देश्य है । अपेक्षाकृत छोटी नदियों और झीलों के किनारे आवास स्थलों का विकास, उनका प्रसार,

आवास स्थलों के पारस्परिक संबंध का निर्धारण और इस क्षेत्र की संस्कृतियों के सामाजिक और आर्थिक विकास को निर्धारित करने के उद्देश्य से भी इस शोध-विषय का चयन किया गया है ।

उपलब्ध साहित्यिक स्रोतों का पुरातात्विक प्रमाणों से सामंजस्य स्थापित करने का भी प्रयास वर्तमान अध्ययन में किया गया है । विगत कुछ वर्षों से फैजाबाद जनपद में स्थित अयोध्या नगर में एक पूजास्थल दो संप्रदायों के पारस्परिक विवाद के कारण देश की राजनीतिक गतिविधियों को प्रभावित किये हुये है । इसके राजनीतिक विवाद में पड़ने से बचते हुए इस स्थल 'रामजन्मभूमि-बाबरी मस्जिद' के ऐतिहासिक और पुरातात्विक पक्षों की ओर भी संकेत किया गया है ।

फैजाबाद जनपद का पुरातत्व (आर्क्यालजी आफ फैजाबाद डिस्ट्रिक्ट) नामक यह शोध ग्रन्थ 6 अध्यायों में विभक्त है । प्रथम अध्याय में फैजाबाद जनपद की भौगोलिक स्थिति, प्रशासनिक विभाजन, जनसंख्या, प्राकृतिक संरचना, जल-विकास तंत्र, पशु-जगत और वनस्पति जगत तथा अवशिष्ट आदिम जातियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है जो पुरातात्विक अध्ययन क्षेत्र की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है ।

द्वितीय अध्याय में फैजाबाद जनपद जिस बड़े भौगोलिक क्षेत्र (मध्य गंगा का मैदान) में आता है उसके प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक स्वरूप का निर्धारण किया गया है । मध्य पाषाण संस्कृति के विभिन्न चरणों, नवपाषाण संस्कृति और ताम्रपाषाणिक संस्कृतियों के जो अध्ययन अब तक किये गये हैं उनसे स्पष्टतः प्रतीत

होता है कि यह क्षेत्र मानव संस्कृति के विकास में नूतनकाल के प्रारम्भ से ही योगदान देने लगा था और परवर्ती काल की उत्तर भारत की विकसित संस्कृतियों को एक ठोस आधार प्रदान किया था ।

तृतीय अध्याय विभिन्न साहित्यिक, ऐतिहासिक और पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर इस क्षेत्र का क्रमिक इतिहास प्रस्तुत करता है । पारम्परिक पौराणिक इतिहास जो प्रारम्भिक साहित्यिक ‡पौराणिक‡ विवरणों के आधार पर निर्मित किया गया है, यद्यपि उसकी ऐतिहासिकता में सन्देह की गुंजाइश है फिर भी उसको पूर्णत: निराधार नहीं माना जा सकता । ऐतिहासिक काल से लेकर भारत की स्वतंत्रता के काल तक का फैजाबाद का संक्षिप्त इतिहास इस अध्याय में वर्णित है ।

चतुर्थ अध्याय इस जनपद में हुए पुरातात्विक अनुसंधानों का विवरण प्रस्तुत करता है जिसे दो खण्डों ‡अ‡ पुरातात्विक सर्वेक्षण और ‡ब‡ पुरातात्विक उत्खनन के अन्तर्गत विभाजित किया गया है । यद्यपि अधिकांश स्थलों का सर्वेक्षण वर्तमान शोधार्थी ने स्वयं किया है लेकिन इसमें ऐसे स्थलों को भी सम्मिलित किया गया है जिनकी खोज पूर्ववर्ती खोजकर्ताओं ने की थी। क्योंकि पुरातात्विक उत्खनन एक शोध कर्त्ता के लिए अकेले संभव नहीं है इसलिए शोध संस्थानों द्वारा किये गये उत्खननों से प्राप्त प्रमाणों का लेखा जोखा प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है । इन पुरा-तात्विक अनुसंधानों से फैजाबाद जनपद में विभिन्न संस्कृतियों के क्रमिक विकास, उनके आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि पहलुओं पर उल्लेखनीय प्रकाश पड़ा है ।

पाँचवे अध्याय में साहित्य और पुरातत्व, जो वस्तुतः एक दूसरे के पूरक होकर ऐतिहासिक सत्य के अत्यधिक निकट पहुँचने में सहायता कर सकते हैं, के पारस्परिक सामँजस्य का प्रयास हुआ है । अयोध्या और रामकथा के बारे में वाल्मीकि रामायण और अन्य ब्राह्मण, जैन तथा बौद्ध ग्रन्थों में जो विवरण मिलते हैं वे पुरातात्विक अनुसन्धानों से कहाँ तक मेल खाते हैं, इस समस्या पर प्रो० बी० बी० लाल और उनके सहयोगियों द्वारा किये गये उत्खननों से जो प्रमाण मिले हैं, उन्हें संक्षेप में प्रस्तुत करने का प्रयास हुआ है । चीनी यात्रियों के विवरणों और ब्रिटिश काल के शोधकर्त्ताओं के विवरणों ने इस समस्या पर जो संकेत किये हैं उनका उल्लेख भी इस अध्याय में हुआ है ।

छठें अध्याय में इस अध्ययन के निष्कर्षों को संक्षेप में उपसंहार के रूप में उल्लिखित किया गया है ।

प्रस्तुत शोध-कार्य में मुझे शोध निदेशक गुरुवर डॉ० जे०एन० पाल का सदैव निर्देशन और सहयोग मिलता रहा है और उन्हीं के प्रोत्साहन से मैं पुरातत्व जैसे विषय में शोध-कार्य के लिए प्रवृत्त हुआ । उनके असीम स्नेह के लिए मैं उनके प्रति सादर नतमस्तक हूँ ।

मैं अपने समस्त गुरुजनों, मित्रों एवं शुभचिन्तकों के प्रति आभारी हूँ जिनके सहयोग, स्नेह, प्रेरणा और प्रोत्साहन से प्रस्तुत शोध-कार्य पूरा किया जाना सम्भव हो सका । इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व

विभाग के मेरे गुरुजन प्रो० एस०सी० भट्टाचार्य, प्रो० वी०डी० मिश्र, प्रो० आर०के० द्विवेदी, प्रो० ओम प्रकाश, प्रो० डी० मण्डल, श्री बी०बी० मिश्र, डॉ० गीता देवी, डॉ० जे०एन० पाण्डेय, डॉ० आर०पी० त्रिपाठी से मुझे निरन्तर प्रोत्साहन और सहयोग मिला है, इसके लिए मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

प्रयाग विश्वविद्यालय के निवर्तमान अध्यापकगण - स्वर्गीय प्रो० जी०आर० शर्मा, प्रो० जी०सी० पाण्डेय, प्रो० जे०एस० नेगी, प्रो० बी०एन०एस० यादव, प्रो० यू०एन० राय, प्रो० एस०एन० राय और डॉ० संध्या मुकर्जी के प्रति भी मैं उनके शुभाशीष और स्नेह के लिए आभारी हूँ ।

मेरे शुभचिन्तक और मित्रगण सर्वश्री राजाराम निषाद, सीताराम निषाद, हौसिला प्रसाद वर्मा, निखिल यादव, सदरे आलम, सियाराम वर्मा, मो० अनजार, मो० मुस्तफा, प्रो० रामसिंह, चौधरी सेवाराम सिंह, बच्चाराम चौधरी, माणिक चन्द्र, शिवकुमार शुक्ल, सुरेन्द्र प्रताप सिंह, प्रह्लाद बरनवाल, रणविजय सिंह, कन्हैया लाल सेठ, अवधेश कुमार चौधरी, देवनारायण श्रीवास्तव, विश्वनाथ चौधरी, सत्य प्रकाश वर्मा, श्याम लाल शुक्ल, मो० अजीम आदि ने अपने अपने ढंग से मेरी जो सहायता की है उसके लिए मैं सबको साधुवाद देता हूँ । सर्वेक्षण के दौरान गाँवों के उन अज्ञात व्यक्तियों का मैं विशेष आभारी हूँ जिन्होंने मुझे अत्यधिक सहायता पहुँचायी है ।

मैं अपने विभागाध्यक्ष प्रो० एस०सी० भट्टाचार्य के प्रति मुझे इस अध्ययन में

पूर्ण सहयोग प्रदान करने के लिए विशेष रूप से आभारी हूँ ।

प्रस्तुत अध्ययन में मुझे जिन पुरातत्वविदों और इतिहासकारों की खोजों और कृतियों से सहायता मिली है उन सबके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ । प्रो० बी०बी० लाल, श्री के०बी० सौन्दरराजन, श्री के०एन० दीक्षित, प्रो० आर०के० वर्मा, प्रो० डी०एन० त्रिपाठी, प्रो० वी०सी० श्रीवास्तव, प्रो० पुरुषोत्तम सिंह, प्रो० के०पी० नौटियाल, प्रो० के०के० थपल्याल, डॉ० एम०डी०एन० साही, प्रो० आर०एन० मिश्र, डॉ० आर०पी० पाण्डेय आदि विद्वानों से मुझे समय समय पर प्रेरणा और प्रोत्साहन मिला है मैं उनके प्रति आभारी हूँ ।

प्रस्तुत शोध ग्रन्थ के रेखाचित्रों के निर्माण में श्री हर्षनाथ कर, श्री लक्ष्मी कान्त तिवारी और श्री राजेन्द्र प्रसाद के सहयोग के लिए मैं उनका आभारी हूँ । श्री राम बरन यादव ने बहुत कम समय में इस शोध ग्रन्थ को टंकित करके मुझे कृतार्थ किया है, मैं उनका आभार मानता हूँ ।

अन्त में अपने परिवारजनों के प्रति भी आभारी हूँ जिन्होंने असीम धैर्य का परिचय देते हुए मेरे मनोबल में वृद्धि करते हुए मुझे निरन्तर प्रेरणा और सहयोग प्रदान किया ।

विजय प्रकाश वर्मा

(विजय प्रकाश वर्मा)

## मानचित्रों और फलकों की सूची

---------::0::---------

# विषय-सूची

# अध्याय प्रथम

## स्थिति, तहसील, प्राकृतिक अवस्था, जलवायु, नदियाँ झीलें और तालाब तथा आदिम जातियाँ

## स्थिति, तहसील, प्राकृतिक अवस्था, जलवायु, नदियाँ, झीलें और तालाब तथा आदिम जातियाँ

स्थिति :

फैजाबाद उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में से एक है । यह $26^{0}9'$ से $26^{0}50'$ उत्तरी अक्षांश तथा $81^{0}40'$ से $83^{0}8'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है ।[1] घाघरा नदी इस जिले की उत्तरी सीमा निर्धारित करती है जो इसे गोण्डा, बस्ती और गोरखपुर जिलों से अलग करती है । गोमती नदी जिले के दक्षिण-पश्चिमी छोर पर 13 किलोमीटर तक प्रवाहित होती है । यह नदी जहाँ जनपद की सीमा को छोड़ती है वहाँ इससे आकर मझुई नदी मिलती है जो जिले की दक्षिणी सीमा निर्धारित करती है । जिले के उत्तरी सीमा पर गोण्डा और बस्ती, दक्षिणी सीमा पर सुल्तानपुर, पूर्वी सीमा पर आजमगढ़ और गोरखपुर तथा पश्चिमी सीमा पर बाराबंकी जिले स्थित हैं ‖चित्र संख्या 1‖ । जिले की लम्बाई लगभग 145 किलोमीटर तथा चौड़ाई 45 किलोमीटर है । जिले का क्षेत्रफल लगभग 6400 वर्ग किलोमीटर है ।

फैजाबाद जनपद सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश राज्य के सघनतम आबादी वाले जिलों में एक है । यद्यपि यह जनपद क्षेत्रफल की दृष्टि से प्रान्त में 32वें स्थान पर है लेकिन जनसंख्या की दृष्टि से इसका स्थान बारहवाँ है । उल्लेखनीय है कि यह सघन जन-संख्या जनपद के बड़े नगरों के कारण नहीं अपितु ग्रामीण जनसंख्या की सघनता के कारण है । जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर 528 है और साक्षरता दर

---

1. जोशी, ई०वी०, 1960, उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स : फैजाबाद, पृष्ठ 1.
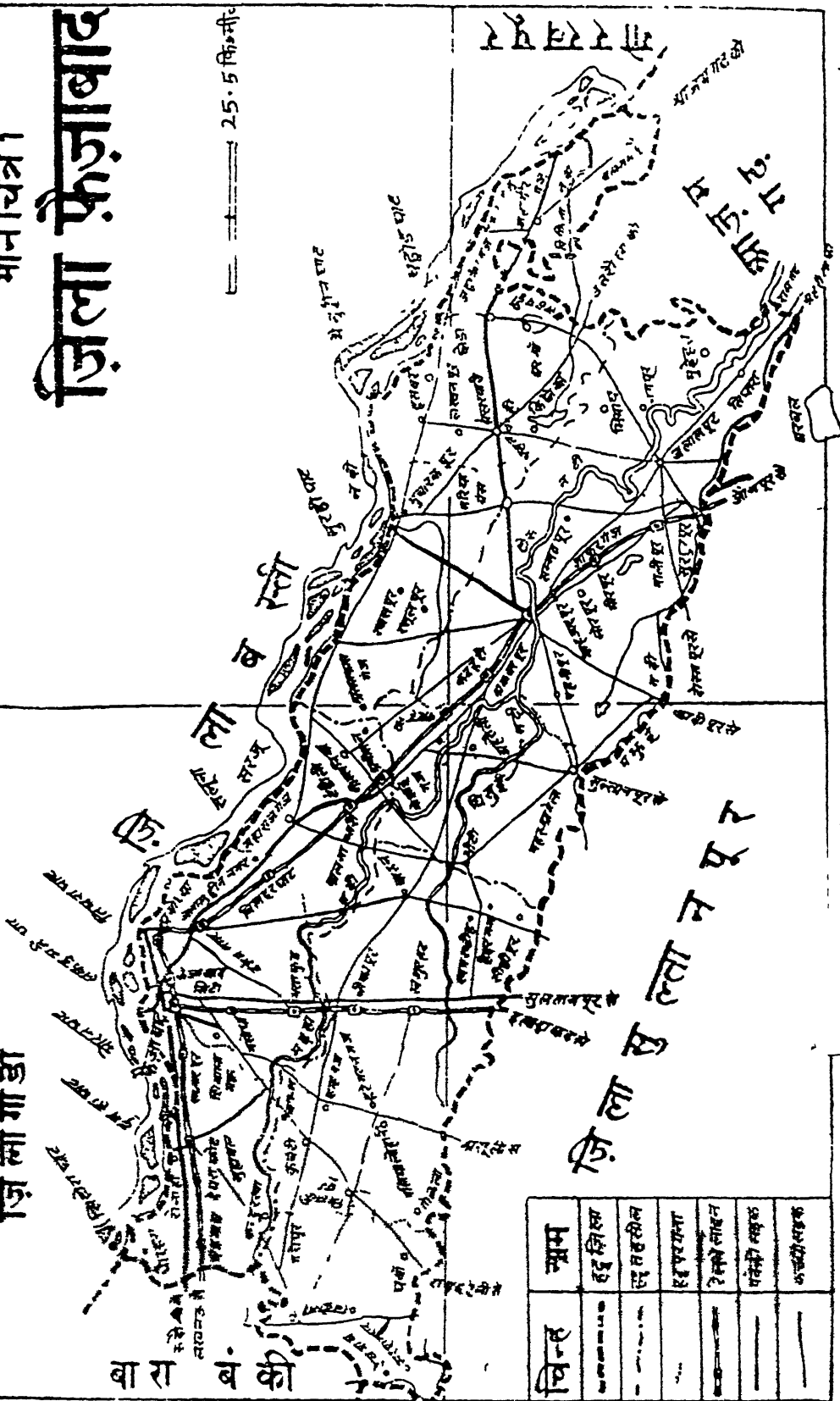
मानचित्र 1 : फैजाबाद जनपद का मानचित्र

25.60% (पुरुष 38.18% और स्त्री 12.14% है) । नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 10.96% है ।[1]

तहसीलें :

फैजाबाद जिले में वर्तमान समय में 5 तहसीलें हैं : फैजाबाद, बीकापुर, टाण्डा, अकबरपुर और जलालपुर । उत्तर पश्चिम में फैजाबाद तहसील, दक्षिण पश्चिम में बीकापुर, उत्तर पूर्व में टाण्डा तथा दक्षिण पूर्व में जलालपुर तहसीलें हैं । इन चारों तहसीलों से घिरा अकबरपुर तहसील जिले के मध्य में है जो जिले के दक्षिणी सीमा पर स्थित है ।

प्राकृतिक अवस्था : उच्चावचन (टोपोग्राफी) :

सम्पूर्ण जनपद मूलतः एक समतल मैदान है जिसमें उत्तर-पश्चिम से दक्षिण पूर्व में प्रवाहित होने वाली छोटी नदियाँ और नाले और बहुत सी झीलें विद्यमान हैं । जनपद की उत्तरी सीमा की तरफ घाघरा नदी की तलहटी में जलोढ़ मिट्टी वाली जमीन है जो इस नदी के समय समय पर स्थानान्तरण के कारण निर्मित हुई है । भूमि संरचना की दृष्टि से सम्पूर्ण जनपद दो भागों में विभाजित किया जा सकता है - निचली भूमि और ऊपरी भूमि । निचली भूमि (माँझा) घाघरा नदी का बाढ़ग्रस्त मैदान है और यह नदी के किनारे फैला हुआ है । यह कहीं-कहीं चौड़ा और कहीं कहीं संकरा है । माँझा की यह भूमि अधिकांशतः असमतल है । यह

---

1. गुप्त, रवीन्द्र, 1982, जिला जनगणना हस्त-पुस्तिका, पृष्ठ 9.

जंगली जानवरों को शरण देने वाली झाऊ कसेहरी आदि जंगली घासों से आच्छादित विस्तृत परती भूमि के लिए जाना जाता है । इस क्षेत्र में मटियार जलोढ़ मिट्टी और कहीं कहीं सफेद बालू मिलती है । मटियार जलोढ़ मिट्टी में बिना अधिक परिश्रम के रबी की अच्छी फसल होती है किन्तु खरीफ की फसल बहुत अच्छी नहीं होती है । इसके अतिरिक्त जनपद का शेष भाग ऊँची जमीन वाला है जो अधिकांशतः उपजाऊ और घनी आबादी वाला है । अधिकांश भूमि पर खेती होती है केवल आम, महुआ के बागों, छोटे छोटे तालाबों व ढाक के वनों का क्षेत्र परती रहता है । अकबरपुर और टाण्डा तहसीलों विशेषतः अकबरपुर तहसील के दक्षिणी भू-भाग में उसरीली जमीन है । उसरीले क्षेत्र में अक्सर बड़े बड़े गाँव मिलते हैं जबकि अन्यत्र छोटे छोटे पुरवे हैं लेकिन मंगल्सी परगने के पश्चिम में बड़े गाँव भी मिलते हैं यद्यपि इस क्षेत्र में उसर बहुत कम हैं । इस जनपद की समुद्रतल से औसत ऊँचाई 117 मीटर है ।

मिट्टी की भौतिक विशेषताओं के आधार पर ऊँची जमीन को बलुआ, दोरस और मटियार के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है । बलुआ क्षेत्र एक से तीन कि०मी० की चौड़ाई में फैला हुआ है । यह उत्तर में घाघरा नदी के ऊपरी किनारे के समानान्तर और दक्षिण पश्चिम में गोमती नदी के किनारे पर फैला हुआ है । यह बलुई भूमि सम्पूर्ण जनपद के 5.6% भू-भाग पर है । जनपद की सबसे मुख्य मिट्टी बालू की मात्रायुक्त भूरी चिकनी मिट्टी है । यह मिट्टी नमीयुक्त होती है । अतः इसमें सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है और जुताई आसानी से हो जाती है । इस मिट्टी के बालूयुक्त होने के कारण बरसात में अपरदन अधिक

होता है तथा जल-स्तर नीचा होने के कारण कुओं का निर्माण कठिन होता है ।

बलुई मिट्टी वाले क्षेत्रों के बगल दोरस मिट्टी के मैदान हैं जो बालू और मिट्टी से मिश्रित है । यह मिट्टी सम्पूर्ण जनपद के 66% भाग पर है । इस क्षेत्र के बीचोंबीच पश्चिम से पूर्व की ओर मड़हा नदी प्रवाहित होती है जिसके उत्तरी भाग में अत्यधिक उपजाऊ समतल मैदान है और दक्षिणी भाग में छोटे छोटे तालाब, ढाक के जंगल और नाले हैं । मटियार भू-भाग सम्पूर्ण उच्च भूमि और झीलों तथा तालाबों के किनारे मिलते हैं । इस तरह की भूमि बीकापुर और अकबरपुर तहसीलों के दक्षिणी भाग में अधिक मिलती हैं । यह सम्पूर्ण जनपद के 22% क्षेत्रफल में है और इस क्षेत्र में जल निकासी की व्यवस्था ठीक नहीं है । यह मिट्टी काफी कठोर होती है और खेती करने के लिए अधिक मेहनत करना पड़ता है ।

<u>जलवायु</u> :

फैजाबाद जिला उत्तरी भारत के गंगा के मैदान का एक भाग है ।[1] जिले की जलवायु सामान्यतया स्वास्थ्यप्रद है । यहाँ मुख्यतया तीन ऋतुएँ होती हैं-जाड़ा,

------------------

1. यह मैदान उत्तर में हिमालय और दक्षिण में विन्ध्य के मध्य स्थित द्रूफ में इन दोनों पहाड़ों से आने वाली नदियों के जलोढ़ मिट्टी से निर्मित हुआ है, देखिए, स्पेट ओ०एच०के० और ए०टी०यू० लीरमान्थ 1960, <u>इण्डिया एण्ड पाकिस्तान : ए जनरल एण्ड रीजनल जागर्फी</u>, पृष्ठ 41-42.

गर्मी और बरसात । जाड़े का समय सामान्यतया अक्टूबर से फरवरी तक, गर्मी का समय मार्च से जून तक तथा बरसात का समय आधे जून से सितम्बर तक रहता है । वर्षा यहाँ मुख्यतया मानसूनी हवाओं से होती है । गर्मियों में वर्षा अधिक होती है और सर्दियों में कम ।

वर्षा का वार्षिक औसत 100 से 150 सेमी0 के मध्य होता है । वर्षाकाल को छोड़कर यहाँ की जलवायु अपेक्षाकृत शुष्क रहती है । मई और जून का महीना सबसे गर्म तथा दिसम्बर जनवरी का महीना सबसे ठण्डा रहता है । गर्मी के दिन में तापमान कभी कभी 46$^{0}$सें0ग्रे0 तक पहुँच जाता है । जाड़े के दिनों में तापमान 8$^{0}$सें0ग्रे0 तक गिर जाता है ।

फैजाबाद जिला विशेषरूप से एक समान आकृति वाला समतलप्राय मैदान है जिस पर मुख्यत: उत्तर पश्चिम से दक्षिण की तरफ बहती हुई छोटी छोटी नदियाँ और नाले हैं । कुछ झीलें भी जिले में हैं । जिले के उत्तरी सीमा पर बहने वाली घाघरा नदी जिले की सर्वप्रमुख नदी है । घाघरा नदी के किनारे की मिट्टी रेतीली है लेकिन ज्यों-ज्यों हम नदी से दूर होते जाते हैं त्यों-त्यों हमें दोमट और मटियार प्रकार की उपजाऊ भूमि मिलती जाती है ।

## नदियाँ

**घाघरा :**

जिले की सबसे प्रमुख नदी घाघरा है जो हिमालय पर्वत से निकलती है । यह जिले के उत्तरी सीमा पर प्रवाहित होती है । पौराणिक परम्परा के अनुसार

इस पवित्र नदी को मानसरोवर झील से जहाँ ब्रह्मा ने विष्णु द्वारा बहाये गये आनन्द के आँसुओं को एकत्रित किया था, मुनि वशिष्ठ द्वारा जनता की प्रार्थना पर अयोध्या लाया गया । इसीलिए सरयू को कभी-कभी वशिष्ठ की कन्या और वशिष्ठ गंगा भी कहा जाता है । किंबदन्ती है कि अयोध्या में गुप्तार घाट पर भगवान श्री रामचन्द्र हमेशा के लिए गुप्त हुए थे । इसी कारण यहाँ पर इस नदी को हिन्दुओं की अतिपवित्र नदी माना गया है । यह नदी नेपाल की तराई से निकलकर बहराइच जनपद में प्रवाहित होती है । अल्मोड़ा में इसे सरयू ही कहते हैं ।[1] बहराइच में 90 किलोमीटर तक प्रवाहित होने के बाद कौडियाल से मिल जाती हैं । इसके प्राचीन प्रवाह मार्ग को देखने से लगता है कि प्राचीनकाल में कौडियाल से भिन्न धारा में प्रवाहित होती हुई यह घाघरा नदी में मिलती थी । इसके प्राचीन प्रवाह-मार्ग को छोटी सरयू के नाम से जाना जाता है जो बहराइच से 1.5 किमी0 हटकर बहराइच से निकलकर गोण्डा जनपद में घाघरा में मिलती है ।

---

1. इस नदी के ऊपरी भाग में भूतात्विक अध्ययनों से पता चलता है कि अपने उद्भव स्थल पर यह एक हिम नदी है । इसके चतुर्थककालीन जमावों का भी ऊपरी भाग में अध्ययन किया गया है जिसमें वोल्डर, ग्रैवेल, नीसीय और क्वार्टजाइट और दूसरे प्रस्तर पिण्ड प्राप्त होते हैं । असम्भव नहीं कि प्राचीनकाल में यह नदी अपने साथ लघु-पाषाण उपकरणों के निर्माण में प्रयुक्त प्रस्तरपिण्ड भी लायी जिसका प्रयोग गंगा घाटी के मध्य पाषाणकालीन मानव ने किया था, देखिए, चम्याल, एल0एस0, 1987, ए प्रीलिमिनरी नोट आन दि क्वाटरनरी डिपाजिट्स आफ दि अपर सरयू बेसिन इन कुमायूँ हिमालय, <u>मैन एण्ड इनवायरमेण्ट</u>, वैल्यूम 11, पृष्ठ 93-97.

सरयू घाघरा संगम के बाद यह नदी घाघरा के ही नाम से जाना जाती है । अयोध्या में भी इसे सरयू नदी कहते हैं ।

घाघरा की सहायक नदियाँ

जिले में घाघरा की कोई महत्त्वपूर्ण सहायक नदी नहीं है । कुछ निम्न-लिखित छोटी नदियाँ इससे मिलती हैं :-

थिरूआ :

यह छोटी नदी टाण्डा कस्बे के लगभग 1.5 किलोमीटर पूरब घाघरा नदी से मिलती है । यह नदी फैजाबाद तहसील के अमसिन परगना के समन्था गाँव के झील से निकलती है ।

पिकिया :

आगे पूरब में एक दूसरी छोटी नदी है पिकिया नदी जो टाण्डा तहसील में विडहड़ परगना के रामडीह सराय जिसे गडहा भी कहते हैं - से निकलती है । यह नदी यहाँ से बहती हुई आजमगढ़ जिले में प्रवेश कर जाती है लेकिन थोड़ा दूर बहने के बाद यह पुन: फैजाबाद जिले की सीमा में प्रवेश करती है और उत्तर की तरफ मुड़ने के बाद यह कमहरिया घाट के पास घाघरा नदी से मिल जाती है ।

टोड़ी नदी:

यह एक छोटी सहायक नदी है जो टाण्डा वसखारी के मध्य स्थित डेवहट झील से निकलती है । यह दक्षिण पूर्व दिशा में किछौछा होती हुई विडहड़ और

सुरहुरपुर परगना की सीमा से होकर आजमगढ़ जिले में प्रवेश करती है ।

<u>मड़हा, विसुई और टोंस नदी</u> :

टोंस नदी का उद्गम स्थल बाराबंकी जिले के भिटौली गाँव की एक झील है । यह अयोध्या से 24 किलोमीटर दक्षिण में घाघरा नदी के समानान्तर बहती हुई विसुई नदी में अकबरपुर तहसील के श्रवण क्षेत्र के पास आकर मिलती है । रामायण में इस नदी को तमसा के नाम से पुकारा गया है । इस नदी का तट वाल्मीकि के प्रारम्भिक जीवन से सम्बन्धित है । विसुई नदी सुल्तानपुर जिले के उत्तर में ऐनपुर नामक गाँव के पास एक विशाल तालाब से निकलती है और पश्चिमी रथ परगना के दक्षिण में फैजाबाद जिले में प्रवेश करती है और यहीं से यह पूरब में मुड़कर मिझौरा परगना से गुजरते हुए मड़हा नदी में मिल जाती है । इन दोनों के मिलने से टोंस नदी बनी है जो अकबरपुर, जलालपुर और नकपुर कस्बों से होकर गुजरती हुई अन्त में सुरहुरपुर परगने के बिल्कुल दक्षिणी पूर्वी छोर पर रामगढ़ गाँव के पास फैजाबाद जिले से अलग हो जाती है । गर्मी में ये नदियाँ करीब करीब सूख जाती हैं, परन्तु बरसात में बहुत बढ़ जाती हैं । विसुही नदी को रामायण में वेदश्रुति नाम दिया गया है । कभी-कभी विसुही नदी को कोशल की दक्षिणी सीमा-रेखा माना जाता है ।

<u>मझुई</u> :

यह टोंस नदी की प्रमुख सहायक नदी है जो इलाहाबाद-फैजाबाद सड़क के पश्चिम में कितावन के पास एक झील से निकलती है । कुछ स्थानों पर यह जिले

की दक्षिणी सीमा निर्धारित करती है । यह पश्चिम रथ, मिझौरा, अकबरपुर और सुरहुरपुर परगने से होकर गुजरती है । यहाँ से कुछ दूर तक जिले को छोड़ देती है और आगे पूर्व में पुन: प्रवेश करती है और अन्त में जिले से अलग होने के बाद यह टोंस नदी में मिल जाती है ।

गोमती :

महत्त्व की दृष्टि से इस नदी का घाघरा नदी के बाद दूसरा स्थान है । यह जिले के दक्षिण पश्चिम छोर पर 12 किलोमीटर तक बहती है ।

## झील और तालाब

कुछ नदियाँ विशेषरूप से टोंस और टोनरी भारी वर्षा वाले वर्षों में बहने वाले जल को समाहित करने के लिए पर्याप्त चौड़े और गहरे नहीं हैं । अत्यधिक जल की मात्रा अत्यन्त गहन क्षेत्रों को अपने चपेट में ले लेती है जिसके परिणामस्वरूप बड़ी झीलें जल से परिपूर्ण हो जाती हैं । कुछ प्रमुख झीलें निम्नवत् हैं :-

1. देवहट झील :

यह टाण्डा परगने में है । इस झील से तोड़ी नदी निकलती है ।

2. मऊझील :

यह एक बड़ी झील है जहाँ शिकारी पक्षियों का शिकार करने आते हैं । इसी के किनारे गालिबजंग का बनवाया एक शिव मन्दिर है ।

3. <u>गड़हा झील</u> :

यह बिड़हर परगना में स्थित एक बड़ी झील है इससे पिकिया नदी निकलती है ।

4. <u>हंसवर झील</u> :

यह परगना बिड़हर की प्रसिद्ध झील है । यहाँ शिकारी लोग शिकार खेलने के लिए आया करते हैं ।

5. <u>डोमन झील</u> :

यह परगना हवेली अवध में है । इस झील से चूना निकाला जाता है ।

<u>खनिज</u> :

इस जनपद में रेह और कंकड़ के अतिरिक्त कोई महत्त्वपूर्ण खनिज नहीं प्राप्त होता है अतः उद्योग-धन्धे अधिकांशतः कुटीर-उद्योगों के रूप में ही मिलते हैं ।

<u>बनस्पतियाँ</u> :

इस जनपद में विभिन्न प्रकार की मिट्टी होने तथा पानी की अधिकता के कारण सिन्ध गंगा के मैदान विशेषकर पूर्वी उत्तर प्रदेश में पायी जाने वाले सभी प्रकार के वृक्ष और बनस्पतियाँ पायी जाती हैं । वृक्षों में सबसे अधिक आम के बगीचे मिलते हैं जो फल और लकड़ी दोनों ही दृष्टियों से लोगों को बहुत प्रिय हैं । फलों में आम एक अत्यधिक स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्धक फल माना जाता है । फैजाबाद गजेटियर में लिखा गया है कि गर्मी में बहुत से लोग इसी पर निर्भर रहते

हैं ।[1] आम की तरह जामुन के बगीचे भी लगाये जाते हैं । जामुन के वृक्ष अधिकांशतः सड़कों के किनारे मिलते हैं । इसी तरह बगीचों में कटहल के वृक्ष भी पाये जाते हैं । इसका वृक्ष छायादार होता है और फल बड़े आकार का होता है । आँवला, बेल तथा महुआ के वृक्ष भी बगीचों में पाये जाते हैं । वर्तमान में बागों के किनारे तथा खेतों के मेड़ पर बहुत से यूकिलिप्टस के वृक्ष भी लगा दिये गये हैं । सीसों, सीसम आदि ईमारती लकड़ी के वृक्ष भी सड़कों के किनारे तथा कहीं-कहीं बागों में पाये जाते हैं । बेर, अमरूद के बगीचे भी कहीं-कहीं पाये जाते हैं । नीम, बबूल, कैथा, चिलबिल, लसोढ़ा पूरे जिले भर में पाये जाते हैं । ढाक के जंगल भी इस जनपद में पाये जाते हैं । बांस भी प्रायः गाँवों के पास देखने को मिलता है । बड़े परिवार के वृक्षों में बरगद, गूलर, पाकड़ और पीपल अधिक मिलते हैं । अशोक और सलमली के वृक्ष भी कहीं-कहीं पाये जाते हैं ।

इस जनपद का महत्त्व गुलाब के पौधों के लिए भी है । शुजाउद्दौला के मजार के पास के बगीचे इसके लिए प्रसिद्ध रहे हैं । इसी कारण इस स्थान को गुलाब बाड़ी के नाम से भी जाना जाता है किन्तु यह अब गुलाब की दृष्टि से अपना महत्व खो चुका है लेकिन गुप्तार पार्क में गुलाब की संस्कृति अभी भी जीवित है । यहाँ से सुदूरवर्ती क्षेत्रों को गुलाब के पौधे भेजे जाते हैं । सड़कों के किनारे बेकार भूमि और परती भूमि में बड़ी दूधी, छोटी दूधी, पुनर्नवा, पोरपरम, सफेद मांगड़ा, कटीली चौराई, भरभंडा आदि जंगली पौधे पाये जाते हैं । यहाँ की झीलों में विभिन्न

---

1. जोशी, ई०वी०, 1960, पूर्वोद्धृत

प्रकार के दलदल और पानी में पाये जाने वाली बनस्पतियाँ मिलती हैं जिनमें पंचदूब, जलकुम्भी आदि पानी के अन्दर मिलती हैं। झीलों के किनारे कई तरह की घासें मिलती हैं।

दो महत्त्वपूर्ण नदियों घाघरा और गोमती के बावजूद जनपद में बड़े जंगल बहुत कम हैं। छोटी झाड़ियों वाले जंगल ऊसरीली जमीन के आसपास पाये जाते हैं जिनमें ढाक के पेड़ बहुतायत में मिलते हैं जिन्हें काटकर ईंधन के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। जाड़े के दिनों में लोग इसकी डालों और पत्तियों को काट देते हैं। अधिक जंगली भाग पश्चिमरथ परगना में मिलता है। फैजाबाद-रायबरेली सड़क के दक्षिण में ढाक के घने जंगल हैं। खण्डासा के पास भी ढाक के जंगल हैं। अकबर से सम्मनपुर के बीच टोंस नदी के किनारे बबूल के जंगल मिलते हैं।

<u>जीव-जन्तु</u> :

सिन्धु गंगा के मैदान में पाये जाने वाले पक्षी, सरीसृप और मछलियाँ इस जनपद में पाये जाते हैं। गाय, बैल, घोड़े, बकरी, भैंस, गधे आदि पालतू पशु कृषि से सम्बन्धित हैं। जंगली पशुओं की संख्या और उनकी प्रजातियाँ इस जनपद में अधिक नहीं हैं। बड़े मांसाहारी पशु जैसे चीता, पैन्थर, लियोपार्ड लगभग नहीं मिलते हैं लेकिन छोटे मांसाहारी पशु जैसे भेड़िया, गीदड़, लोमड़ी, लकड़बग्घा आदि जंगलों और नदी नालों के किनारे पाये जाते हैं। फैजाबाद गजेटियर में लिखा गया है कि घास खाने वाले पशुओं में हिरन, बारहसिंघा और नील गाय झुण्ड में मिलते हैं किन्तु अब केवल नील गाय के ही झुण्ड दिखायी पड़ते हैं।[1] मृग

---

1. जोशी, ई0वी0, 1960, पूर्वोद्धृत

अब समाप्त हो गये हैं। जंगली सूअर नदियों के किनारे और तराई क्षेत्रों में मिलते हैं जो ईख के खेतों को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। लाल मुँह वाले बन्दर आबादी के पास पाये जाते हैं जो प्रायः आम के बागों में रहते हैं। खरगोश और चूहे भी यहाँ बहुत मिलते हैं और ये खेती को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं।

समीपवर्ती क्षेत्रों में पाये जाने वाले पक्षी भी यहाँ मिलते हैं जिनमें कौआ, कोयल और गौरैया सबसे अधिक हैं। बुलबुल, मोर, पपीहा, तोता, बाज, लाल-मुनियाँ, मैना, बटेर, महोख, नीलकण्ठ, धनेष, हारिल, कबूतर, चकोर पानी में रहने वाले पक्षी जैसे लालसर, बनमुर्गी, बगुला, सारस, सुरखाब, सिकमार आदि झीलों में मिलते हैं।

विभिन्न प्रकार के जहरीले और गैर-जहरीले साँप जैसे कोबरा, दुमुही, फेटार, दोढा, चीतर, घोर-कटायत, गेहुआ आदि मिलते हैं। दूसरे जन्तुओं में गिरगिट, गोह, छिपकली, बिच्छू, कनखजूरा, नेवला भी पाये जाते हैं।

सदानीरा नदियों और झीलों, तालाबों में कई प्रकार की मछलियाँ जैसे रोहू, मोथ, सिंधी, नैना, मांगुर, हेगर, गोंच, वाम, सौर, करौंच, पटरा, कटरइया और घुरसन आदि पाये जाते हैं। बरसात के दिनों में घाघरा नदी में झींगरा मछली भी मिलती है। मछली खाद्य-सामग्री का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है और बहुत से लोग मछली बेचने और पकड़ने के कार्य में संलग्न रहते हैं। घाघरा नदी में कछुए, घरियाल, सूंस, मगरमच्छ मिलते हैं जिनका लोग चमड़े के लिए शिकार करते हैं। इनके चमड़े से अटैची और जूते बनाये जाते हैं। अयोध्या में

जहाँ तीर्थयात्री खाने को उन्हें देते हैं वहाँ बड़े-बड़े कछुए आते हैं ।

मूल आदिम जातियाँ :

फैजाबाद जनपद में वर्तमानकाल में मूल आदिम जातियों के अवशेष कम मिलते हैं । क्रुक ने गंगा के मैदान के आदिम जातियों का सर्वप्रथम विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया था ।[1] 1891 और 1971 की जनगणना रिपोर्टों के अनुसार फैजाबाद जनपद की आखेटक आदिम जातियों में बहेलिया, बंगाली, कंजड़, बधिक, भाटू और बेड़िया जातियाँ अभी भी पायी जाती हैं जिनमें कुछ सीमा तक आखेटक और संग्रहक प्रवृत्ति बची हुई है ।[2] इन वन्य जातियों में से कंजड़ों (उनके आवासीय प्रकार, शारीरिक प्रारूप, पहनावा, आभूषण, सामाजिक संगठन, खाद्य-सामग्री, शिकार में प्रयुक्त उपकरण (समाधान प्रणाली आदि) के बारे में डॉ० मालती नागर और डॉ० वी०एन० मिश्र ने विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है जिनकी जनसंख्या 1891 और 1971 की जनगणना रिपोर्टों के अनुसार क्रमशः 200 और 500 थी ।[3]

------------------

1. क्रुक, डब्ल्यू०, 1896, दि ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स आफ दि नार्थ-वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध, वाल्यूम 1-4.

2. नागर मालती और वी०एन० मिश्र 1989, हण्टर गैदरर्स इन ऐन अग्रेरियन सेटिंग: दि नाइनटीन सेंचुरी सिचुएशन इन दि गंगा प्लेन्स, मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट, वाल्यूम 13, पृष्ठ 66-78, चित्र संख्या 1 और 2.

3. नागर मालती और वी०एन० मिश्र, 1990, दि कन्जर्स - ए हण्टिंग गैदरिंग कम्युनिटी आफ दि गंगा वैली, उ0प्र0, मैन एण्ड इनवाइनरनमेण्ट, वाल्यूम 15 नं0 2, पृष्ठ 71-88, चित्र संख्या 1 और 2.

## अध्याय द्वितीय

## प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक पृष्ठभूमि

## प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक पृष्ठभूमि

यद्यपि गंगा के मैदान ने भारत के प्रारम्भिक इतिहास और संस्कृति के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है लेकिन यहाँ पहाड़ न होने के कारण पाषाणयुगीन संस्कृतियों के अस्तित्व की संभावना नहीं थी । गंगा के मैदान के मध्यवर्ती भाग में हुए पुरातात्विक अनुसंधानों ने इस असंभावना को झुठला दिया है और अब यहाँ का इतिहास परवर्ती प्रातिनूतनकालीन पाषाण संस्कृति से प्रारम्भ होता है ।

ग्रीष्म ऋतु में इस क्षेत्र में प्रचण्ड गर्मी तथा शीत ऋतु में अत्यधिक ठण्डक पड़ती है । वार्षिक वर्षा 100 सेंमी० से भी अधिक होती है । गंगा की सहायक नदियों में घाघरा तथा उसकी सहायक कुआनो, राप्ती, छोटी गंडक, गंडक, बूढ़ी गंडक, कोशी, वरुणा, गोमती तथा उसकी सहायक सई तथा सोन नदियाँ उल्लेखनीय हैं । इस क्षेत्र में बहुत सी धनुषाकार झीलें भी हैं जिनसे छोटी-छोटी नदियाँ निकलती हैं । गंगा तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा ही गंगा के मैदान का निर्माण हुआ है ।

प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा इस क्षेत्र में किये गए पुरातात्विक अन्वेषणों से मध्य गंगा घाटी के प्रागैतिहासिक और प्रारम्भिक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को नया आयाम मिला है और गंगा के मैदान का इतिहास प्रागैतिहासिक काल से ही विश्व इतिहास का एक अंग बन गया है ।

मूलतः सम्पूर्ण फैजाबाद जनपद मध्य गंगा के मैदान के अन्तर्गत आता है ।

यद्यपि कुछ विद्वानों के अनुसार फैजाबाद जनपद की फैजाबाद, टाण्डा, अकबरपुर और जलालपुर तहसीलें ही मध्य गंगा के मैदान के अन्तर्गत हैं, और बीकापुर तहसील ऊपरी गंगा के मैदान के अन्तर्गत है ।[1] प्राचीन कोशल महाजनपद अयोध्या जिसकी राजधानी मानी जाती है वस्तुत: मध्य गंगा घाटी के ही अन्तर्गत है - (मानचित्र संख्या 2) इसलिए फैजाबाद जनपद के पुरातात्विक महत्ता को स्पष्टत: समझने के लिए मध्य गंगा के मैदान के प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक पृष्ठभूमि को समझना आवश्यक है ।

मध्य गंगा घाटी के दक्षिण विन्ध्य क्षेत्र में आदि मानव के प्राचीनतम प्रमाण 4-5 लाख वर्ष पहले से मिलने लगते हैं । उस क्षेत्र की नदी उपत्यकाओं के अनुभागों से पाषाणकालीन संस्कृतियों के क्रमिक विकास के उल्लेखनीय प्रमाण मिले हैं ।[2] तत्कालीन पशुओं के अश्मीभूत अवशेष और मानव-निर्मित पाषाण उपकरण नदी अनुभागों और वेदिकाओं से प्राप्त होते हैं । विन्ध्य पर स्थित उद्योग-स्थलों से मिलने वाले उपकरणों तथा उपकरण निर्माण प्रक्रिया में निकले फलकों आदि से भी तत्कालीन मानव की कहानी के पुनर्निर्माण में सहायता मिली है । उच्च पूर्व पाषाणकाल में विन्ध्य क्षेत्र की जलवायु में परिवर्तन होने लगा था इसके प्रमाण यहाँ

---

1. सिंह, आर०एल० (सं०), 1971, इण्डिया : ए रीजनल जागर्फी, पृष्ठ 184.

2. शर्मा, जी०आर०, 1973, स्टोन एज इन दि विन्ध्याज एण्ड दि गंगा वैली, रेडियो-कार्बन डेट्स एण्ड इण्डियन आर्क्यालाजी, सं० डी० पी० अग्रवाल और ए० घोष, पृष्ठ 106-108.
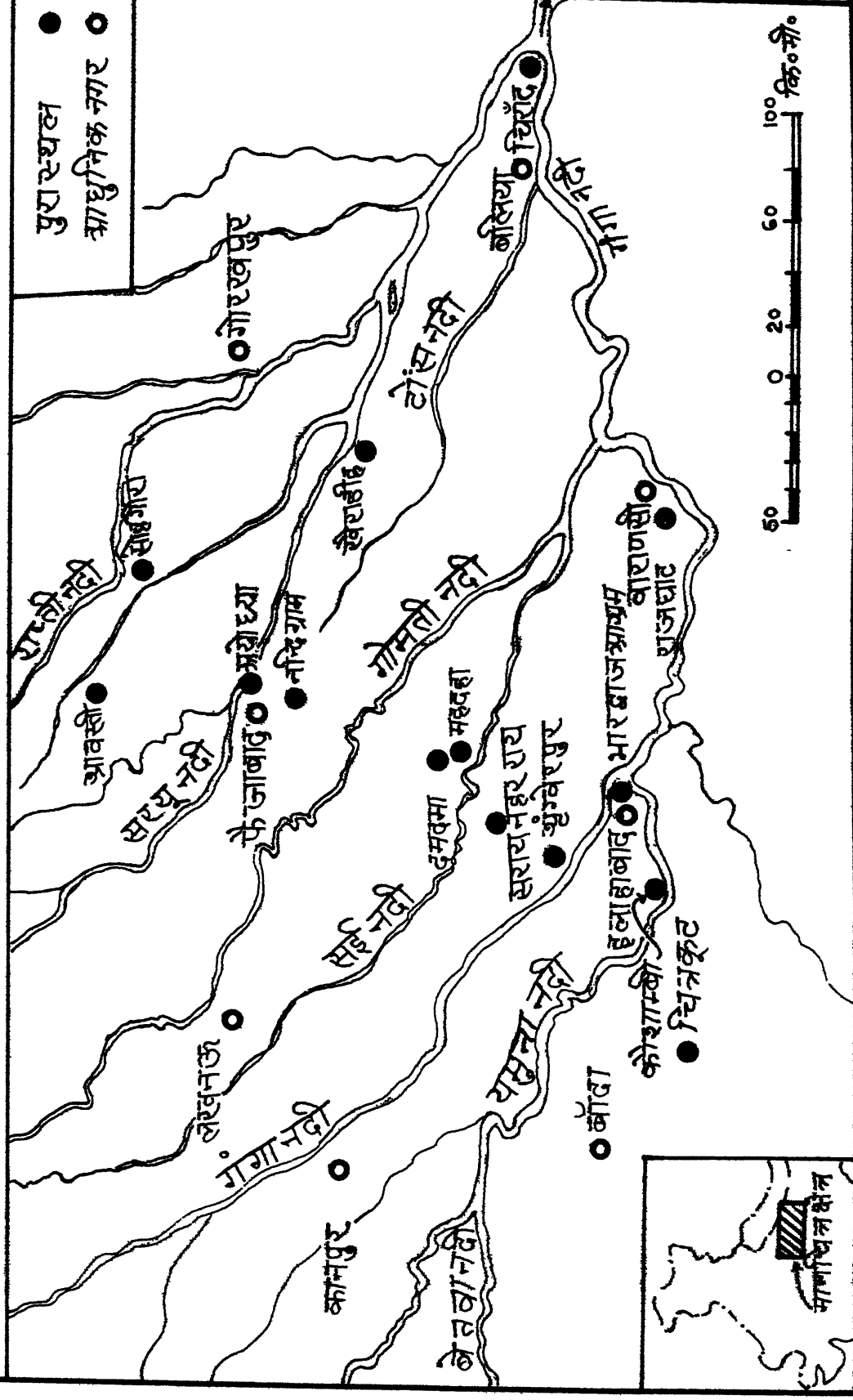
मानचित्र 2 : मध्य गंगा घाटी (कोशल महाजनपद) के महत्त्वपूर्ण पुरास्थल

के नदी अनुभागों से प्राप्त हुए हैं । बदले हुए परिवेश के कारण ही संभवत: उपकरण निर्माण तकनीक में परिवर्तन करके नवीन प्रकार के उपकरणों का निर्माण किया गया ।

जलवायु में इस क्रांतिकारी परिवर्तन का प्रभाव गंगा घाटी पर भी पड़ा और गंगा उत्तर से खिसककर दक्षिण में अपनी वर्तमान स्थिति में चली आयी । अपने मार्ग परिवर्तन के कारण उत्तर में गंगा नदी ने बहुत सी धनुषाकार झीलों का निर्माण कर दिया । गंगा के प्राचीन प्रवाह मार्ग में निर्मित, अधिकांश धनुषाकार झीलें अभी भी अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं । कुछ झीलें प्राकृतिक कारणों से भर गयी हैं और कुछ को यहाँ के निवासियों ने खेतों में परिवर्तित कर लिया है । प्रतापगढ़ के रसूलपुर, इलाहाबाद के रामगढ़, जौनपुर के गुजर ताल वाराणसी के रायल ताल आजमगढ़ के असकर ताल तथा गाजीपुर की सिहोरी झील उन धनुषाकार झीलों में हैं जिनका अस्तित्व अभी भी बना हुआ है । ये झीलें 20.48 से 1.92 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में विस्तृत हैं ।[1] मध्य गंगा घाटी के वर्तमान धरातल के निर्माण में इन झीलों का अत्यधिक योगदान है क्योंकि इस क्षेत्र की अधिकांश नदियाँ इन्हीं झीलों से निकलती हैं । इन झीलों के किनारे का पुराना धरातल उसरीला होने के कारण खेती के लिये अधिक उपयुक्त नहीं है, यही कारण है कि झीलों के तट पर स्थित पुरातात्विक स्थल सुरक्षित रह सके ।

-----------------

1. शर्मा, जी0आर0, 1973, मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन द गंगा वैली, प्रोसीडिंग्स आफ द प्री-हिस्टारिक सोसायटी, वाल्यूम 39, पृष्ठ 129-30.

उच्च पूर्व पाषाणकाल के बाद जलवायुगत परिवर्तन के कारण तत्कालीन पशुजगत और वनस्पतिजगत में भी परिवर्तन हुये । इस बदलते परिवेश में मानव को भी नये प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता हुई अत: उसने नन्हें नन्हें उपकरणों का निर्माण प्रारम्भ किया । इन उपकरणों को हम लघु-पाषाण उपकरणों के नाम से जानते हैं । इनमें से कुछ उपकरण तो वाणाग्रों के रूप में प्रयुक्त किये जाते थे और कुछ को संयोजित उपकरण के रूप में प्रयुक्त करते थे । उच्च पूर्व पाषाणकाल के अन्त होते होते जबकि विन्ध्य क्षेत्र में सूखी जलवायु के प्रमाण मिलते हैं और गंगा के दक्षिण की तरफ खिसकने के प्रमाण मिलते हैं, तभी सर्वप्रथम गंगा के मैदान में पाषाणकालीन मानव के आगमन के प्रमाण भी मिलने लगते हैं ।

गंगा घाटी में कई स्थलों पर गंगा के पुराने कछार के अनुभागों में चार जमाव मिलते हैं ।[1] सबसे नीचे का जमाव कंकरीली पीली मिट्टी का है । इसके ऊपर काली मिट्टी का जमाव है । तीसरा जमाव पीली मिट्टी का है और सबसे ऊपर बलुई मिट्टी का लगभग 2 मीटर मोटा जमाव है । गंगा घाटी के इस ऊपरी जमाव में ऊपर से नीचे तक लघु पाषाण उपकरण प्राप्त होते हैं । इस आधार पर हम कह सकते हैं कि इन उपकरणों का निर्माता मध्यपाषाणकालीन मानव इस क्षेत्र में उस समय आया जब इस ऊपरी बलुई मिट्टी का जमाव प्रारम्भ हुआ था और उसका कार्यकाल इस जमाव के अन्त तक चलता रहा । नवीन शोधों के आलोक में मध्य

---

1. शर्मा, जी0आर0, 1975, सीजनल माइग्रेशन्स एण्ड मेसोलिथिक लेक कल्चर्स आफ द गंगा वैली, <u>के0सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम</u>, पृष्ठ 5-6.

पाषाण काल के भी पहले के सांस्कृतिक अवशेष गंगा के मैदान में प्राप्त हुये हैं । इन उपकरणों को उच्च पूर्व पाषाण काल तथा मध्य पाषाण काल के संक्रमण काल का माना गया है । ये उपकरण जिस धरातल पर प्राप्त होते हैं उसके अवलोकन से यह कहा जा सकता है कि इनका भू-तात्विक धरातल, गंगा के कछार का तीसरा जमाव - पोतनी मिट्टी का ऊपरी धरातल है । इसी धरातल पर सर्वप्रथम पाषाण कालीन मानव मध्य गंगा घाटी में आया ।

मध्य गंगा घाटी में हाल में हुये पुरातात्विक अन्वेषणों के आलोक में सम्पूर्ण प्रागैतिहासिक संस्कृति की जो रूप-रेखा निर्मित हुई है उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :-

1. <u>उच्च पूर्व पाषाण काल और मध्य पाषाण काल के संक्रमण काल की संस्कृति</u> :

गंगा घाटी की इस प्राचीनतम संस्कृति[1] के प्रमाण अभी तक पाँच स्थलों से प्राप्त हुये हैं - वाराणसी में गढ़वा (अक्षांश 25°23'45"उ0, देशान्तर 82°53'45"पूर्व), इलाहाबाद में अहिरी (अक्षांश 25°21' 0"उ0, देशान्तर 82°16'0"पूर्व) और प्रतापगढ़ में सुलेमानपर्वत (अक्षांश 25°59'23"उ0, देशान्तर 82°16'12"पूर्व), मन्दाह (अक्षांश 25°59'0"उ0, देशान्तर 82°2'35" पूर्व) तथा साल्हीपुर (अक्षांश

-----------------

1. शर्मा, जी0आर0, 1975, सीजनल माइग्रेशन्स एण्ड मेसोलिथिक लेक कल्चर्स आफ द गंगा वैली, <u>के0सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम</u>, पृष्ठ 9.

$26^0 0' 10''$ उ0, देशान्तर $82^0 4' 30''$ पूर्व। । ये स्थल[1] धनुषाकार झीलों अथवा इन झीलों से निकलने वाली सरिताओं के तट पर स्थित हैं ।

उच्च पूर्व पाषाण तथा मध्य पाषाण काल के संक्रमण कालीन सांस्कृतिक स्थलों से अत्यधिक मात्रा में पाषाण उपकरण प्राप्त हुये हैं । इन स्थलों पर पूर्ण निर्मित उपकरणों के साथ ही निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में उपकरण, क्रोड, फलक आदि प्राप्त होते हैं जिससे प्रतीत होता है कि इन उपकरणों का निर्माण इन्हीं स्थलों पर किया गया है । गंगा घाटी में पाषाणों का स्रोत नहीं है । विन्ध्य क्षेत्र से पाषाण कालीन मानव पत्थर के पिण्ड लेकर गंगा घाटी में आता था, यहीं पर उपकरणों का निर्माण करता और शिकार करता था । जलवायु और परिवेश में परिवर्तन तथा तत्कालीन आबादी में वृद्धि इस आगमन का कारण रहा होगा । अभी तक इस संस्कृति के किसी स्थल का उत्खनन नहीं हुआ है । लेकिन इन स्थलों की सतह से जो उपकरण एकत्र किये गये हैं वे सभी चर्ट पत्थर पर निर्मित हैं और उन पर अत्यधिक रासायनिक काई लगी हुई है । उपकरण प्रकारों में समानान्तर बाहु वाले ब्लेड, भुथरे ब्लेड, तक्षणी, नोक, खुरचनी, अर्द्धचन्द्र आदि उल्लेखनीय हैं ।

------------------

1. शर्मा, जी0आर0, 1978, प्रागैतिहासिक मानव की कहानी : गंगा घाटी की प्राचीन संस्कृति पर नया प्रकाश, दिनमान, भाग 14, अंक 34, 20-26 अगस्त, 1978, पृष्ठ 24.

बिन्ध्य क्षेत्र में बेलन नदी के तट पर स्थित एक स्थल चोपनी माण्डो[1] का उत्खनन किया गया है। इस स्थल की प्रथम संस्कृति उच्च पूर्व पाषाण और मध्य पाषाण काल के संक्रमण काल की संस्कृति है। पाषाण कालीन मानव ने सर्व-प्रथम इसी काल में गोलाकार झोपड़ियाँ बनाकर आवास प्रारम्भ किया। गंगा घाटी की इस प्राचीनतम संस्कृति ने पाषाणकालीन मानव के ऋतुनिष्ठ प्रव्रजन का भारत में प्राचीनतम प्रमाण प्रस्तुत किया है जबकि बिन्ध्य क्षेत्र की सूखे की विभीषिका से बचने के लिए मनुष्य जीविका की तलाश में नदी घाटियों को पार करता हुआ उत्तर की तरफ आया। संभवत: उसका इस क्षेत्र में आगमन नितान्त अल्प-कालिक होता था। अनुकूल मौसम में वह पुन: अपने मूल क्षेत्र में लौट जाता था। इस काल के उपकरणों का जो अध्ययन किया गया है उससे इस बात के प्रमाण मिले हैं कि इस संस्कृति के गंगा घाटी के उपकरण बिन्ध्य क्षेत्र के उपकरणों की अपेक्षा छोटे हैं। उपकरणों की यह आकार गत न्यूनता गंगा घाटी में पत्थर पिण्डों की अनुपलब्धता के कारण थी, मानव ने इनकी महत्ता को ध्यान में रखकर तब तक उपकरण निर्माण किया जब तक ये अत्यन्त छोटे नहीं हो गये।

बिन्ध्य क्षेत्र में उच्च पूर्व पाषाण काल के उपकरण सीमेण्टेड ग्रैवेल तृतीय से मिलते हैं। इस जमाव से दो कार्बन तिथियाँ 23840 $^{+830}_{-760}$ ई०पू० और 17765 ± 340 ई०पू०[2] प्राप्त हुई हैं। इस आधार पर बिन्ध्य क्षेत्र की उच्च पूर्व पाषाण

-----------------

1. शर्मा, जी०आर० और अन्य, 1980, फ्राम हंटिंग, गैदरिंग टू फूड प्रोडक्सन एण्ड डोमेस्टीकेशन आफ एनीमल्स ; इक्सकैवेशन्स एट चोपनी माण्डो, महदहा एण्ड महगड़ा।

2. जुलाई 1973, फिजिकल रिसर्च लैबोरेटरी, अहमदाबाद।

तथा मध्य पाषाण काल के संक्रमण कालीन संस्कृति को 17000 ई0पू0 के बाद का माना गया है । गंगा घाटी की इस संस्कृति को भी यही समय प्रदान किया जा सकता है ।

2. <u>मध्य पाषाणिक संस्कृति</u> :

सांस्कृतिक अनुक्रम में उपरोक्त संस्कृति के बाद जिस पाषाण कालीन संस्कृति के प्रमाण मिले हैं उसे मध्य पाषाणिक संस्कृति के नाम से जाना जाता है । इस काल के जीव और बनस्पति जगत के अध्ययन से यह तथ्य उद्घाटित हुआ है कि अब घास के मैदानों की अधिकता हो गयी थी । मनुष्य को शिकार करने के लिये और खाने योग्य जंगली घासों को काटने के लिये नये प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता हुई । ये उपकरण आकार में अत्यन्त छोटे हैं अत: इन्हें लघु पाषाण उपकरण कहा जाता है । इसके पूर्व की संस्कृति के उपकरण प्राय: चर्ट पत्थर पर, अब अगेट, कार्नेलियन, क्वार्ट्ज आदि पत्थरों का प्रयोग उपकरण निर्माण में होने लगा । यद्यपि इन उपकरणों के निर्माण की तकनीक वही है जो उच्च पूर्व पाषाण तथा मध्य पाषाण काल के संक्रमण काल की है लेकिन उपकरण प्रकारों में अब अधिक विविधता दृष्टिगोचर होती है ।

इस संस्कृति के उपकरण सबसे अधिक क्षेत्र में सबसे अधिक स्थलों से प्राप्त हुये हैं । गंगा के उत्तर वाराणसी, इलाहाबाद, सुलतानपुर, जौनपुर और प्रतापगढ़ से इस संस्कृति के लगभग 193 स्थल प्रकाश में आये हैं ।[1] इस संस्कृति के विकास की

---

1. ये सब पुरातात्विक स्थल प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रो0 जी0आर0 शर्मा के निर्देशन में किये गये गहन सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप प्रकाश में आये हैं ।

एक अवस्था में कुछ नये उपकरणों का आविष्कार हो जाता है । ये उपकरण त्रिभुज और समलम्ब चतुर्भुज के आकार के हैं । अपने ज्यामितीय आकार के ही कारण मध्य पाषाणिक संस्कृति के इस चरण के उपकरणों को ज्यामितीय लघु पाषाण उपकरण कहते हैं । इस प्रकार मध्य पाषाणिक संस्कृति दो चरणों में विभक्त हो गयी है - 1. ज्यामितिक लघु पाषाण उपकरण एवं 2. अज्यामितिक ।

गंगा घाटी में सबसे अधिक - लगभग 172 स्थल अज्यामितिक लघुपाषाण उपकरणों वाले हैं । इस चरण के प्रमुख स्थलों में इलाहाबाद के कुढ़ा ‖अक्षांश 25$^{0}$ 35'4" उ0, देशान्तर 81$^{0}$43'17" पूर्व‖, भीखमपुर ‖अक्षांश 25$^{0}$31'58" उ0, देशान्तर 81$^{0}$44' 41"पूर्व‖ और महरूडीह ‖अक्षांश 25$^{0}$31'58"उ0, देशान्तर 81$^{0}$ 49'3" पूर्व‖, प्रतापगढ़ के हड़हीभिटुली ‖अक्षांश 25$^{0}$50'38" उत्तर, देशान्तर 81$^{0}$ 48'25 पूर्व‖, कन्हई मधुपुर ‖अक्षांश 25$^{0}$59'50" उत्तर, देशान्तर 82$^{0}$4'0" पूर्व‖ आदि स्थलों का उल्लेख किया जा सकता है ।

द्वितीय चरण के अभी तक लगभग 21 स्थल प्रकाश में आये हैं । उल्लेखनीय स्थल हैं इलाहाबाद के बिछिया ‖अक्षांश 25$^{0}$34'13" उत्तर, देशान्तर 81$^{0}$43'25"‖ प्रतापगढ़ के भेवनी ‖अक्षांश 25$^{0}$59'50" उत्तर, देशान्तर 82$^{0}$9'20" पूर्व‖, धर्मपुर ‖अक्षांश 26$^{0}$ 1'0" उत्तर, देशान्तर 82$^{0}$5'10" पूर्व‖, उतरास ‖अक्षांश 25$^{0}$58'30" उत्तर, देशान्तर 82$^{0}$8'30" पूर्व‖ । ज्यामितिक लघु पाषाण उपकरणों वाले तीन स्थलों का उत्खनन भी किया गया है जिससे इस संस्कृति के विविध पक्षों पर प्रकाश पड़ा है । ये उत्खनित स्थल हैं प्रतापगढ़ में स्थित सराय नाहर राय, महदहा और

दमदमा ।

<u>सरायनाहर राय</u> : ॥अक्षांश $25^{0}48'$ उत्तर, देशान्तर $81^{0}50'$ पूर्व॥ प्र...पगढ़ से 15 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम, एक धनुषाकार झील के किनारे स्थित है । यह झील अब सूख चुकी है । सराय नाहर राय में किये गये उत्खनन[10] से कब्रों में दफनाये हुए नरकंकाल, गर्त चूल्हे, लघु पाषाण उपकरण आदि प्राप्त हुये हैं । लोग समूह में रहते थे इसके परिणामस्वरूप सामूहिक रूप में प्रयुक्त होने वाले गर्त चूल्हे और फर्श प्रकाश में आये हैं । इस फर्श के चारों ओर चार गोलाकार गड्ढे मिले हैं जिनमें लट्ठा गाड़कर छत बनायी गयी थी । फर्श पर जली मिट्टी के टुकड़े, जानवरों की जली, अधजली हड्डियाँ, घोंघे और लघु पाषाण उपकरण प्राप्त हुये हैं । गर्त चूल्हे गोले अथवा अण्डाकार हैं । इनमें जानवरों का मांस भूना जाता था । चूल्हों की राख में कोयले नहीं प्राप्त होते इससे लगता है कि मांस को घास फूस से ही भूना जाता था । एक चूल्हे को दो बार खोदकर प्रयोग करने के प्रमाण मिले हैं । इस स्थल पर मध्य पाषाणिक मानव कम से कम दो बार रहने के लिये आया था । यहाँ से उपलब्ध हड्डियों के अध्ययन से जिन जानवरों का प्रमाण मिला है उनमें गाय, बैल, भैंसा, हाथी, हिरण, बारहसिंघा तथा भेड़-बकरियों का उल्लेख किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि ये सभी पशु जंगली थे । कछुआ, घोंघे, मछली तथा चिड़ियों के अस्थि अवशेष भी मिले हैं जिन्हें मध्य पाषाणिक मानव खाया करता था । मध्य पाषाण काल के जानवर आज के पशुओं की तुलना में काफी बड़े थे ।

---

1. शर्मा, जी०आर०, 1973, मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन द गंगा वैली, <u>प्रोसीडिंग्स आफ द प्री-हिस्टारिक सोसायटी</u>, वाल्यूम 39, पृष्ठ 134-46.

सराय नाहर राय के उत्खनन से मध्य पाषाणिक लोगों की शवाधान प्रणाली पर विस्तृत प्रकाश पड़ा है । शवों को अण्डाकार छिछली कब्रों में दफनाया जाता था । कब्र में मृतक को रखने के पहले मुलायम भुरभुरी मिट्टी बिछाई जाती थी और उन्हें सांगोपांग लिटाकर रखा जाता था । इनका सिर पूर्व की तरफ तथा पैर पश्चिम की तरफ रखा जाता था । एक हाथ शरीर के समानान्तर और दूसरा पेट पर रखकर दफनाने की परम्परा थी । मृत्योपरान्त किसी दूसरे जीवन के बारे में भी लोग आस्था रखते थे । इसीलिये कब्रों में लघु पाषाण उपकरण, जानवरों की हड्डियाँ तथा घोंघे आदि मृतकों को भेंट के रूप में रखे हुए प्राप्त होते हैं । कब्रों को ढकते समय चूल्हों की राख भी प्रयुक्त होती थी । एक कब्र में चार मुर्दे एक ही साथ दफनाये हुये मिले हैं जिसमें पहले एक पुरुष तथा नारी और उसके ऊपर पुन: एक पुरुष और नारी के कंकाल रखे हुये मिले हैं । उल्लेखनीय है कि मध्य पाषाण काल की इस कब्र में नारियाँ पुरुषों के बायें रखी गयी हैं ।

इस स्थल से बहुत से लघु पाषाण उपकरण निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में प्राप्त हुये हैं । उपकरण निर्माण के लिये चैल्सिडनी, अगेट, जैस्पर और कार्नेलियन पत्थरों का प्रयोग किया गया है । यहाँ से जो उपकरण प्राप्त हुये हैं उनमें कई तरह के नोक, समानान्तर बाहु वाले और भूथड़े ब्लेड, फलक, अर्द्धचन्द्र, विषम बाहु और समद्विबाहु त्रिभुज, खुर्चनी तथा तक्षणी का उल्लेख किया जा सकता है ।

जानवरों की हड्डियों पर बने हुये उपकरण यहाँ अधिक नहीं प्राप्त हुये हैं लेकिन कुछ पशुओं के सींगों से जमीन को खोदने का काम लिया जाता था इसीलिये

उनकी नोक अत्यन्त चिकनी हो गयी है । 13.2 सेंमी० लम्बे तथा 3 सेंमी० चौड़े हड्डी के बने हुए एक ब्लेड का उल्लेख किया जा सकता है जिस पर फलक निकालकर तेज धार बनायी गयी है ।

महदहा (अक्षांश $25^{0}58'2"$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}11'30"$ पूर्व) गंगा घाटी का दूसरा मध्य पाषाणिक स्थल जिसका उत्खनन किया गया है, महदहा है ।[1] यह स्थल प्रतापगढ़ जिले की पट्टी तहसील में प्रतापगढ़ से पूर्वोत्तर 31 किलोमीटर और पट्टी से उत्तर 5 किलोमीटर की दूरी पर वर्तमान महदहा गाँव के पूर्व दिशा में स्थित है ।

1953 में शारदा सहायक नहर परियोजना की जौनपुर शाखा से इस स्थल का काफी भाग नष्ट हो गया था । 1978 में इस नहर को चौड़ा करने की प्रक्रिया में महदहा पुरातत्व जगत में प्रकाश में आया । उसी वर्ष यहाँ पर प्राचीन इतिहास, संस्कृति और पुरातत्व विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रो० जी० आर० शर्मा के निर्देशन में उत्खनन प्रारम्भ किया गया ।

महदहा का मध्य पाषाणिक स्थल लगभग 8000 वर्ग मीटर के क्षेत्र में एक धनुषाकार झील के पश्चिमी तट पर स्थित है । इस स्थल से होकर गुजरने वाली नहर के पश्चिम आवास तथा कब्रगाह के प्रमाण मिले हैं और पूर्व मध्य पाषाण कालीन जानवरों की बहुत सी कटी हुई हड्डियाँ प्राप्त हुई हैं । संभवतः यही वह

---

1. इण्डियन आर्क्यालजी : ए. रिव्यू 1977-78 और 1978-79.

क्षेत्र था जहाँ पर मध्य पाषाणिक मानव जानवरों को काटता था और हड्डियों के आभूषण तथा उपकरण बनाता था ।

महदहा के आवास तथा शवाधान क्षेत्र में मध्य पाषाणिक मानव के सांस्कृतिक अवशेष 60 सेंमी0 मोटे जमाव में दबे पड़े हैं । इस जमाव को स्तरीकरण के सिद्धान्त पर चार स्तरों में विभाजित किया गया है । खुले हुये क्षेत्र में पाषाणिक संस्कृति का इतना मोटा जमाव अत्यन्त उल्लेखनीय है । इससे इस स्थल पर मध्य पाषाणिक मानव के एक लम्बे समय तक रहने का बोध होता है ।

यहाँ के कब्रगाह से कुल 30 शवाधानों का उत्खनन किया गया है । जो स्तरीकरण तथा एक कब्र का दूसरी कब्र के ऊपर होने के आधार पर चार विभिन्न चरणों से सम्बन्धित हैं । सराय नाहर राय की तरह महदहा की समाधियाँ भी छिछली और अण्डाकार हैं जिनमें मृतकों को सांगोपांग लिटाकर रखा गया है । यद्यपि महदहा में भी अधिकतर मृतकों का सिर पश्चिम की तरफ तथा पैर पूर्व की तरफ रखा गया है लेकिन इस स्थल पर मध्य पाषाणिक मानव अपने मृतकों को कभी कभी सिर पश्चिम और पैर पूर्व की तरफ रखकर भी दफनाता था । संभव है यहाँ दो प्रजातियों के लोग एक ही साथ रहते रहे हों । समाधियों में मृतकों के दोनों हाथ प्राय: शरीर के समानान्तर फैलाकर रखे गये हैं लेकिन कुछ मृतकों का एक हाथ कटि के नीचे अथवा जांघों के बीच में रखा हुआ भी मिला है । अधिकतर मृतकों के कपाल बायीं ओर झुके हुये हैं । एक नरकंकाल विशेष उल्लेखनीय है जिसके दोनों पैर मोड़कर रखे गये हैं, बायां हाथ कटि के नीचे और दाहिना जांघों के बीच में है ।

महदहा में दो बच्चों के शमाधान भी प्राप्त हुये हैं जिनमें से एक 6 वर्ष का बालक और दूसरा 4 वर्ष की बालिका है ।

दो समाधियों में युग्म शमाधान के प्रमाण भी प्राप्त हुये हैं । एक समाधि में नारी बायें और पुरुष दायें रखकर दफनाये गये हैं तथा दूसरी में पुरुष नीचे और नारी उसके ठीक ऊपर है । पुरुष अपने कान में कुण्डल धारण किये है और गले में हार । एक दूसरी कब्र में भी पुरुष के गले में हार उपलब्ध हुये हैं । उल्लेखनीय है कि एक भी नारी आभूषण नहीं पहने है । लगता है आभूषण से अपने को सुसज्जित करने की परम्परा पुरुष तक ही सीमित थी । प्रागैतिहासिक भारत में आभूषण के प्रयोग का यह प्राचीनतम प्रमाण है । ये आभूषण छिद्रयुक्त गोलाकार हड्डियों को - प्राय: बारहसिंघे की सींग के निचले भाग को काटकर बनाये गये हैं। उत्खनन में कई आभरण निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में प्राप्त हुये हैं जिनसे इनकी निर्माण प्रक्रिया पर प्रकाश पडता है ।

<u>दमदमा</u> (अक्षांश 26°10'0" उ0, देशान्तर 82°10'36" पू0) इस क्षेत्र का सबसे बाद का मध्य पाषाणिक उत्खनित स्थल है । महदहा से 5 किमी0 उत्तर में यह स्थल सई नदी के सहायक पीली नदी के दो नालों के संगम पर एक टीले के रूप में स्थित है । यहाँ पर 8750 वर्ग मीटर के क्षेत्र में उत्खनन किया गया था जिससे 1.5 मीटर मोटा आवासीय जमाव उपलब्ध हुआ था जो 10 स्तरों में विभाजित किया गया है।[1]

---

1. वर्मा, आर0के0, मिश्रा वी0डी0, पाण्डेय जे0एन0 और पाल, जे0एन0 1985, ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन दि इक्सकैवेशन्स एट दमदमा (1982-1984) मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट, 9, 45-65.

सबसे ऊपरी स्तर मध्य पाषाण काल के बाद का है लेकिन अन्य 9 स्तर मध्य पाषाण काल के विभिन्न चरणों से सम्बन्धित हैं। यहाँ पर किये गये 5 सत्रों के उत्खनन से गंगा के मैदान की मध्य पाषाणिक संस्कृति के महत्त्वपूर्ण पक्षों पर प्रकाश पड़ा है। कई गर्त चूल्हे, पकी मिट्टी के फर्श और 41 मानव शवाधान उत्खनन से प्रकाश में आये हैं। इस संस्कृति के अन्य उपादानों में लघु पाषाण उपकरण, हड्डी के उपकरण पत्थर के सिल लोढ़े, हथौड़े, जली मिट्टी के टुकड़े, जले हुए दाने और पशुओं की हड्डियाँ सम्मिलित हैं। यहाँ पर 5 समाधियों में युग्म शवाधान के प्रमाण मिले हैं और एक समाधि में 3 कंकाल हैं।

दमदमा, महदहा और सराय नाहर राय के मध्य पाषाणिक मानव सामान्यत: 1.80 मीटर लम्बे थे जिन्हें डोलिकोसेफालिक प्रजाति का माना गया है। हाथ-पैर की हड्डियों के दोनों सिरों के अस्थिकरण, कपाल की संधि रेखाओं के विलयन, ठुड्डी तथा दाँतों की अवस्था के आधार पर विभिन्न नर-कंकालों को 17 से 35 वर्ष की आयु निर्धारित की गयी है। महदहा में बच्चों के अतिरिक्त लगभग 50 वर्ष की एक वृद्धा का नरकंकाल प्राप्त हुआ है। तत्कालीन जीवन की दुरूहता संभवत: मनुष्यों को अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहने देती थी।

इन स्थलों पर आवास और समाधियाँ पास ही पास मिले हैं जहाँ पर लोग निवास करते थे वहीं पर अपने मृतकों के लिये समाधियाँ भी बनाते थे। महदहा में गर्त चूल्हे सराय नाहर राय की तरह गोल अथवा अण्डाकार हैं लेकिन कभी कभी इन्हें गीली मिट्टी से लीपा जाता था। मिट्टी का यह लेप भी पक

गया है । सम्भवतः लेपयुक्त गर्त चूल्हों में मांसपिण्ड रखकर उन पर घास फूस रख दिया जाता था और मिट्टी के टुकड़ों से ढककर आग लगा दी जाती थी । यही कारण है कि इन चूल्हों में जली हड्डियाँ और राख के अतिरिक्त जली मिट्टी के टुकड़े भी प्राप्त होते हैं ।

सराय नाहर राय की ही तरह महदहा का मध्य पाषाणिक स्थल भी धनुषाकार झील के किनारे स्थित है । आवास स्थल और वध-क्षेत्र से लगे हुये झील में जानवरों की हड्डियाँ लघु पाषाण उपकरण आदि प्राप्त हुये हैं । झील के दक्षिणी पश्चिमी किनारे किये गये उत्खनन के परिणामस्वरूप जमाव के 10 स्तर प्रकाश में आये । तट पर भी इसकी गहराई 1.90 मीटर है । मध्य पाषाण काल के अवशेष झील में नीचे के दो स्तरों 9 और 8 से मिले हैं जिसके अन्तर्गत लघु पाषाण उपकरण, जली मिट्टी के टुकड़े, हड्डियों के उपकरण, जानवरों की हड्डियाँ, सिल लोढ़ों के खण्डित भाग आदि सम्मिलित हैं । मध्य पाषाणिक संस्कृति के अवसान के बाद भी प्राकृतिक कारणों से झील में अवसादन होता रहा जिसमें आवास स्थल से जानवरों की हड्डियाँ, लघु पाषाण उपकरण आदि बहकर जमा होते रहे । झील के विविध स्तरों की मिट्टी में मिले पुष्प परागों के विश्लेषण का कार्य इलाहाबाद विश्वविद्यालय का बनस्पति विभाग कर रहा है । अभी तक जो परिणाम मिले हैं उनसे यह कहा जा सकता है कि मध्य पाषाण काल में यह क्षेत्र घास के मैदान और झाड़ियों से आच्छादित था ।

महदहा के बध क्षेत्र और झील से जिन जानवरों की हड्डियाँ मिली हैं

उनमें बैल, जंगली भैंसा, हिरण, बारह सिंघा, सुअर, दरियाई घोड़ा, गैंडा, हाथी आदि का उल्लेख किया जा सकता है । ये सब जानवर जंगली हैं । पशुपालन का कोई प्रमाण नहीं मिलता ।

उल्लेखनीय है कि महदहा से लघु पाषाण उपकरण सराय नाहर राय की अपेक्षा संख्या में कम हैं । इसी कमी को पूरा करने के लिये सम्भवतः हड्डियों पर उपकरण बनाये गये । हड्डी के बने उपकरणों में वाणाग्र, नोंक, खुर्चनी, आरी, रखानी आदि उल्लेखनीय हैं । हड्डियों के बने वाणाग्रों का भारत में प्राचीनतम प्रमाण महदहा के उत्खनन ने ही प्रस्तुत किया है ।

बलुआ पत्थर पर बने सिल लोढ़े, हथगोले आदि भी महदहा से अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध हुये हैं । सिल, लोढ़ों की उपलब्धि से प्रतीत होता है कि मनुष्य अब जंगली घासों के बीज पीसकर खाने लगा था । महदहा के आवास-समाधि क्षेत्र में कुछ ऐसे गर्त प्राप्त हुये हैं जिनमें गीली मिट्टी का मोटा लेप लगाया गया है । इनमें कभी कभी लेप की कई परतें भी प्राप्त होती हैं । चूँकि इन गर्तों में न तो राख मिलती है और न तो जली हड्डियाँ तथा जली मिट्टी के टुकड़े, इससे संभावना यही है कि इन गर्तों में खाने योग्य जंगली घासों के बीज संग्रहीत किये जाते थे । जब इनका लेप खराब होने लगता था तो इन्हें पुनः लीप दिया जाता था ।

दमदमा और महदहा के लघु पाषाण उपकरण भी सराय नाहर राय की ही तरह चर्ट, चैलसिडनी, कार्नेलियन, अगेट और जैस्पर पत्थरों पर बने हैं । उपकरण

प्रकारों में समानान्तर बाहु वाले ब्लेड, भूथड़े ब्लेड, नोक, खुर्चनी, तक्षणी, त्रिभुज और समलम्ब चतुर्भुज सम्मिलित हैं। सराय नाहर राय से समलम्ब चतुर्भुज नहीं मिले। बिन्ध्य क्षेत्र में लेखहिया[1] और चोपनीमाण्डो के उत्खनन से इस बात के प्रमाण मिले हैं कि समलम्ब चतुर्भुज का ज्ञान मनुष्य को त्रिभुज के बाद हुआ। इस आधार पर कहा जा सकता है कि महदहा की मध्य पाषाणिक संस्कृति कालक्रम में सराय नाहर राय के बाद की है। सराय नाहर राय में सिल लोढ़े, हड्डियों के वाणाग्र तथा आभूषण आदि का न मिलना भी महदहा को उसके बाद का प्रमाणित करता है।

बिन्ध्य क्षेत्र में, जहाँ से इस संस्कृति के लोग पत्थर पिण्ड लेकर जीविका की तलाश में आये, लोग पहाड़ की गुफाओं अथवा खुले स्थानों पर रहते थे। वहाँ ये लोग शिलाश्रयों की दीवालों और छतों पर तत्कालीन पशुओं के चित्र, आखेट दृश्य, धनुष-वाण धारण किये मनुष्यों तथा नृत्य करते पुरुष महिलाओं को बनाते थे। जिन रंगों से ये चित्र बनाये गये हैं उनके प्रमाण गेरू पिण्डों के रूप में शिलाश्रयों के उत्खनन से प्राप्त हुये हैं। इस संस्कृति के गंगा घाटी के स्थलों पर शिलाश्रयों के अभाव में इनकी कलात्मक अभिरुचि के कोई प्रमाण नहीं मिलते लेकिन घिसे हुये गेरू के टुकड़े प्राप्त हुये हैं। इन गेरू पिण्डों से निकले रंग का प्रयोग कहाँ किया जाता था इसका कोई पुरातात्विक प्रमाण हमारे पास नहीं है। संभव है चेहरे को अलंकृत

-----------------

1. मिश्र, वी०डी०, 1977, सम ऐस्पेक्ट्स आफ इण्डियन आक्यालिजी, पृष्ठ 53.

किया जाता हो या पशुओं की खालों पर चित्र बनाये जाते हों । कुछ हड्डियों के उपकरणों को रेखायें उत्कीर्ण करके अलंकृत करने का प्रमाण अवश्य मिला है ।

गंगा घाटी की मध्य पाषाणिक संस्कृति को क्या समय प्रदान किया जाय ? सराय नाहर राय से एक कार्बन तिथि 8395 ± 110 ई०पू०[1] प्राप्त हुई है । अज्यामितीय मध्य पाषाणिक संस्कृति को इसके पहले का और महदहा की मध्य पाषाणिक संस्कृतिको इसके बाद का समय दिया जा सकता है । बिन्ध्य क्षेत्र के लेखाहिया से दो कार्बन तिथियाँ 1710 ± 110 ई०पू० और 2410 ± 115 ई०पू०[2] प्राप्त हुई है । इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि गंगा घाटी में भी यह संस्कृति संभवतः 2000 ई०पू० तक चलती रही ।

3. <u>नव पाषाणिक संस्कृति</u>

मध्य गंगा घाटी के पश्चिमी भाग में जहाँ से मध्य पाषाण संस्कृति के बहुत से स्थल प्रकाश में आये हैं अभी तक कोई नवपाषाणिक स्थल नहीं मिला है । लेकिन इसके पूर्वी भाग में चिरांद, चेचर, सेनुआर आदि स्थल प्रकाश में आये हैं, जिनके उत्खनन से इस संस्कृति के विविध अवयवों पर प्रकाश पड़ा है ।

चिरांद (अक्षांश $25^{0}45'$ उत्तर, देशान्तर $84^{0}45'$ पूर्व) बिहार के

---

1. टी०आई०एफ०आर०, 1971, डेट लिस्ट (टी०एफ० 1104).
2. अग्रवाल, डी०पी० और कुसुमगर, शीला, 1974, <u>प्री-हिस्टारिक क्रोनोलाजी एण्ड रेडियो कार्बन डेटिंग इन इण्डिया</u>, पृष्ठ 6.

सारन जिले में गंगा के बायें तट पर स्थित है । इस स्थल पर क्रम से नवपाषाणिक, ताम्र-पाषाणिक और लौह काल के सांस्कृतिक जमाव प्राप्त हुये हैं ।[1] डा० वी०पी० सिन्हा के नेतृत्व में किये गये उत्खनन से यहाँ पर नवपाषाण काल का 3.5 मीटर मोटा जमाव प्राप्त हुआ है ।

चिरांद के नवपाषाणिक धरातल[2] का क्षैतिज उत्खनन नहीं किया गया है । इस लिये उनके गृह-निर्माण और आवासीय अवशेषों पर अधिक प्रकाश नहीं पड़ा है लेकिन गोलाकार या अर्द्धगोलाकार झोपड़ियों के प्रमाण उत्खनन से उपलब्ध हुये हैं । जली मिट्टी के ऐसे टुकड़े जिन पर बांस और लकड़ी के निशान हैं, यह बताते हैं कि इस संस्कृति के लोग झोपड़ियों की दीवाल लकड़ी और बांस से बना कर उन पर मिट्टी का मोटा लेप लगाते थे ।

चिरांद से क्वार्टजाइट, बेसाल्ट या ग्रेनाइट पत्थरों पर बने हुये सिल-लोढ़े, हथगोले, हथौड़े और कुल्हाड़ियाँ प्राप्त हुई हैं । यहाँ की कुल्हाड़ियाँ

------------------

1. चिरांद का उत्खनन बिहार प्रान्त के पुरातत्व विभाग द्वारा डॉ० वी०पी० सिन्हा के निर्देशन में किया गया । देखिये इण्डियन आक्योलजी : ए रिव्यू 62-63 पृष्ठ 6, 63-64, पृष्ठ 6-8, 68-69, पृष्ठ 5-6, 69-70, पृष्ठ 3-4, 70-71, पृष्ठ 6-7, 71-72, पृष्ठ 6-7.

2. नारायण, एल०ए०, 1970, नियोलिथिक सेटिलमेण्ट एट चिरांद, जर्नल आफ बिहार रिसर्च सोसायटी, वाल्यूम 56, पृष्ठ 1-35.

वर्मा, वी०एस०, 1971, इक्सकैवेसन्स एट चिरांद : न्यू लाइट आन इण्डियन नियोलिथिक कल्चर काम्पलेक्स, पुरातत्व नं० 4, पृष्ठ 18-22.

गोलाकार है। इनके निर्माण के लिए सबसे पहले फलक निकाले गये हैं फिर इन्हें गढ़कर और रगड़कर अत्यन्त चिकना और पालिशदार बनाया गया है। कुछ कुल्हाड़ियों का अनुभाग आयताकार है।

चैल्सिडनी, चर्ट, अगेट आदि महीन कण वाले पत्थरों पर बने समानान्तर बाहु वाले ब्लेड, खुर्चनी, वाणाग्र, खचित ब्लेड, नोक, दन्तुरित नोक, अर्द्धचन्द्र छिद्रक आदि लघु पाषाण उपकरण भी यहाँ से प्राप्त हुये हैं। कुछ ज्यामितिक उपकरण भी लघु पाषाण उपकरणों में सम्मिलित हैं। घिसकर पालिश किये गये गोलाकार नव-पाषाणिक कुल्हाड़ियों की संख्या चिरांद में कम है लेकिन हड्डियों और मृग शृंगों के बने हुए विभिन्न प्रकार के उपकरण यहाँ से प्राप्त हुये हैं। इन उपकरणों में सुई, नोक, छिद्रक, पिन, पुच्छल एवं छिद्रयुक्त वाणाग्र, खुर्चनी, छेनी, हथौड़े, कुल्हाड़ियाँ आदि सम्मिलित हैं।

नवपाषाणिक चिरांद की पात्र परम्पराओं के अध्ययन से भी इस संस्कृति के स्वरूप पर प्रकाश पड़ा है। लाल, भूरे, काले एवं काले तथा लाल पात्र परम्परा के मिट्टी के वर्तन यहाँ से प्राप्त हुये हैं। कुछ वर्तनों की ऊपरी सतह को चिकने पत्थरों से घोंटकर चिकना और चमकीला बनाया गया है। ये पात्र मुख्यतः हस्त-निर्मित हैं लेकिन कुछ ऐसे पात्र भी हैं जिन्हें साधारण चाक पर धीरे धीरे घुमाकर बनाया गया है। कुछ वर्तनों को गीली मिट्टी लगाकर ऊपरी सतह पर खुरदुरा भी किया गया है। वर्तनों को आसंजन विधि से अलंकृत करने अथवा पका लेने के बाद उन्हें खरोंचकर अलंकृत करने का प्रमाण भी प्राप्त होता है। एक पात्र पर

सोलह तीलियों वाले धुरीयुक्त चक्र का आरेखण उल्लेखनीय है । भूरे रंग के वर्तनों पर पका लेने के बाद लाल गेरू से चित्र बनाये गये हैं । चित्रित अभिप्रायों में एक दूसरे को आर-पार काटती रेखायें, सकेन्द्रिक वृत्त और लहरदार रेखायें सम्मिलित हैं । एक पात्र खण्ड पर बिन्दुओं से त्रिशूल का चित्र बनाया गया है । लाल गेरू से चित्रित ये अभिप्राय कभी कभी लाल तथा काले और लाल पात्र परम्परा के वर्तनों पर भी प्राप्त होते हैं । चिरांद से एक पात्र खण्ड ऐसा भी प्राप्त हुआ है जिस पर चटाई की छाप है । वर्तन आकारों में चौड़े अथवा संकरे मुँह वाले गोलाकार घड़े, टोंटीदार घड़े, आधार वाले कटोरे, छिद्रयुक्त, होंठदार अथवा टोंटीदार कटोरे और लम्बे तथा छोटे नलीदार टोंटी के वर्तन सम्मिलित हैं ।

चिरांद के नवपाषाण कालीन लोगों के कलात्मक अभिरुचि कोअभिव्यक्त करने वाले उपादानों में उपरत्नों पर बने हुये सुन्दर मन के, हड्डी के कुण्डल और झुमके, मिट्टी तथा हड्डियों की चूड़ियाँ, कूबड़ वाले बैल, चिड़िया तथा नाग की मृण्मूर्तियों का उल्लेख किया जा सकता है ।

अन्य नवपाषाणिक संस्कृतियों की ही तरह चिरांद की नवपाषाणिक संस्कृति की अर्थव्यवस्था खेती और पशुपालन पर आधारित थी । जली मिट्टी के टुकड़ों में धान की भूसी के प्रमाण प्राप्त हुये हैं । धान के अतिरिक्त गेहूँ, जौ, मूँग और मसूर से भी यहाँ के लोगों का परिचय था । गाय, बैल और भैंस की हड्डियाँ भी उत्खनन में पाप्त हुई हैं जो इनके पालते पशु रहे होंगे । इसके अतिरिक्त हाथी, गैंडा, हिरन तथा बारहसिंघा आदि जंगली जानवरों की हड्डियाँ भी उत्खनन में

प्राप्त हुई हैं ।

पूर्वी मध्य गंगा घाटी की इस नवपाषाण संस्कृति की विन्ध्य क्षेत्र की नव पाषाणिक संस्कृति से तुलना करने पर हमें कुछ मनोरंजक तथ्य प्राप्त होते हैं । बिन्ध्य क्षेत्र में नवपाषाण संस्कृति के कई स्थलों का उत्खनन किया गया है । बेलन घाटी में कोलडिहवा, पंचोह और महगड़ा के उत्खनन से इस संस्कृति में गोलाकार नवपाषाणिका कुल्हाड़ियाँ, सिल लोढ़े, लघु पाषाण उपकरण, मिट्टी के मनके, हड्डी के बने वाणाग्र और गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपड़ियों के प्रमाण प्राप्त हुये हैं । यहाँ के लोग धान की खेती करते थे और गाय-बैल, भेंड़-बकरी, घोड़े आदि पशुओं को पालते थे । पाषाण उपकरणों के अध्ययन और पालतू तथा जंगली गाय बैलों, भेंड़-बकरी के साथ-साथ मिलने के आधार पर यह माना गया है कि बिन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति ने स्थानीय जंगली पशुओं को ही पालतू बनाया। यहाँ से उपलब्ध कार्बन तिथियों के आलोक में धान की खेती सर्वप्रथम प्रारम्भ करने का भी श्रेय बिन्ध्य क्षेत्र की इस संस्कृति को है । इस संस्कृति को पाँचवीं-छठीं सहस्राब्दी का समय प्रदान किया गया है ।

बिन्ध्य क्षेत्र के नवपाषाण संस्कृति की पात्र परम्परायें पूर्णतः हस्तनिर्मित हैं । यहाँ की कुछ पात्र परम्परा के वर्तनों की ऊपरी सतह पर रस्सी की छाप अथवा कछुये की हड्डी से पीटकर अलंकृत किया गया है और कुछ की ऊपरी सतह को खुरदुरा बनाया गया है ।[1] कुछ पात्रों की ऊपरी सतह को घोंटकर चिकना और

---

1. पाल, जगन्नाथ, 1977, नवपाषाणिक संस्कृतियाँ, डॉ० राधाकान्त वर्मा द्वारा लिखित भारतीय प्रागैतिहासिक संस्कृतियाँ में, पृष्ठ 278-279.

चमकीला किया गया है । पात्रों को घोंटकर चिकना बनाने की प्रथा से दोनों संस्कृतियों का परिचय था । एक ही तरह के घड़े और कटोर तथा टोंटीदार वर्तन भी दोनों संस्कृतियों से प्राप्त हुये हैं ।

दोनों संस्कृतियों के नवपाषाणिक कुल्हाड़ियों में साम्य है और एक ही तरह के लघु पाषाण उपकरण भी प्राप्त होते हैं । चिरांद में पात्रों को पकाने के बाद चित्रित भी किया गया है लेकिन विन्ध्य क्षेत्र में पात्रों को चित्रित करने की परम्परा नहीं थी और न तो उन्हें पकाने के बाद खरोंचकर अलंकृत ही किया गया है । चिरांद में मिलने वाली मृण्मूर्तियाँ भी महगड़ा, कोलडिहवा और पंचोह से नहीं मिली हैं । हड्डियों के बने उपकरणों की संख्या भी विन्ध्य क्षेत्र में अधिक नहीं है । रस्सी अथवा कछुये की हड्डी की छाप वाले मिट्टी के वर्तन जो विन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाणिक संस्कृति का चारित्रिक लक्षण हैं, चिरांद में बिलकुल ही नहीं मिलते। उपरोक्त विश्लेषण से यही प्रतीत होता है कि चिरांद की नवपाषाण संस्कृति अधिक विकसित है जबकि विन्ध्य क्षेत्र की यह संस्कृति अभी भी शैशवावस्था में है ।[1] उपलब्ध कार्बन तिथियों के आलोक में भी चिरांद की नवपाषाण संस्कृति विन्ध्य क्षेत्र की संस्कृति के काफी बाद की प्रमाणित होती है ।

---

1. मिश्र, वी0डी0, 1977, <u>सम ऐस्पेक्ट्स आफ इण्डियन आर्क्यालजी</u>, पृष्ठ 116.

चिरांद के नवपाषाणिक धरातल से कुल 9 कार्बन तिथियाँ प्राप्त हुई हैं जिनमें से तीन तिथियाँ 1580 ± 110, 1675 ± 140 और 1755 ± 155 ई०पू० को उपयुक्त माना गया है ।[1] नवपाषाणिक और ताम्रपाषाणिक धरातलों के संधिस्थल से 1050 ± 190 ई०पू० की एक तिथि प्राप्त हुई है । इस आधार पर चिरांद की नवपाषाण संस्कृति को 1800 ई०पू० से 1200 ई०पू० के मध्य रखा गया है ।[2] चूँकि निचले धरातल से कोई तिथि नहीं मिली है इसलिये इस संस्कृति का प्रारम्भ 2000 ई०पू० या इससे भी पूर्व का समय देने की संस्तुति की गयी है ।[3] यहाँ के अवसादन दर की गणना के आधार पर इस संस्कृति का प्रारम्भ और भी पहले 4000 से 3000 ई०पू० तक प्रस्तावित किया गया है ।[4]

---

1. मण्डल, डी०, 1972, रेडियो कार्बन डेट्स एण्ड इण्डियन आर्क्यालजी, पृष्ठ 204-206.

2. अग्रवाल, डी०पी० और कुसुमगर, शीला, 1973, प्री-हिस्टारिक क्रोनोलाजी एण्ड रेडियो कार्बन डेटिंग इन इण्डिया, पृष्ठ 71.

3. वर्मा, वी०एस०, 1971, वही, पृष्ठ 22.

4. विष्णुमित्रे, 1975

कहने की आवश्यकता नहीं कि गंगा के मैदान की इन पाषाण कालीन संस्कृतियों ने परवर्ती विकसित संस्कृतियों को ठोस आधार प्रदान किया था ।

4. <u>ताम्र पाषाणिक संस्कृति</u> :

ताम्र पाषाणिक संस्कृति के प्रमाण मध्य गंगा घाटी में नवपाषाण संस्कृति की अपेक्षा अधिक विस्तृत क्षेत्र से उपलब्ध हुये हैं । इस संस्कृति के प्रमुख स्थलों में बिहार के सोनपुर[1], चिरांद[2], ओरिअप[3], बक्सर, चेचर[4] तथा उत्तर प्रदेश के सोहगौरा[5], प्रह्लादपुर[6], राजघाट[7], नहुष राजा का टीला[8], बनवारी घाट[9],

-------------------

1. <u>इण्डियन आर्क्यालजी ए रिव्यू</u> 1956-57, पृष्ठ 19, 1959-60, पृष्ठ 14, 1960-61, पृष्ठ 4-5, 1961-62, पृष्ठ 4-5.
2. <u>इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू</u>, 1963-64, पृष्ठ 6-6 और 1968-69 से लेकर 1971-72 के अंक
3. वर्मा, बी०एस०, 1969, ब्लैक एण्ड रेडवेयर इन बिहार, बी०पी० सिन्हा (सं०) <u>पाटरीज इन इन्सियण्ट इण्डिया</u> में, पृष्ठ 107.
4. <u>इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू</u>, 1977-78, पृष्ठ 17-18.
5. <u>इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू</u>, 1961-62, पृष्ठ 56, 1974-75, पृष्ठ 47.
6. नारायण, ए०के० और राय, टी०एन०, 1968, <u>इक्सकैवेशन्स ऐट प्रह्लादपुर</u>, पृष्ठ 63.
7. नारायण, ए०के० और राय, टी०एन०, 1977, <u>इक्सकैवेशन्स ऐट राजघाट</u>, पृष्ठ 23, 25.
8. नेगी, जे०एस०, 1975, नहुष का टीला, <u>के०सी० चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम</u> पृष्ठ 51-56.
9. भट्ट, एस०के०, 1970, आर्क्यालोजिकल इक्सप्लोरेशन इन बस्ती डिस्ट्रिक्ट, <u>पुरातत्व</u> नं० 3, पृष्ठ 78-88.

गुलरिहवाघाट[1], नरहन[2], माँझी, इमलीडीह उल्लेखनीय हैं। घाघरा नदी के उत्तर पूर्व घाघरा और गंडक नदियों के मध्य में सरयूपार क्षेत्र में गोरखपुर विश्वविद्यालय के पुरातत्वविदों ने जो सर्वेक्षण और उत्खनन किया उससे नवपाषाणिक उपकरणों की सम्भावना भी व्यक्त की गयी थी।[3] इस क्षेत्र के प्रमुख पुरातात्विक स्थलों में राप्ती और आमी नदियों के संगम पर स्थित सोहगौरा और कुआनो नदी के तट पर स्थित सूसीपार, रामनगर घाट, बड़ा गाँव, गेरार और लहुरादेवा उल्लेखनीय हैं जहाँ से कार्ड इम्प्रेस्ड चित्रित कृष्ण-और-लोहित (पेन्टेड ब्लैक-एण्ड-रेड) ग्रे, ब्लैक स्लिप्ड और रेडवेयर के पात्र खण्ड लघु पाषाण उपकरणों के साथ प्राप्त हुए थे। इस क्षेत्र के अन्य महत्त्वपूर्ण स्थलों में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा उत्खनित बलिया जनपद में स्थित खैराडीह[4], गोरखपुर जनपद में नरहन और माँझी तथा इमलीडीह आदि स्थलों का उल्लेख किया जा सकता है।[5] प्रतापगढ़ जिले की पट्टी तहसील

-----------------

1. भट्ट, एस0के0, 1970, आर्क्यालोजिकल इक्सप्लोरेशन इन बस्ती डिस्ट्रिक्ट, <u>पुरातत्व</u> नं0 3, पृष्ठ 78-88.

2. सिंह, पुरुषोत्तम और मक्खनलाल, 1985, नरहन 1983-84 : ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट, <u>भारती</u> (बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग की पत्रिका) नई सिरीज, 3, पृष्ठ 144-86.

3. चतुर्वेदी, एस0एन0, 1985, एडवान्स आफ बिन्ध्यन नियोलिथिक एण्ड चैलकोलिथिक कल्चर्स टू द हिमालयन तराई : इक्सकैवेशन एण्ड इक्सप्लोरेशन इन सरयूपार रिजन आफ उ0प्र0, <u>मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट</u>, वैल्यूम 9, पृ0 101-108.

4. सिंह, वीरेन्द्र प्रताप, 1989, खैराडीह ए चैलकोलिथिक सेटिलमेण्ट, <u>मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट</u>, पृष्ठ 28-34.

5. सिंह, पुरुषोत्तम और मक्खनलाल, 1985, नरहन, 1983-85, ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट, <u>भारती</u> (बुलेटिन आफ द डिपार्टमेण्ट आफ एन्सियण्ट इण्डियन हिस्ट्री कल्चर एण्ड आर्क्यालजी, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी (एन0एस0), 3, 144-186.

में हाल ही में किये गये सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप इस संस्कृति के कई स्थल प्रकाश में आये हैं। उपरोक्त स्थलों के उत्खनन और सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप मध्य गंगा घाटी के प्रागैतिहासिक मानचित्र पर ताम्रपाषाणिक संस्कृति का स्वरूप स्पष्ट होने लगा है। इस संस्कृति की पुरातात्विक सामग्री के अन्तर्गत चाक पर बनी हुयी कई पात्र परम्परायें, पत्थर और हड्डियों पर बने हुये उपकरण, ताम्र उपकरण तथा लघु ब्लेड उद्योग के लघु पाषाण उपकरण सम्मिलित हैं। पात्र परम्पराओं में लाल, काले लेप वाले तथा काले-और-लाल पात्र परम्परायें हैं, जिनमें से अन्तिम दो को चित्रित भी किया गया है। लघु पाषाण उपकरणों में दन्तुर कटक ब्लेड भी सम्मि..त हैं। हड्डियों तथा मृग-श्रृंगों के बने हुये वाणाग्र इस संस्कृति के अभिन्न अंग लगते हैं। वाणाग्र दो प्रकार के हैं - पुच्छल और छिद्रयुक्त। अधिकतर वाणाग्रों का अनुभाग गोला है लेकिन कुछ तिकोने अनुभाग वाले वाणाग्र भी प्राप्त हुये हैं। बहुत से वाणाग्र निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में प्राप्त हुये हैं। इस संस्कृति के लोग भी बांस और लकड़ी की बनी झोपड़ियों में निवास करते थे। अर्धरत्नों और मिट्टी के बने मनके इन स्थलों से बहुतायत में मिले हैं लेकिन ताम्र उपकरणों की संख्या बहुत कम है। बिहार के ओरिअप से एक ताम्र-चूड़ी का उल्लेख किया जा सकता है। मृण्मूर्तियों में चिरांद से उपलब्ध सिररहित चपटी चिड़िया जिसे शरीर पर छिद्र करके सुसज्जित किया गया है, ओरिअप से एक आदिम शैली में बनी नारी मूर्ति तथा प्रह्लादपुर से उपलब्ध खिलौना गाड़ी विशेष उल्लेखनीय हैं।

लाल और काले, लाल तथा काले लेप की पात्र परम्परायें इस संस्कृति की चारित्रिक विशेषतायें मानी जाती हैं। उत्खनित स्थलों में इस संस्कृति के निचले

धरातल में काले-और-लाल वर्तनों की संख्या अधिक है । चिरांद में कुछ वर्तनों पर क्रीम रंग का लेप किया गया है । वर्तन आकारों में घड़े, नाद, कटोरे और तश्त-रियाँ सम्मिलित हैं । काले-और-लाल पात्र परम्परा के कुछ वर्तनों के भीतरी सतह पर सफेद या क्रीम रंग से चित्रण किया गया है । चित्रण अभिप्रायों में क्षैतिज अथवा तिरछी रेखायें प्राप्त होती हैं । इन वर्तनों पर चित्रण के प्रमाण सोहगौरा, प्रह्लादपुर, राजघाट, नहुष राजा का टीला, बनवारी घाट तथा गुलरिहवा घाट से प्राप्त हुये हैं ।

पात्रों के आकार में विविधता के प्रमाण लाल पात्र परम्परा में प्राप्त होते हैं - कटोरे, आधार वाले कटोरे, थालियाँ, नाद, तीन पैर वाले तथा छिद्र-युक्त कटोरे और नाद, होंठदार कटोरे और नाद, बड़े और मध्यम आकार के घड़े तथा साधारण तश्तरियाँ । चिरांद में नवपाषाणिक संस्कृति की तरह इस संस्कृति में भी टोंटीदार वर्तन प्राप्त हुये हैं ।

काले लेप वाले पात्र परम्परा में वर्तनों के अधिक आकार नहीं मिलते हैं। कटोरे और थालियाँ ही प्राय: इस परम्परा के वर्तन हैं । संभवत: इस पात्र-परम्परा के वर्तनों का प्रयोग खाने पीने के लिये ही किया जाता था । इसी पात्र परम्परा से परवर्ती काल में उत्तरी कृष्ण ओपदार पात्र परम्परा का विकास हुआ होगा । काले लेप वाली पात्र परम्परा के वर्तनों को भी सफेद या काले रंग से चित्रित किया गया है । चित्रण अभिप्राय के अन्तर्गत तिरछे और छोटी तथा बड़ी रेखायें ही प्राप्त

होती हैं । चित्रित काले लेप वाले वर्तन चिरांद, सोनपुर, सोहगौरा, प्रह्लादपुर, राजघाट, गुलरिहवा घाट तथा पूरे देवजानी से प्राप्त हुये हैं ।

प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा किये गये हाल के सर्वेक्षणों से मध्य गंगा घाटी के प्रतापगढ़ जिले की पट्टी तहसील में लगभग 30 ताम्र पाषाणिक स्थल प्रकाश में आये हैं । अभी तक इनमें से एक भी स्थल का उत्खनन नहीं किया गया है लेकिन इन स्थलों से लाल, काले लेप वाले तथा काले-और-लाल पात्र परम्पराओं के मिट्टी के वर्तन, दन्तुरकटक ब्लेड, क्रोड और फलक से युक्त लघु ब्लेड उद्योग के लघु पाषाण उपकरण, मिट्टी तथा अर्द्धरत्नों के मनके, बांस बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकड़े, तांबे की अंगूठी तथा पत्थर के सिल लोढ़े प्राप्त हुये हैं । इस क्षेत्र के प्रमुख स्थलों में भाँटी (अक्षांश $25^{0}56'0''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}16'0''$ पूर्व), गगेहटी (अक्षांश $25^{0}59'10''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}9'50''$ पूर्व), कंजा सराय गुलानी (अक्षांश $25^{0}58'10''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}11'10''$ पूर्व), मन्दाह (अक्षांश $25^{0}59'0''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}2'25''$ पूर्व), पेलखमार (अक्षांश $26^{0}1'50''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}7'10''$ पूर्व), पूरेदेवजानी (अक्षांश $25^{0}57'30''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}9'40''$ पूर्व), सराय जमुआरी (अक्षांश $25^{0}58'0''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}5'80''$ पूर्व) तथा शाल्हीपुर (अक्षांश $26^{0}0'10''$ उत्तर, देशान्तर $82^{0}4'30''$ पूर्व) का उल्लेख किया जा सकता है । ये स्थल मध्य पाषाणिक स्थलों की ही तरह धनुषाकार झीलों अथवा इन झीलों से निकलने वाली(सई नदी की सहायक)नदियों के किनारे स्थित हैं ।

उपलब्ध पात्र परम्पराओं में लाल, काले लेप वाले, काले-और-लाल रंग

के पात्र प्राप्त हुये हैं । कभी कभी लाल पात्र परम्परा के वर्तनों पर भी लेप किया गया है । काले-और-लाल पात्र परम्परा के वर्तनों के भीतरी सतह पर काला तथा ऊपरी सतह पर लाल लेप है । काले लेप के कुछ वर्तनों के भीतरी सतह पर सफेद तथा बाहरी सतह पर काले रंग से चित्र बनाये गये हैं । चित्रण अभिप्रायों में खड़ी तथा तिरछी मोटी रेखायें सम्मिलित हैं । इन स्थलों से पात्रों के जो आकार उपलब्ध हुये हैं उनमें कटोरे, आधार वाले कटोरे, होंठदार कटोरे, थालियाँ, नाद, पैर वाले छिद्रयुक्त नाद, वीकर और विभिन्न आकार के घड़े उल्लेखनीय हैं । लाल पात्र परम्परा के कुछ वर्तनों की बाहरी सतह पर खड़ी या तिरछी रेखायें उत्कीर्ण करके अलंकृत किया गया है और कभी कभी आसंजन विधि से अंगुलियाँ दबाकर रस्सी की आकृति का अलंकरण भी बनाया गया है । उत्खनन के अभाव में मध्य गंगा घाटी के पश्चिमी क्षेत्र की इस संस्कृति के स्वरूप के बारे में हमें अधिक विस्तृत ज्ञान नहीं है लेकिन पात्र प्रकारों, चित्रण अभिप्रायों और लघु पाषाण उपकरणों के आधार पर मध्य गंगा घाटी के सम्पूर्ण ताम्रपाषाणिक स्थलों से इस संस्कृति का एक ही स्वरूप आभासित होता है ।

मध्य गंगा घाटी की यह संस्कृति पूर्व में निम्न गंगा घाटी और दक्षिण में बिन्ध्य क्षेत्र की ताम्रपाषाणिक संस्कृतियों से कई सन्दर्भों में जुड़ी हुई प्रतीत होती है । निचली गंगा घाटी की ताम्रपाषाणिक संस्कृति के दो उत्खनित स्थल पाण्डु-राजारढिवि, महिषदल और भरतपुर हैं । पश्चिमी बंगाल के वर्दवान जिले में

स्थित पाण्डु राजारढिवि के उत्खनन[1] से हस्तनिर्मित भूरे या पीताभ लाल, काले और लाल, लाल और चमकीले लाल पात्र परम्परा के वर्तन प्राप्त हुये हैं । काले और सफेद रंग से काले-और-लाल तथा लाल पात्र परम्परा के वर्तनों को चित्रित भी किया गया है । महिषदल[2] में भी इन परम्पराओं के वर्तनों को चित्रित किया गया है । वर्तन आकारों में कटोरे, नाद, होंठदार अथवा टोंटीदार कटोरे, साधारण तश्तरी और कटोरे, ढक्कन, थालियाँ, छिद्रयुक्त वर्तन तथा लम्बे गले के घड़े सम्मिलित हैं । अन्य सांस्कृतिक सामग्री के अन्तर्गत तांबे के मनके, चूड़ियाँ, नहन्नी, सुरमा-सलाई, कुल्हाड़ी, हड्डियों के वाणाग्र, पिन, कंघे, चूड़ियाँ, अर्द्ध-रत्नों के मनके, दन्तुरकटक ब्लेड से युक्त लघुपाषाण उपकरणों का उल्लेख किया जा सकता है ।

चमकीली लाल पात्र परम्परा तथा पनारीदार टोंटी के वर्तनों के मध्य गंगा घाटी में अनुपस्थिति के आधार पर मध्य गंगा घाटी और निम्न गंगा घाटी की संस्कृतियों को अलग-अलग मानने की सम्मति प्रस्तुत की गयी है ।[3] लेकिन कुछ स्थानीय विभेदों को छोड़कर दोनों क्षेत्रों में एक ही संस्कृति का विस्तार मानना अधिक तर्कसंगत है ।[4]

---

1. दास गुप्ता, पी०सी०, 1964, इक्सकैवेशन्स ऐट पाण्डुराजारढिवि ।
2. इण्डियन आक्यालजी : ए रिव्यू 63-64, पृष्ठ 59-60.
3. वर्मा, वी०एस०, 1969, ब्लैक-एण्ड-रेड वेयर इन बिहार पाटरी इन ऐन्सिएण्ट इण्डिया, पृष्ठ 103-104.
4. मिश्र, वी०डी०, 1970, चैल्कोलिथिक कल्चर्स आफ ईस्टर्न इण्डिया, ईस्टर्न एन्थ्रोपोलोजिस्ट

मध्य गंगा घाटी के दक्षिण बिन्ध्य क्षेत्र में ताम्रपाषाणिक संस्कृति के प्रमाण कई स्थलों से प्राप्त हुये हैं। ककोरिया, कौडिहार, कोलडिहवा, मघा आदि प्रमुख स्थल उल्लेखनीय हैं। ककोरिया की ताम्रपाषाणिक संस्कृति के लोग बृहद् पाषाण समाधियों के भी निर्माता थे। इस क्षेत्र की पात्र परम्परायें भी मध्य गंगा घाटी की ही तरह हैं। कोलडिहवा में बहुत से पात्रों को चित्रित भी किया गया है और यहाँ से पुच्छल तथा छिद्रयुक्त वाणाग्र भी अत्यधिक संख्या में प्राप्त हुये हैं। वर्तनों के आकार भी दोनों क्षेत्रों में एक ही जैसे हैं। लघु पाषाण उपकरण जिनमें दन्तुरकटक ब्लेड भी सम्मिलित है भी दोनों ही क्षेत्रों में प्राप्त होते हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि मध्य गंगा घाटी, निम्न गंगा घाटी तथा उत्तरी बिन्ध्य क्षेत्र की ताम्रपाषाणिक संस्कृति मूल रूप से एक ही संस्कृति का विस्तार है।

मध्य गंगा घाटी की ताम्रपाषाणिक संस्कृति को चिरांद से उपलब्ध कार्बन तिथियों के आलोक में 1600 ई0पू0 से 800 ई0पू0 के मध्य रखा जा सकता है।[1] टी0एफ0 1028 - 1540 ± 90 ई0पू0, टी0एफ0 444 - 715 ± 105 ई0 पू0 के आधार पर यह तिथि क्रम निर्धारित किया गया है। सोहगौरा से भी दो कार्बन तिथियाँ 1330 ± 110 ई0पू0 और 1230 ± 130 ई0पू0 प्राप्त हुई हैं।

---

1. मण्डल, डी0, 1972, रेडियो कार्बन डेट्स एण्ड इण्डियन आर्क्यालजी, पृष्ठ 126.

मध्य गंगा घाटी में ताम्रपाषाणिक काल के बाद प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल का प्रारम्भ होता है जबकि लोहे का व्यापक प्रयोग होने लगता है और उत्तरी कृष्ण ओपदार पात्र परम्परा का प्रसार होता है । उत्तरी कृष्ण ओपदार पात्र परम्परा का सम्बन्ध गौतम बुद्ध के काल से भी है । ऊपरी गंगा में मिलने वाली चित्रित धूसर पात्र परम्परा की संस्कृति को कृष्ण के समय से सम्बन्धित किया गया है ।[1] असम्भव नहीं यदि मध्य गंगा घाटी के उस क्षेत्र में, जहाँ राम ने अपने जीवन के बहुत से क्रिया-कलाप किये, मिलने वाली मध्य पाषाणिक संस्कृति का सम्बन्ध राम के समय से हो ।

कुछ दशक पूर्व मध्य गंगा घाटी में मानव इतिहास के ज्ञान का सूत्र ऐतिहासिक काल के पहले नहीं पहुँच पाता था । गौतम बुद्ध का कार्य-क्षेत्र मुख्य रूप से मध्य गंगा घाटी थी और उनके पहले का इस क्षेत्र का इतिहास अन्धकार के आवरण से आवृत्त था । भारतीय जन-मानस के अत्यन्त आदरणीय राम ऐतिहासिक थे अथवा पौराणिक? इस बारे में अभी भी पुरातत्वविद् खोज कर रहे हैं और उनका प्रयास प्राय: निष्फल रहा है । अगर राम के जीवन काल की घटनायें ऐतिहासिक वास्तविकता थी तो यह मानना पड़ेगा कि उनका केन्द्र-बिन्दु मध्य गंगा घाटी थी।

---

1. लाल, बी०बी०, 1954 और 1955, इक्सकैवेशन एट हस्तिनापुर एण्ड अदर इक्सप्लोरेशन्स इन द अपर गंगा एण्ड सतलज बेसिन 1950-1952, <u>एन्सिएण्ट इण्डिया</u>, नं० 10 और 11, पृष्ठ 148-151.

काल और स्थान की सीमा से परे, रामायण और परम्पराओं के असीम व्यक्तित्व वाले राम को सम्भवतः इतिहास की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता । अयोध्या, श्रृंगवेरपुर तथा भारद्वाज आश्रम जैसे स्थलों के उत्खनन[1] के आधार पर भी राम की ऐतिहासिकता प्रमाणित नहीं हो सकी । जिस तरह के 'आवासीय जमाव' से पुरातत्व परिचित हैं उसी तरह का रामकालीन आवासीय जमाव मिल सकेगा, इससे बहुत सन्देह है । धनुष वाण से बाल-क्रीड़ा करते, बन बन विचरण करते, ऋषियों की रक्षा करते, धनुष वाण से आखेट करते और सीता के स्वयम्बर में सम्मिलित होते राम की जो छवि हमारे मानस-पटल पर बनती है, बिन्ध्य क्षेत्र के शिला चित्रों में धनुष वाण धारण किये मनुष्यों के बहुत से चित्र उसी छवि का स्मरण दिलाते हैं । कुछ लघु पाषाण उपकरण वाणाग्रों के रूप में ही प्रयुक्त किये जाते थे । रामकालीन धनुषों में भी वाणों की नोक इन्हीं उपकरणों से बनती रही होगी । पुरातात्विक उत्खननों और अन्वेषणों से ये उपकरण और शिलाश्रयों के चित्र मध्य पाषाण काल के अन्तर्गत आते हैं ।[2] मध्य पाषाण संस्कृति के प्रचुर अवशेष मध्य गंगा घाटी के उसी

---

1. इन स्थलों का उत्खनन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण और इन्स्टीच्यूट आफ एडवान्स स्टडी, शिमला द्वारा प्रो० बी०बी० लाल के निर्देशन में 'रामायण संस्कृति की खोज' के सन्दर्भ में किया गया है ।

2. यूरोप में शिलाश्रयों को चित्रित करने की परम्परा उच्च पूर्व पाषाण काल में ही प्रारम्भ हो गयी थी । भारत में मध्य प्रदेश के बिन्ध्य क्षेत्र में कतिपय हरे रंग से चित्रित शिला चित्रों को वी०एस० वाकंकर उच्च पूर्व पाषाण काल का मानते हैं लेकिन अधिकतर शिला चित्र मध्य पाषाण काल के ही माने जाते हैं ।

क्षेत्र से उपलब्ध हुये हैं जो राम का लीला क्षेत्र रहा होगा । कहने की आवश्यकता नहीं कि हम राम की कथा को मध्य पाषाण काल तक ले जा सकते हैं । प्राचीन कोशल क्षेत्र में जंगली अवस्था और वन्य जातियों के उद्धरण संस्कृत साहित्य में भरे पड़े हैं जो इस संभावना को बल प्रदान करते हैं ।

यद्यपि इस समय फैजाबाद जनपद में मूल आदिम जातियों के अवशेष कम हैं लेकिन प्राचीन संस्कृत साहित्य में इस क्षेत्र में आदिम लोगों के प्रमाण प्राप्त होते हैं। वाल्मीकि रामायण में वन्यस्थिति का विस्तृत विवरण है ।[1] कालिदास ने रघुवंश में दिलीप की गुरू वशिष्ठ के आश्रम की यात्रा के समय मार्ग में घोषों द्वारा उन्हें ताजा मक्खन देने का उल्लेख किया है जिसकी पहचान गोण्डा जनपद के वर्तमान ग्वारिच परगने से की गयी है । ऐसी मान्यता है कि इस क्षेत्र के जंगलों में गोंडों के अतिरिक्त और कोई नहीं था और किसी समय उत्तर भारत का अधिकांश भाग गोंड़ जाति के लोगों से बसा हुआ था । संभव है कि अन्य लोग जो यहाँ आकर बाद में बसे उन्हीं का नाम धारण कर लिया । इस क्षेत्र में गोड़िया नामक जाति अब भी विद्यमान है जो मछली आदि पकड़ने का कार्य करते हैं । संभवतः यही प्राचीन गोंड जाति के वंशज हैं । महाभारत में इस क्षेत्र में घोड़ा बेचने वाली एक टागों जाति का उल्लेख मिलता है । पहाड़ी छोटे टट्टू अब भी टांगन के नाम से जाने जाते हैं । नेसफील्ड के अनुसार "उजड़ी गद्दियों उनके नामों और उनके ~~विषय~~

---

1. पाल, जे०एन०, 1989, क्या राम प्रागैतिहासिक हैं ? _श्री राम इन आर्ट आर्क्यालजी एण्ड लिटरेचर_, पृष्ठ 196-205.

विषय में जनश्रुतियों से प्रतीत होता है कि डोमकटर, डोम्हे या डोमर किसी समय भारतवर्ष विशेषकर घाघरा के उत्तर के जिलों में अत्यधिक शक्तिशाली थे। इनमें से कुछ भाँट और ब्राह्मणों को मिलाकर हिन्दुओं के आचार-विचार से क्षत्रिय बन गये और शेष निम्न स्तर के ही बने रहे जिनमें से कुछ धरिकार या वंसफोर तथा धानुक रह गये।"[1] इसके अतिरिक्त भरोकी एक प्रबल जाति इस देश में निवास करती थी। इनमें से कुछ राजभर कहलाते हैं जिससे प्रतीत होता है कि इस जाति के लोग पहले शासक थे। इस क्षेत्र के बहुत से पुरास्थल परम्पराओं के अनुसार भर लोगों के टीले अथवा गढ़ी मानी जाती हैं। इसी प्रकार सरयू और घाघरा के संगम पर स्थित बाराह क्षेत्र को विष्णु के वाराह अवतार का स्थल माना जाता है। उल्लेखनीय है कि घाघरा नदी के प्रवाह मार्ग में समय समय पर परिवर्तन होता रहा है इसलिए सरयू नदी के उत्तर वर्तमान गोण्डा जनपद का कुछ भू-भाग इस नदी के दक्षिण में रहा होगा। फैजाबाद के समीपवर्ती जनपद गोण्डा के अन्य महत्त्वपूर्ण स्थलों - साहेतमाहेत[2] के उपरान्त मनोरामा का उल्लेख किया जा सकता है जहाँ महाराज दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया था। गोण्डा से 22 किलोमीटर उत्तर पश्चिम मनोरामा ताल स्थित है जो उद्दालक मुनि के पुत्र नचिकेता का आश्रम था। इसी



---

1. नेशफील्ड, 1883, ब्रीफ रिव्यू आफ द कास्ट सिस्टम आफ द नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध, पृष्ठ 101.



2. इस स्थल का पुरातात्विक उत्खनन भी हो चुका है, देखिए सिन्हा, के०के०, 1967, इक्सकैवेशन्स एट श्रावस्ती, 1959, वाराणसी।

तालाब से मनोरामा नदी निकलती है । संभवतः यह क्षेत्र शैव मतावलम्बियों के लिये पवित्र माना जाता है । गोण्डा जनपद में देवीपाटन नामक स्थल एक शैव सिद्धपीठ था । गोण्डा के उत्तर में सोहागपुर नामक स्थल को च्यवन ऋषि की तपस्थली माना जाता है । इसी प्रकार पारासराय नामक स्थल को पारासर की तपस्थली माना जाता है ।

गोण्डा जनपद की ही तरह फैजाबाद जनपद के समीपवर्ती बस्ती, आजमगढ़, सुल्तानपुर, बाराबंकी और गोरखपुर जनपद में भी बहुत से प्राचीन ऐतिहासिक और पौराणिक स्थल (उदाहरण के लिए बस्ती जनपद में पिपरहवा, गोरखपुर में कुशीनगर, सुल्तानपुर में कुशपुर ( आजमगढ़ में राजा नहुष का टीला ) विद्यमान हैं। सरयू के सहायक कुआनो नदी के बायें तट पर बस्ती जनपद में सिसवनिया नामक स्थल की पहचान कोशल के प्राचीन नगर सेतव्या से की गयी है जहाँ से तृतीय द्वितीय श0 ई0पू0 की लिपि वाले मिट्टी की दो मुहरें उपलब्ध हुई हैं जिन पर स्वास्तिक और उज्जैन चिन्ह बने हुए हैं ।[1]

---------::0::---------

---

1. मणि, बी0आर0, 1991, आइडेन्टीफिकेशन आफ सेतव्या, द एन्सियण्ट सिटि आफ कोशल विद सिसवानियां एण्ड इट्स टेरीकोटा आर्ट, पुरातत्व नं0 21, पृष्ठ 43-49.

## अध्याय तृतीय

## साहित्यिक विवरणों, अभिलेखों, मुद्राओं और स्मारकों के आधार पर फैजाबाद जनपद का इतिहास

## साहित्यिक विवरणों, अभिलेखों, मुद्राओं और स्मारकों के आधार पर फैजाबाद जनपद का इतिहास

ऐतिहासिक स्रोतों (साहित्य, अभिलेख, मुद्रा, स्मारक आदि) से अयोध्या और फैजाबाद के प्राचीन महत्त्व के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है । अधिकांशत: भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास का पुनर्निर्माण मुख्यत: ब्राह्मण परम्परा की पौराणिक अनुश्रुतियों, बौद्ध एवं जैन-परम्परा के साधनों तथा कतिपय विदेशी यात्रियों के विवरण के आधार पर किया जाता है परन्तु ये साक्ष्य पूर्णतया प्रामाणिक नहीं हैं और इनमें कल्पना का भी पर्याप्त अंश विद्यमान है अत: इतिहास की वास्तविकता को उजागर करने के लिए पुरातात्विक स्रोतों का सहारा लिया जाता है । वस्तुत: पुरातत्व मानव इतिहास को एक नया आयाम प्रदान करता है ।

फैजाबाद जिले में सबसे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक और सांस्कृतिक नगर अयोध्या है । प्राचीनकाल में अयोध्या के चारों ओर का प्रदेश कोशल के नाम से जाना जाता था । छठीं शताब्दी ई0पू0 में कोशल उत्तर भारत का महत्त्वपूर्ण महा-जनपद था । साहित्य में अयोध्या और कोशल दोनों का उल्लेख मिलता है । सर्वप्रथम अयोध्या का उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है ।[1] उसमें इसे देवताओं द्वारा निर्मित तथा स्वर्ग की तरह

---

1. अष्ट चक्रा नव द्वारा देवानां पूरयोध्या ।
   तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ॥

   – <u>अथर्ववेद</u>, 10.2, श्लोक 21.

समुद्र बताया गया है । ऐतरेय ब्राह्मण और शांखयायन श्रौतसूत्र में अयोध्या को केवल एक गाँव बताया गया है ।[1] शतपथ ब्राह्मण में अयोध्या को वैदिक आर्यों[2] और व्याकरण वेत्ताओं का एक देश बताया गया है । पाणिनि के एक सूत्र में उसका उल्लेख है ।[3] अयोध्या और कोशल का विस्तृत वर्णन वाल्मीकि रामायण में मिलता है ।[4] महाभारत में इसे पुण्य लक्षणा कहा गया है । आर०जी० भण्डारकर के अनुसार बिन्ध्य पर्वत के पास के देश का नाम कोशल था ।[5] लोक-परम्परा के अनुसार घाघरा और गंगा के मध्यवर्ती क्षेत्र को कोशल देश के नाम से जाना जाता था । रामायण काल में इसकी उत्तरी सीमा हिमालय और दक्षिणी सीमा स्यन्दिका या सई नदी को बताया गया है ।[6] बौद्ध युग में यह दो भागों में बंटा था । घाघरा

---

1. ला, बी०सी०, 1943, हिस्टारिकल जागर्फी आफ ऐन्सियण्ट इण्डिया, पृ० 67.
2. ला, बी०सी०, 1943, ट्राइब्स इन एन्सियण्ट इण्डिया, पृष्ठ 34.
3. वृद्धेत्कोसलाजादाञ् यङ्. ॥ 4/1 ॥ 171 ॥
4. कोसलानाम विदितः स्फीतो जनपदो महान् ।
   निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान् ॥
5. भण्डारकर, आर०जी०, 1975, अरली हिस्ट्री आफ द दक्कन, पृष्ठ 15.
6. डे, नन्दलाल, 1990, (द्वितीय संस्करण), दि जियोग्राफिकल डिक्शनरी आफ आफ एन्सियण्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया, पृष्ठ 14.

नदी के उत्तर का भाग उत्तर कोशल के नाम से जाना जाता था, जिसकी राजधानी श्रावस्ती थी। दक्षिणी भाग का नाम दक्षिण कोशल था, जिसकी राजधानी अयोध्या थी।[1] साकेत का विस्तार दक्षिण में गंगा नदी तक था। कुछ लोग श्रावस्ती को ही सम्पूर्ण कोशल की राजधानी मानते हैं। कर्नल वोल्ट ने प्रतापगढ़ जनपद के तुषारन-विहार नामक स्थल का तादात्म्य साकेत से किया है, जो कोशल देश में था। कनिंघम के अनुसार कोशल घाघरा नदी द्वारा दो भागों में विभक्त था। उत्तरी भाग को उत्तर कोशल और दक्षिणी भाग को बनौध कहते थे। उत्तर कोशल की राजधानी श्रावस्ती के अवशेष गोण्डा जनपद के साहेत-माहेत नामक स्थान पर मिले हैं।[2] बनौध की राजधानी अयोध्या थी।[2] ह्वेनसांग ने इसकी परिधि चार हजार ली ‡1067 किमी0‡ बताया है।

कोशल के पूर्वी और पश्चिमी सीमा का निर्धारण करने के लिए कोई स्पष्ट प्राकृतिक आधार नहीं है। सम्भवतः मिथिला और कोशल के बीच में और कोई राज्य नहीं था। कोशल देश की पूर्वी सीमा गण्डक नदी को माना जा सकता है। कोशल देश का पूर्वी भाग सरयू के किनारे किनारे सरयू और गंगा के संगम तक विस्तृत माना जा सकता है। कोशल देश की पश्चिमी सीमा पांचाल देश से मिली हुई थी। इस क्षेत्र की नदी रामगंगा को हम कोशल की पश्चिमी सीमा रेखा मान सकते हैं।

---

1. पूर्वोद्धृत।

2. कनिंघम, ए0, 1963, दि एन्सियण्ट जाग्रफी आफ इण्डिया, पृष्ठ 408.

गौतम बुद्ध का कार्यक्षेत्र होने के कारण कोशल देश का बौद्ध परम्परा में विशेष महत्त्व है क्योंकि गौतम बुद्ध कपिलवस्तु में उत्पन्न हुए थे, श्रावस्ती और अयोध्या में निवास किये थे और कुशीनगर में उन्हें निर्वाण प्राप्त हुआ था । ये सब स्थल कोशल में ही विद्यमान हैं ।

पारम्परिक पौराणिक इतिहास

पुराणों और महाकाव्यों के अनुसार वैवस्वत मनु इस महादेश के प्रथम राजा थे और उन्होंने अयोध्या नगर बसाया था ।[1] मनु के पुत्र इक्ष्वाकु प्रसिद्ध राजा थे जिसके समय कोशल की महत्ता बढ़ी । इस राजवंश में अनेक महत्त्वपूर्ण शासक हुए । ऐसा माना जाता है कि इस वंश के 125 राजाओं ने अयोध्या पर शासन किया जिसमें 93 महाभारत युद्ध के पूर्व हो चुके थे और शेष बाद में हुए । इस राजवंश की मुख्य शाखा का अन्त चतुर्थ शताब्दी ई0पू0 में हुआ । महाभारत युद्ध के समय यहाँ का राजा वृहद्वल था जो महाभारत युद्ध में अभिमन्यु द्वारा मारा गया था । कीथ के अनुसार महाकाव्यों के काल में अयोध्या के आसपास मध्य गंगा घाटी में तैत्तरीय संहिता के रचनाकार (तैत्तरीय लोग) पाये जाते थे ।[2] ऐतरेय ब्राह्मण में अयोध्या का उल्लेख मिलता है ।[3]

---

1. वायुपुराण के अनुसार राम के पुत्र कुश कोशल देश में बिन्ध्य पर्वत पर कुशस्थली या कुशावती नाम की राजधानी में राज्य करते थे ।

2. विन्टरनित्ज, एम0, 1927, ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर, वैलूम 1, कलकत्ता ।

3. शर्मा, जी0आर0, 1960, दि इक्सकैवेसन एट कौशाम्बी (1957-59) इलाहाबाद ।

कहा जाता है कि इस वंश के छठें राजा पृथु के नाम पर इस धरती का नाम पृथ्वी पड़ा, जिन्होंने मैदानों को समतल किया । उनके पौत्र श्रावस्त ने श्रावस्ती नगर बसाया जो बाद में उत्तर कोशल की राजधानी बनी ।[1] कुछ पीढ़ी बाद मान्धाता इस वंश का शासक हुआ । ऐसा कहा जाता है कि उसके शासन काल में सूर्य कभी नहीं डूबता था ।

मान्धातृ के पुत्र पुरुकुत्स ने गन्धर्वों को हराया और नाग राजकुमारी से विवाह किया । उसका पौत्र अनरण्य एक युद्ध जो रौनाही नामक स्थल पर हुआ था, में मारा गया ।रौनाही अयोध्या से लगभग 24 किलोमीटर दूर है ।

इस वंश के 31वें राजा महान सत्यवादी हरिश्चन्द्र हुए । 37वें राजा बाहु के शासनकाल में शत्रुओं ने काफी उपद्रव किया जिसके कारण उन्हें राज्य छोड देने के लिए बाध्य होना पड़ा । उनके मरणोपरान्त पैदा हुए पुत्र सगर ने शत्रु हैहयों और तालजंघियों को पराजित किया तथा सीमान्त में रहने वाली अनार्य जातियों को अपनी बहादुरी से प्रभावित किया । उन्होंने अश्वमेध यज्ञ भी किया। उनके पुत्रों ने एक विशाल समुद्र का निर्माण किया जिसका नाम उन लोगों ने सागर

---

1. मजूमदार, आर0सी0 एण्ड पुसालकर ।सं0।, 1951, द हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल वैलम 1, वैदिक एज, पृष्ठ 291.

रखा । सगर के प्रपौत्र भगीरथ अपनी तपस्या द्वारा गंगा को पृथ्वी पर लाये । भगीरथ के प्रपौत्र अम्बरीश के समय अयोध्या को पुन: गौरव प्राप्त हुआ । वे महान दानी और विष्णु के महान भक्त थे । उनके प्रपौत्र ऋतुपर्ण विदर्भ के महान शासक नल के समकालीन थे । ऋतुपर्ण के प्रपौत्र सुदास थे जिसकी पहचान प्राय: वैदिक काल के सुदास से की जाती है जिसने दासराज्ञ युद्ध में विजय प्राप्त की ।[1] इसी वंश में आगे चलकर महान राजा रघु हुए जिसके नाम पर इस वंश का नाम रघुवंश पड़ा जिसने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतने का श्रेय प्राप्त किया और विश्वजित यज्ञ किया । रघु के पौत्र थे अयोध्या के राजा दशरथ । हिन्दुओं के पूज्य देवता राम तथा उनके भाई भरत, लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न इन्हीं के पुत्र थे । राम ने इस काल में श्रीलंका तक आर्य सभ्यता का प्रसार किया । राम ने बहुत कुशलतापूर्वक शासन किया और कोशल राज्य अपने मर्यादा और उत्कर्ष के चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया । इसके बाद रामराज्य भारतवर्ष के लिए आदर्श बन गया । इस युग की कहानी को वाल्मीकि द्वारा अमरत्व प्राप्त हुआ और राम कथा पर आधारित रामायण महाकाव्य ने अत्यधिक ख्याति प्राप्त किया ।

राम के शासनकाल के बाद विस्तृत कोशल राज्य राम के पुत्रों और उनके के मध्य विभाजित हो गया । राम के पुत्र कुश अयोध्या की गद्दी लव राज्य के उत्तरी भाग जिसकी राजधानी श्रावस्ती थी - के

---------

1. पृष्ठ 289.

शासक बने । कुश ने शीघ्र अपनी राजधानी कुशस्थली में स्थानान्तरित कर लिया जिसको उन्होंने स्वयं विन्ध्य श्रेणी के पास बसाया था । इससे अयोध्या उजड़ सा गया । यद्यपि कुश ने इसे सुधारने की कोशिश की किन्तु यह नगर पुनः अपने पुराने गौरव को न प्राप्त कर सका ।[1]

इस वंश के 81वें और कुश के पीढ़ी के 17वें राजा हिरण्याभ कौशल्य प्रतापी राजा था । इक्ष्वाकु वंश के 93वें पीढ़ी में बृहद्बल अयोध्या के अन्तिम प्रसिद्ध राजा थे, वे महाभारत युद्ध में मारे गये ।[2] पाँच पीढ़ी के बाद दिवाकर नामक एक राजा अयोध्या पर राज्य करते थे । इस वंश के अन्तिम राजा सुमित्र थे जिसके शासनकाल में कलियुग का आगमन हुआ और इस वंश का अन्त हो गया ।

उल्लेखनीय है कि महाभारत युद्ध के बाद के राजाओं की सूची में शाक्य, शुद्धोधन, सिद्धार्थ और राहुल का नाम सम्मिलित किया जाता है जो प्रसनेजित के पहले हुए थे । बौद्ध स्रोतों से ज्ञात होता है कि प्रसनेजित महाकोशल के पुत्र और बुद्ध के समकालीन थे । इस प्रकार पौराणिक सूची में कुछ ऐसे राजाओं और राजकुमारों का नाम है जो वास्तव में ऐतिहासिक व्यक्ति थे[3] पर पौराणिक सूची के

------------------

1. ला, बी0सी0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 49-50.

2. पार्जिटर, एफ0ई0, 1913, <u>पुराण टेक्सट्स आफ दि डायनेस्टीज आफ दि कलि एज</u>, पृष्ठ 60.

3. रायचौधरी, एच0सी0, 1953, <u>पोलिटिकल हिस्ट्री आफ एन्सियण्ट इण्डिया</u>, पृष्ठ 103-104.

सभी राजाओं का अस्तित्व सिद्ध करना सरल नहीं है ।

<u>महावीर और बुद्ध के समय कोशल</u> :

बौद्ध स्रोतों के अनुसार काशी और कोशल में अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए प्राय: युद्ध होते रहते थे । ईशा पूर्व छठीं शताब्दी के प्रारम्भ में कोशलके नरेश महाव।शल ने काशी को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया ।

उत्तरी कोशल की राजधानी श्रावस्ती और दक्षिणी कोशल की राजधानी ~~के अतिरिक्त~~ कुशावती थी । साकेत का भी राजधानी के रूप में प्राय: उल्लेख है, जिसकी पहचान अयोध्या से की जाती है। किन्तु बुद्ध के समय अयोध्या और साकेत का अलग-अलग उल्लेख इसमें संदेह पैदा करता है । संभवत: इस काल तक अयोध्या का महत्त्व समाप्त हो चुका था जबकि साकेत और श्रावस्ती की गणना भारतवर्ष के छ: बड़ी नगरियों में की जाती थी ।

काशी की विजय ने कोशल को एक शक्तिशाली राज्य बना दिया । प्रसनेजित के शासनकाल के अन्त में मगध नरेश बिम्बिसार के उत्तराधिकारी अजातशत्रु से प्रसनेजित का युद्ध हुआ । अन्त में दोनों में संधि हो गयी । प्रसनेजित का उत्तराधिकारी विदूदभ हुआ । इसके बाद कोशल का पतन होने लगा और चौथी शताब्दी ईशा पूर्व में नन्द शासक महापद्मनन्द के इसे अपने साम्राज्य में मिला लिया।[1]

---

1. ऐसा कहा जाता है कि अयोध्या के मणि पर्वत नामक स्थल से नसीरुद्दीन हैदर के समय में नन्दों का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था । यह अभिलेख लखनऊ भेजा गया था लेकिन अब इसका कुछ पता नहीं है । देखिये पी0 कार्नेगी, 1870, <u>ए हिस्टारिकल स्केच आफ तहसील फैजाबाद</u>, पृष्ठ 24.

कथा - सरित - सागर में अयोध्या में नन्द शिविर का उल्लेख इस बात की पुष्टि करता है ।

नन्दों के बाद मगध पर मौर्यों का शासन स्थापित हुआ । 189 ई0पू0 के लगभग अन्तिम मौर्य शासक वृहद्रथ की हत्या करने के बाद पुष्यमित्र शुंग ने शुंग वंश की स्थापना की । साकेत शुंगों के आधिपत्य में आ गया । यद्यपि शुंगों की राजधानी पाटलिपुत्र थी किन्तु साकेत का भी इस युग में महत्त्व था । यवन आक्रमण के सन्दर्भ में गार्गी संहिता में स्पष्ट उल्लेख है कि दुष्ट यवन साकेत, पांचाल और मथुरा जीतते हुए पाटलिपुत्र पहुँच गये । पतंजलि के महाभाष्य के टीकाकार कैय्यट के व्याख्या के आधार पर इस प्रकार के निष्कर्ष निकाले गये हैं कि पुष्यमित्र शुंग ने अयोध्या में यवनों के आक्रमण के बाद एक रक्षा प्राचीर का निर्माण किया था ।[1] अयोध्या के पास रानोपाली में एक नये मन्दिर की डेहरी पर धनदेव का एक लेख लगा है[2] जिससे ज्ञात होता है कि पुष्यमित्र शुंग ने दो अश्वमेध यज्ञ किये और अपने पिता फल्गुदेव के लिए एक महल बनवाया । यह लेख संस्कृत में है जो अभी तक ज्ञात इस भाषा के प्राचीन अभिलेखों में एक है । यह लेख प्रथम श0ई0पू0 का प्रतीत होता

-----------------

1. राय, भारती कुमारी, 1987, दि प्राकार आफ अयोध्या एज नोटिस्टड बाई पतंजलि, _हिस्ट्री एण्ड कल्चर : पी0पी0 सिन्हा फैलिसिटेशन वैलूम_ (सं0 भगवन्त सहाय), पृष्ठ 101-103.

2. _इपिग्राफिया इण्डिका_, वाल्यूम 20, पृष्ठ 54-57; सरकार, डी0सी0, 1965, _सेलेक्ट इन्सक्रिप्सन : बियरिंग आन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलिजेशन_, वैलूम 1, पृष्ठ 96,

कोसलाधिपेन द्विरश्वमेध याजिनः सेनापते ।
पुष्यमित्रस्य षष्ठेन कौशिकी पुत्रेण धन ---
धर्मराज्ञा पितः फल्गदेवस्य केतनं कारितं ।

है । धनदेव शुंग वंश के कोशल शाखा का राजकुमार प्रतीत होता है । यह वंश मालदेव द्वारा स्थापित किया गया था, जिसने वाणभट्ट के अनुसार शुंग शासक सुमित्र की हत्या की थी । अयोध्या के आस-पास से जो सिक्के पाये गये हैं, वे शायद मालदेव के हैं । धनदेव के अभिलेख से लगता है कि कण्वों द्वारा शुंगों के विनाश के बाद की उनकी मूल शाखा अयोध्या में बनी रह गयी । संभवतः अयोध्या ही उनका मूलस्थान था ।[1] पुरालिपि के आधार पर डी०सी० सरकार[2], ए०एच० दानी[3] और टी०पी० वर्मा[4] ने इस अभिलेख को प्रथम शताब्दी ई०पू० के प्रारम्भ में रखा है लेकिन बी०बी० लाल और के०के० शर्मा ने इस अभिलेख के पुरालिपीय विशेषताओं के तुलनात्मक अध्ययन और ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर धनदेव का समय प्रथम शताब्दी ई०पू० के मध्य में निर्धारित किया है ।[5]

------------------

1. वर्मा, ठाकुर प्रसाद, 1981, उ०प्र० के अभिलेख, उत्तर प्रदेश पुरातत्व विशेषांक, पृष्ठ 37.
2. सरकार, डी०सी०, 1965, पूर्वोद्धृत
3. दानी, ए०एच०, 1963, इण्डियन पैलियोग्राफी,
4. वर्मा, टी०पी०, 1971, दि पैलियोग्राफी आफ ब्राह्मी स्क्रिप्ट इन नार्थ इण्डिया (236 ई०पू० से 200 ई० तक)
5. लाल, बी०बी० और के०के० शर्मा, 1990, दि डेट आफ किंग धनदेव आफ कोशल: ए रि-इक्जामिनेशन आफ दि पैलियोग्राफिक एण्ड हिस्टारिकल इविडेन्स, पुरातत्व नं० 19, पृष्ठ 38-42.

1865 ई0 में अयोध्या के पास ताँबे के सिक्कों का भण्डार मिला था। ये सिक्के तीन वर्गों में विभाजित किये गये हैं। इसमें एक प्रकार के सिक्के शायद उस शासक के हैं जिसकी राजधानी अयोध्या थी।[1] ऐसा सुझाव दिया गया है कि प्रथम वर्ग के सिक्के नगर के स्थानीय सिक्के हैं जो राजवंशीय सिक्कों से भिन्न हैं। इन सिक्कों पर कुछ लिखा नहीं है और संभवतः ये ई0पू0 तीसरी शताब्दी से संबंधित हैं। दूसरे प्रकार के वर्गाकार सिक्के हैं जो स्पष्ट रूप से साँचे में ढाले गये हैं। इन सिक्कों के बनावट और प्रकार पर विदेशी चिन्ह नहीं दिखायी पडता है। सिक्के के पुरो भाग पर चिह्न के सम्मुख एक साँड या हाथी जो प्रायः स्पष्ट नहीं होता, निर्मित है। पृष्ठभाग पर पाँच या छः चिह्नों के समूह, वेदिका से घिरा एक वृक्ष, स्वस्तिक, चार नन्दिपदों का एक समूह, एक छोटा उज्जैन चिह्न, एक नदी या सर्प और दूसरे विचित्र चिह्न हैं।[2] ये सिक्के यह प्रमाणित करते हैं कि अयोध्या पर एक वंश ने लगभग दूसरी या पहली शताब्दी ई0पू0 में शासन किया। इन सिक्कों पर शासकों के लिखित नाम हैं - मूलदेव, वायुदेव, विशाखदेव, धनदेव, शिवदत्त और नरदत्त। इन शासकों का वास्तविक क्रम ज्ञात नहीं है किन्तु शायद ये शुंगों की

---

1. एलन, जॉन, 1936, कैटलाग आफ दि क्वाइन्स आफ एन्सियण्ट इण्डिया (इन दि ब्रिटिश म्यूजियम)

कोशल शाखा से सम्बन्धित थे और कुछ समय तक स्वतंत्र शासन किये थे ।[1] अयोध्या में शुंग वंश निश्चित रूप से कुषाणों के आगमन के समय लुप्त हो चुका था और वह कुषाणों के अधीन आ गया था ।

तृतीय प्रकार के सिक्के बाद के हैं । ये गोलाकार हैं और इनके पुरोभाग पर लम्बवत खड़े दण्ड या भाले के सम्मुख एक सांड की आकृति और पृष्ठभाग पर एक चिड़िया जो मुर्गी के समान है, एक नदी या सर्प सहित एक खजूर का पेड़ और कभी कभी नन्दिपद दर्शाया गया है । इस श्रृंखला के शासकों के नाम हैं सत्यमित्र, आयुमित्र, संघमित्र, कुमुदसेन, विजयमित्र, अजवर्मन और देवमित्र । इन शासकों का क्रम ज्ञात नहीं है और यह भी स्पष्ट नहीं है कि ये एक ही वंश से सम्बन्धित थे । अधिक सम्भव है कि ये कुषाणों के सामन्त थे और इनका शासन गुप्तवंश के उदय होने पर समाप्त हुआ ।[2]

---

1. मेनेण्डर के बाद साकेत में सात राजा राज्य करेंगे, युग पुराण के इस कथन की पुष्टि मुद्रा सम्बन्धी साक्ष्यों से भी होती है । अयोध्या राजाओं के सिक्के मुख्यतः मूलदेव, वासुदेव, विशाखदेव, धनदेव, शिवदत्त, नागदत्त और पाठदेव के द्वितीय श०ई०पू० के अन्त और प्रथम शताब्दी ई०पू० के पहले प्राप्त हुए हैं - देखिए - एलन, जे०, 1975, ।रिप्रिन्ट। कैटलाग आफ क्वाइन्स आफ एन्सियण्ट इण्डिया, प्लेट नं० 88-89.

2. आर०सी० मजूमदार ।सं०। 1951, द हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल, वैलूम 2, पृष्ठ 174.

गुप्तकाल :

ऐसी मान्यता है कि 5वीं शताब्दी में अयोध्या गुप्त साम्राज्य का एक प्रमुख नगर था जो पाटलिपुत्र से भी अधिक महत्त्व का था । गुप्त वंश के तीसरे शासक चन्द्रगुप्त प्रथम के साम्राज्य में साकेत, प्रयाग और मगध शामिल था ।[1] चन्द्र-गुप्त प्रथम के राजा-रानी प्रकार के सिक्के फैजाबाद जिले के अयोध्या और टाण्डा से प्राप्त हुये हैं । यदि गया ताम्रपत्र पर विश्वास किया जाय तो यह ज्ञात होता है कि अयोध्या में समुद्रगुप्त का सैनिक शिविर था और उसने अश्वमेध यज्ञ किया था । यद्यपि अधिकांश विद्वान इस ताम्रपत्र को जाली बताते हैं । कालिदास ने रघुवंश में उत्तरकोशल का उल्लेख किया है कि गुप्त वंश की राजधानी अयोध्या थी[2] किन्तु इस सन्दर्भ में विद्वानों में मतभेद है । फैजाबाद के करमदण्डा नामक स्थान के पास बराधीडीह से गुप्त वंश के शासक कुमारगुप्त के काल का एक लेख मिला है, जो शिवलिंग के अधोभाग पर उत्कीर्ण है । इस प्रतिमा की स्थापना कुमारगुप्त के

---

1. क्लासिकल एज, पृष्ठ 174.

   अनुगंगा प्रयागं च साकेतं मगधांस्तथा ।

   एतान जनपदान सर्वान् भोक्ष्यन्ते गुप्तवंशजा: ॥ वायुपुराण ॥

2. रघुवंश के पाँचवें सर्ग में -

   पितुरनन्तरमुत्तर कोशलान् ॥

   रघुवंश के दसवें सर्ग में भी -

   श्लाघ्यं दधत्युत्तर कोशलेन्द्रा: ॥

मंत्री पृथ्वीषेण ने की थी ।[1]

चीनी यात्री फाह्यान ने अवध प्रदेश से गुजरते हुए शा-चि-नगर देखा था जहाँ एक स्तूप था । कुछ विद्वान शा-चि-का समीकरण साकेत से करते हैं किन्तु कुछ विद्वान इस समीकरण में संदेह व्यक्त करते हैं ।

गुप्तोत्तर काल :

कालान्तर में उत्तर भारत पर मौखरियों का अधिकार हो गया । उन्होंने अपनी राजधानी कन्नौज में बनायी । मौखरियों के कुछ सिक्के फैजाबाद जिले के इसी तहसील में भिटौरा से मिले हैं । कुछ सिक्के अयोध्या में रिवेट कारनाक को भी मिले थे ।[2] इसमें से अधिकांश सिक्के शीलादित्य प्रतापशील से सम्बन्धित बताये गये हैं । इसे रिचर्ड वर्न ने हर्षवर्द्धन से समीकृत किया है ।[3] यदि यह अनुमान ठीक है तो अयोध्या हर्ष के अधीन था । हर्ष के शासनकाल में ह्वेनसांग भारत आया था । कन्नौज की यात्रा करते हुये उसने दक्षिण में गंगा को पार

---

1. सरकार, डी0सी0, 1965, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 289-290.

2. आर्कलाजिकल सर्वे रिपोर्ट, वैलूम-9, पृष्ठ 27; त्रिपाठी, आर0एस0, 1942, हिस्ट्री आफ एन्सियण्ट इण्डिया, पृष्ठ 186.

3. मुखर्जी, आर0के0, 1926, हर्ष, पृष्ठ 116-117, भी इस मत से सहमत हैं ।

किया और आ-यु-तो देश पहुँचा ।[1] इस देश की राजधानी जो नदी से लगभग 1.5 किलोमीटर दक्षिण थी - प्राय: उसकी पहचान अयोध्या से की जाती है, किन्तु कनिंघम ने दिशा और दूरी की कठिनाइयों के कारण इसे कोई दूसरा स्थान माना है ।[2] ह्वेनसांग के अनुसार आ-यु-तो समृद्ध प्रदेश था । यहाँ लगभग 100 मठ थे और लगभग 3000 महायानी और हीनयानी भिक्षु रहते थे । यहाँ 10 देव मन्दिर भी थे ।

हर्ष (1606-647) की मृत्यु के बाद उसके राज्य में अव्यवस्था फैल गयी । बाद में कन्नौज के यशोवर्मन[3] (700-740) ने यहाँ सुव्यवस्था स्थापित की । उसके दरबारी कवि वाक्पति राज के "गौडवहो" से ज्ञात होता है कि वह अपने विजय अभियान में अयोध्या आया था । इस प्रकार आठवीं श0 में भी अयोध्या ने अपना महत्त्व नहीं खोया था । यशोवर्मन के उत्तराधिकारियों के बारे में हमें निश्चित रूप से कुछ ज्ञात नहीं है ।

-------------------

1. वाटर्स, थामस, 1904-1905, आन युवानच्वांग्स ट्रेवल्स इन इण्डिया, सम्पादित द्वारा टी0डब्ल्यू0 राइजडेविड्स और एस0डब्ल्यू0 वुसेल, दो खण्ड ।

2. कनिंघम, ए0, 1924, एन्सियण्ट जागर्फी आफ इण्डिया, पृष्ठ 68.

3. त्रिपाठी, आर0एस0, 1937, हिस्ट्री आफ कन्नौज, पृष्ठ 197.

<u>गुर्जर प्रतिहार और गहड़वाल</u> :

नवीं श0 की ई0 के प्रारम्भ में अवध का सम्पूर्ण भू-भाग गुर्जर प्रतिहारों के अधीन आ गया किन्तु प्रतिहारों की शक्ति क्षीण होने पर अवध प्रदेश अनेक छोटे छोटे भू-भागों में बंट गया । इसमें अयोध्या के श्रीवास्तव भी सम्मिलित थे जो सम्भवतः घाघरा के उस पार के श्रावस्ती क्षेत्र से सम्बन्धित थे । यह कहा जाता है कि उन्होंने त्रिलोकचन्द्र के नेतृत्व में 918 ई0 में अयोध्या पर अधिकार किया । बाद में इस क्षेत्र पर कन्नौज के गहड़वालों का आधिपत्य स्थापित हो गया । गहड़वाल वंश का संस्थापक चन्द्रदेव ।1090-1103। था । वसही लेख में उसे काशी, कोशल, कन्नौज और इन्द्रप्रस्थ का शासक बताया गया है ।[1] इस वंश का शासक जयचन्द्र 1194 ई0 में मुहम्मद गोरी से चन्दावर में युद्ध करते हुए मारा गया । उसकी मृत्यु के बाद कन्नौज तुर्कों के अधिकार में आ गया और इसी के साथ अयोध्या पर भी तुर्कों का आधिपत्य हो गया ।[2]

<u>भर</u> :

स्थानीय परम्परा के अनुसार अवध का अधिकतर भू-भाग वस्तुतः भरों के कब्जे में था जो यहाँ के आदिम निवासी थे और जिन्हें राजपूतों ने पराजित किया

---

1. त्रिपाठी, आर0एस0, पूर्वोधृत, पृष्ठ 302.

2. पूर्वोधृत ।

था । उनके उत्पत्ति और प्रारम्भिक इतिहास के बारे में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है । विस्तृत भर राज्य का साक्ष्य इस जनपद के भरों से सम्बन्धित प्राचीन टीलों और अनेक गाँवों से एकत्रित किया जा सकता है ।[1] भरों की किसी विशेष राजधानी से सम्बन्धित यहाँ कोई पौराणिक कथा नहीं है किन्तु यह बताया गया है कि यह प्रदेश भर सरदारों के शासन के अन्तर्गत था जो कुसवन्तपुर या कुसपुर में रहते थे । यह सुल्तानपुर का पुराना नाम था । फैजाबाद जिले के विभिन्न क्षेत्रों में भर अब भी निवास करते हैं ।

<u>राजपूत</u> :

कालान्तर में राजपूत सरदारों ने भरों को पराजित कर इस क्षेत्र पर अपना अधिकार जमा लिया । पूरे अवध प्रदेश में इस प्रकार की कहानियाँ प्रचलित हैं कि राजपूतों ने पहले भरों के यहाँ नौकरी की और बाद में उन्हें अपदस्थ कर इस भू-भाग पर अधिकार कर लिया । कुछ लोग यह भी मानते हैं कि राजपूत भरों के सुधरे हुए रूप हैं । यह भी सम्भव है कि भरों की पराजय दिल्ली के सुल्तानों की सेना से हुई और राजपूत मुस्लिम दुर्ग रक्षकों के संरक्षण में अयोध्या के आसपास बस गये ।

---

1. फ्यूरर, ए०, 1891, <u>दि मानूमेण्टल एण्टीक्विटी एण्ड इन्सक्रिप्सन इन दि नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज एण्ड अवध</u>, पृष्ठ 300-302.

<u>मध्यकालीन इतिहास</u> :

अवध या अयोध्या पर प्रथम मुस्लिम आक्रमण सैयद सालार मसूद गाजी, जिसे गाजी मियाँ के नाम से जाना जाता है, ने किया । वह महमूद गजनवी का भांजा था । मिरातुल मसौदी के अनुसार - अब्दुल रहमान चिस्ती ने 1030 ई० के पूर्व अवध पर अधिकार कर लिया । पुराने लखनऊ मार्ग पर अनेक मकबरे हैं जो कि क्षेत्रीय मुसलमानों के अनुसार सैयद सालार के समर्थकों की हैं । यहाँ रौहानो के पास एक पुरानी मस्जिद दो शहीदों - औलिया और माकन शहीद की कब्र है । सन् 1033 में सैयद सालार बहराइच में मारा गया जहाँ उसकी मज़ार बनी है । गाजी मियाँ के नाम से प्रसिद्ध इस मज़ार पर मेला लगता है । 1194 ई० में मुहम्मद गोरी द्वारा कन्नौज जीत लेने पर अवध मुसलमानों के आधीन हो गया । ऐसा माना जाता है कि उस समय यहाँ शाहजुरान गोरी रहता था । उसके मकबरे का अनुमान शाहजुरान के टीले से होता है ।[1]

<u>दिल्ली सल्तनत</u> :

यह स्पष्ट नहीं है कि दिल्ली सल्तनत में अयोध्या कब अवध सूबे की राजधानी बनी । मिनहाजसिराज ने अवध के सूबेदारों का ब्यौरा दिया है जो 1206 से 1260 के बीच नियुक्त हुए थे । इनके कार्यों के वर्णन से स्पष्ट है कि तुर्क शासनकाल के प्रारम्भ में क्षेत्रीय हिन्दू राजा प्रभावशाली थे । सूबेदार अवध को पूर्व विस्तार करने के लिए आधार के रूप में प्रयोग करते थे । इनमें से कुछ बहुत शक्ति

-------------------

1. नेविल, एच0आर0, 1905, <u>फैजाबाद : ए गजेटियर</u>, पृष्ठ 149-150.

अर्जित कर लेते थे और कभी-कभी वे सुल्तानों के लिए चुनौती बन जाते थे। अतः अक्सर सुल्तान सूबेदारों को स्थानान्तरित करते रहते थे।

पूर्व तुर्की शासनकाल में सूबेदार के रूप में 1226 ई0 में नियुक्त नासिरूद्-दीन महमूद ने जो इल्तुतमिश का पुत्र था - अपने संगठनात्मक योग्यता और बहादुरी का प्रदर्शन किया। उसने स्थानीय भर सरदारों को पराजित किया जिन्होंने तुर्की आक्रमणकारियों के बढ़ते खतरे को टालने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दिया था।

जियाउद्दीन बरनी के अनुसार सुल्तान नासिरूद्दीन महमूद के शासनकाल में अवध में डकैतों ने काफी उपद्रव खड़ा कर दिया था किन्तु शासन की बागडोर संभालने के बाद बलबन ने डकैतों का दमन किया। काफी समय तक एक सूबे के रूप में अवध का महत्त्व बना रहा किन्तु जब 1290 ई0 में जलालुद्दीन खिलजी दिल्ली का सुल्तान बना, तो उसने अपने भतीजे अलाउद्दीन खिलजी को अवध का सूबेदार नियुक्त किया। अलाउद्दीन अपना अधिकांश समय कड़ा में बिताने लगा और अवध का महत्त्व घट गया।

मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में मालिक एनिलमुल्क-मुल्तानी लम्बे समय तक अवध और जफराबाद का गवर्नर रहा। उसने स्थानीय जनता से सहयोग प्राप्त किया और अवध क्षेत्र में शान्ति और समृद्धि की स्थापना की। जब दिल्ली और दोआब के अधिकांश क्षेत्र में अकाल पड़ा हुआ था तो राहत के लिए अवध क्षेत्र से रसद

भेजी गयी थी । सुल्तान ने स्वयं दिल्ली छोड़ दिया था और अवध से सुगमतापूर्वक रसद प्राप्त करने के लिए फर्रुखाबाद जिले के स्वर्गदारी नामक गाँव में अस्थायी तौर पर निवास करता था ।

1394 ई0 में मालिक उस शर्क ख्वाजा-ए-जहाज ने जौनपुर में शर्की साम्राज्य की स्थापना की जिसने दिल्ली के सुल्तानों की तुलना में अवध पर अच्छे ढंग से शासन किया । इब्राहिम शाह शुर्की के शासनकाल में लतीफ-ए-अशर्फी और अनेक पौराणिक कथाओं के लेखक - मीर सैयद मुहम्मद अशरफ जहाँगीर सिमनामी जौनपुर से किछौछा गये और 25 जुलाई 1405 को यहाँ प्राण त्याग दिया । उनके बारे में कहा जाता है कि उन्होंने स्थानीय जनता पर अपना काफी अधिकार जमा लिया था । अफगान शासक बहलोल लोदी ने शर्की साम्राज्य को जीतकर दिल्ली सल्तनत में मिला लिया ।

<u>मुगल</u> :

बाबर के आक्रमण के समय इब्राहिम लोदी दिल्ली का सुल्तान था । बाबर के आक्रमण के पूर्व सन्ध्या पर वायजिद फार्मूली ने अवध को अपने कब्जे में ले लिया । पानीपत के युद्ध ।1526 ई0। में इब्राहिम लोदी की मृत्यु के बाद वह अनेक अफगान सरदारों के साथ बाबर से मिल गया और अवध का अत्यधिक राजस्व वाला हिस्सा बाबर के द्वारा उसे सौंपा गया किन्तु शीघ्र ही वायजिद ने अपने नये मालिक के विरुद्ध विद्रोह कर दिया । बाबर स्वयं अवध ।अयोध्या। गया और वहाँ कुछ दिनों तक ठहरा । वह वहाँ के बगीचों, बहते हुए जल, भव्य भवनों, वृक्षों - विशेषकर आम के वृक्षों, रंग-बिरंगों पंखों वाली विभिन्न प्रकार की चिड़ियों

से अत्यधिक प्रभावित हुआ । उसने बाकी [बकी] ताशकन्दी को अवध का गवर्नर नियुक्त किया जिसने बागी सरदारों को पराजित किया । उसके शासनकाल में बकी ने अयोध्या में 1528 ई0 में एक मस्जिद का निर्माण किया । मस्जिद के पास के शिलालेख पर मस्जिद के निर्माण की तिथि 935 अंकित की गयी है । मस्जिद के भीतर और फाटक पर दो परसियन लेख खुदे हुए थे । मस्जिद के भीतर वाला लेख इस प्रकार था[1] -

वफ़रमूत - ऐ - शाह बाबर कि अदलश
बिनाईस्त ता कारवी गरदूँ मुलाक़ी ।

बिना कर्दें ई महबते कुदसियाँ
अमीरे सआदत निशा मीर बाक़ी ।

वुअद खैर बाक़ी चूँ साले बिनायश
अयां शुद की गुफ़्तम वुअद खैर बाक़ी ।

-------------------

1. बाबर बादशाह की आज्ञा से, जिसके न्याय की ध्वजा आकाश तक पहुँचती है ।

- नेक दिल मीर बाकी नं फ़रिश्तों के उतरने के लिए यह स्थान बनवाया है ।

- उसकी कृपा सदा बनी रहे । बुअद खैर बाक़ी - इसी के टुकड़ों से इमारत बनने का वर्ष [935] हिज़री भी निकल आता है ।

मस्जिद के फाटक का लेख इस प्रकार था[1] -

1. बनाये आँकि दाना हस्त अकबर,

   कि खालिक जुमला आलम ला - मकानी ।

2. दरूदे मुस्तफा बादज सतायश,

   कि सरवर अम्बियाए दो जहानी ।

3. फ़िसाना दर जहाँ बाबर कलन्दर

   कि शुद दर दौरे गेती कामरानी ।

6 दिसम्बर 1992 में इस मस्जिद के विनाश के बाद से शिलालेखों का कुछ पता नहीं है ।

बाबर का उत्तराधिकारी हुमायूँ था । हुमायूँ को पराजित करके शेरशाह ने उसके साम्राज्य पर अधिकार कर लिया । शेरशाह ने अवध में एक टकसाल स्थापित किया जो मुगलों के पुनः सत्ता में आने के बाद भी उपयोग किया जाता रहा ।

------------------

1. उस परमात्मा के नाम से जो महान और बुद्धिमान है, जो सम्पूर्ण जगत का सृष्टिकर्त्ता और स्वयं निवासरहित है ।

   - उसकी स्तुति के बाद मुस्तफ़ा की तारीफ़ है जो दोनों जहान और पैगम्बरों के सरदार हैं ।

   - संसार में बाबर और कलंदर की कथा प्रसिद्ध है जिससे उसे संसार चक्र में सफलता प्राप्त हुई है । देखिए बेवरिज, 1921, दि बाबरनामा ।

अकबर के शासनकाल के प्रारम्भिक वर्षों में अवध और उसके साम्राज्य के पूर्वी भाग में अस्थिरता बनी रही किन्तु अकबर ने वहाँ के विद्रोह को दबा दिया। अकबर ने अवध की सरकार 1567 ई0 में मुहम्मद-कुली-खान बारलस को सौंपा। मोहम्मद मोहसिन खान जिसे उस समय सिंझौली परगने का दायित्व सौंपा गया था, ने अकबरपुर नामक कस्बे की स्थापना की और वहाँ एक मस्जिद और एक किले का निर्माण कराया।

अकबर के शासनकाल में उसका साम्राज्य अनेक प्रान्तों में विभाजित किया गया। उसके द्वारा स्थापित की गयी प्रशासनिक व्यवस्था उसके उत्तराधिकारियों के समय में बनी रही। इस समय के वृत्तान्तों में अवध का प्रसंग बहुत कम मिलता है। अकबर ने अयोध्या में ताँबे के सिक्कों की एक टकसाल स्थापित की थी। अकबर के समय अयोध्या में नागेश्वरनाथ और चन्द्रहरि आदि देवताओं के मन्दिर बनवाये गये। अंग्रेज सौदागर विलियम फिंच (1608-1611) जिसने मुगल साम्राज्य से होकर यात्रा की, कहता है - अवध एक उल्लेखनीय प्राचीन नगर है। यह नगर अब बरबाद हो चुका है और यहाँ पुराने महलों के अनेक खण्डहर पाये जाते हैं।

जहाँगीर के शासनकाल में 1621 ई0[1] में बाकीर-खान-नाजम-सानी यहाँ का गवर्नर नियुक्त हुआ। 1621-22 में उसने बड़ी निष्ठा से शाहजादा खुर्रम के विद्रोह को दबाया।

---

1, सेन, सुरेन्द्रनाथ, 1957, इण्डियन ट्रेवेल्स आफ थीवनाट एण्ड कारेरी, पृष्ठ 87-88.

औरंगजेब के शासनकाल में 1666-1667 ई0 में थीवनाट भारत की यात्रा पर आया । वह बताता है कि यहाँ अनेक राजा थे जो महान मुगल की सत्ता द्वारा भी जीते नहीं जा सके थे ।[1] इस समय अवध में दो महत्त्वपूर्ण पेगोडा (स्तूप) थे । खुलसत उत तवारीख के लेखक के अनुसार अवध प्रान्त उत्तम कोटि के चावल और कृषि के लिए प्रसिद्ध था ।

<u>नवाब-काल</u> :

अवध प्रान्त में औरंगजेब के बाद लम्बे समय तक अव्यवस्था बनी रही । 1722 ई0 में मुहम्मद शाह ने विस्तृत अधिकार देकर सादात खान बुर-हान उलमुल्क को अवध का गवर्नर नियुक्त किया ।[2] उस समय अवध प्रान्त शक्तिशाली जमींदारों और राजाओं द्वारा अधिकृत कर लिया गया था । 1723 ई0 के प्रारम्भ में जब उनमें से एक - तिलोई के राजा मोहन सिंह ने अपने क्षेत्र को समर्पित करने से इन्कार कर दिया तो सादात खान उसकी शक्ति को कुचलने के लिए आगे बढ़ा । मोहन सिंह युद्ध में मारा गया और उसका राज्य सादात खान द्वारा अधिकृत कर लिया गया । लखनऊ शहर भी जो शेखजादों के अधिकार में था 1722 ई0 में उसके द्वारा हड़प लिया गया । 1725 ई0 में उसने अन्य शासकों जैसे बैस और विसेन लोगों को दबाना प्रारम्भ किया और शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने में

---

1. सेन, सुरेन्द्रनाथ, 1957, <u>इण्डियन ट्रेवेल्स आफ थीवनाट एण्ड का-री-री</u>, पृष्ठ 87-88.

2. श्रीवास्तव, ए0एल0, 1954, <u>दि फर्स्ट टू नवाब्स आफ अवध</u>,

सफलता प्राप्त की । सादात खान ने मुख्य रूप से अयोध्या में निवास किया । उसने कस्बे से थोड़ी ही दूर पर लक्ष्मण घाट के पास मुबारक किला और अपने कार्यालय का निर्माण कराया । उसके पास सुसंगठित सेना थी । शायद उसकी सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि अप्रैल 1737 ई0 में जैलेसर में मराठों पर विजय थी । सादात खान की 1739 ई0 में मृत्यु हो गयी ।

उस समय फैजाबाद शहर की स्थापना नहीं हो पायी थी । घाघरा के किनारे वहाँ एक जंगल था जहाँ नवाब ने अपना तम्बू गाड़ा और अदालत लगाई । बाद में यह स्थान एक छावनी के रूप में परिवर्तित हो गया । वहाँ उसने चारों ओर मिट्टी की दीवार खड़ी कराया और किले के हर कोने पर बुर्ज निर्मित कराया । यहाँ सभी मकान अस्थायी रूप से मिट्टी के बने थे । सादात खान की मृत्यु के बाद यह स्थान फैजाबाद कहा जाने लगा । फैजाबाद का वास्तविक संस्थापक सादात खान का उत्तराधिकारी मंसूर अली खाँ सफ्दर जंग था । उसने इसे अपनी राजधानी बनाया । यहाँ एक बड़ी बाजार की स्थापना की और मनोरंजन के लिए बगीचे लगवाया । इस समय तक बहुत से व्यापारियों ने यहाँ अपने भवन बनवा लिये । शुजाउद्दौला के समय फैजाबाद ने काफी उन्नति की । उसने सादात खाँ के किले का पुनर्निर्माण कराया और नगर के चारों ओर मिट्टी की दीवाल और खाई का निर्माण कराया । नये किले की दीवार 18 मीटर मोटी थी और इतनी मजबूती से बनी थी कि हाथियाँ अपने पैरों से उस पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकती थी । एक शानदार बाजार "चौक बाजार" किले के दक्षिणी गेट से इलाहाबाद गेट

तक विस्तृत थी । यहाँ ईरान, तूरान, चीन और यूरोप के सौदागर कीमती वस्तुओं के साथ अक्सर बाजार में भ्रमण करते रहते थे जिसको वे अच्छे खासे लाभ पर बेचते थे । नवाब ने सोने चाँदी के निर्यात पर रोक लगा दी और व्यापार के लाभकारी स्थिति को बनाये रखा । अनाज, कपड़ा तथा आम आवश्यकता की अन्य वस्तुएँ ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीनस्थ प्रान्तों की तुलना में यहाँ सस्ती थीं । 26 जनवरी 1775 ई0 को शुजाउद्दौला का देहान्त हो गया । उसकी कब्र गुलाब बाडी में है । यहीं वहू बेगम का मकबरा भी है । बहू बेगम नवाब की पत्नी और आसफुद्दौला की माँ थीं ।

चौथे नवाब आसुफुद्दौला ने अपनी राजधानी लखनऊ हस्तानान्तरित कर दी जिससे फैजाबाद का राजनीतिक महत्त्व घटने लगा । उसके समय में दोनों बेगमों - नवाब बेगम और बहू बेगम पर दबाव डालकर पैसा अंग्रेजों को देने के लिए वसूल किया गया । बहू बेगम एक प्रतिभाशाली महिला थी । आसुफुद्दौला की मृत्यु के बाद उसने अवध के शासन को संभालने का प्रयास किया । फैजाबाद की अधिकांश मुस्लिम इमारतें उसी की देन है । 1815 ई0 में उसकी मृत्यु के बाद फैजाबाद का क्रमशः ह्रास होता गया ।

1855 ई0 में अयोध्या में हनुमानगढ़ी के पास एक स्थान को लेकर वैरागियों और मुसलमानों में भीषण संघर्ष हुआ । दोनों ने इस स्थान को अपने अपने धर्मों से सम्बन्धित पूजा के स्थान होने का दावा किया । कहा जाता है कि बादशाह वाज़िद अली शाह ने इस मामले के छानबीन के लिए एक समिति नियुक्त किया।

समिति ने गुलाब बाड़ी में एक सभा बुलाई । जन-समूह में से किसी ने भी मस्जिद के स्थायित्व को प्रमाणित नहीं किया अतः इस समिति ने वैरागियों के पक्ष में अपना निर्णय दिया । जब कमेटी की रिपोर्ट लखनऊ पहुँची तो मुसलमानों में उत्तेजना व्याप्त हो गयी । उन्होंने एक संघर्ष समिति बनायी और अमेठी के मौलाना अमीर अली को अपना नेता चुना । वैरागियों ने भी इस स्थान की सुरक्षा के लिए तैयारी शुरू कर दी । वाजिद अली शाह ने इस स्थान की सुरक्षा के लिए सेना भेजी । अमीर अली के समर्थकों ने जब रूदौली से प्रस्थान किया तो उसके अभियान को विफल करने के लिए वाजिद अली शाह ने कैप्टन वरलो के नेतृत्व में सेना भेजी जिसका इस दल से संघर्ष हुआ और जिसमें मौलाना अमीर अली के बहुत से समर्थक मारे गये ।

<u>ब्रिटिश काल</u> :

फरवरी 1856 ई० को वाजिद अली शाह के समय में कुशासन का आरोप लगाकर डलहौजी ने अवध को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया । 1857 ई० का विद्रोह जब प्रारम्भ हुआ तो उसमें मौलवी अहमद उल्लाह शाह और अवध की बेगमों ने सक्रिय रूप से भाग लिया । अवध पर क्रान्तिकारियों का कब्जा हो गया किन्तु 1858 ई० तक अंग्रेजों ने इसे पुनः जीत लिया । जब स्वतन्त्रता आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तो फैजाबाद जिले के लोग भी आन्दोलन में कूद पड़े ।[1] लम्बे संघर्ष के बाद

-----------------

1. रिज़वी और भारगव, 1958, <u>फ्रीडम स्ट्रगिल इन यू०पी०</u>, वैलूम 2.

15 अगस्त 1947 ई0 को हमारा देश स्वतन्त्र हुआ । फैजाबाद जिला अब भी एक प्रशासनिक केन्द्र है । यह सांस्कृतिक और धार्मिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र बना हुआ है और प्रतिवर्ष लाखों पर्यटक और दर्शनार्थी यहाँ आते हैं ।

--------::0::--------

## अध्याय - चतुर्थ

## पुरातात्त्विक सर्वेक्षण और उत्खनन

## पुरातात्विक सर्वेक्षण और उत्खनन

### खण्ड अ - सर्वेक्षण

फैजाबाद जनपद में किये गये सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप कुल 76 महत्वपूर्ण पुरास्थल प्रकाश में आये हैं। इनमें से कई महत्वपूर्ण स्थलों का उल्लेख पूर्ववर्ती शोध-कर्त्ताओं ए० कनिंघम[1], ए० फ्यूरर[2] तथा लाला सीताराम[3] आदि ने भी किया है। इन स्थलों में से 20 पुरास्थल फैजाबाद तहसील में, 8 पुरास्थल बीकापुर तहसील में, 17 पुरास्थल अकबरपुर तहसील, 19 पुरास्थल टाण्डा तथा 12 पुरास्थल जलालपुर तहसील में स्थित हैं (मानचित्र संख्या 3 - तालिका 1)।

तालिका 1 (मानचित्र 3)

---

फैजाबाद तहसील के स्थल

| | | |
|---|---|---|
| 1. हाजीपुर | 3. पिलखान | 5. रौनाही |
| 2. मुस्तफाबाद | 4. कुन्दरवाखुर्द | 6. मंगल्सी |

---

1. कनिंघम, ए० 1972, आर्कलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, फोर्थ रिपोर्ट, मेड ड्युरिंग दि इयर 1962-63, 1963-64.

2. फ्यूरर, ए0, 1969, आर्कलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया दि मानुमेण्टल एण्टीक्यूटी एण्ड इन्स्क्रप्सन्स इन दि नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज एण्ड अवध

3. लाला सीताराम, 1932, अयोध्या का इतिहास ।

7. वारन
8. फैजाबाद
9. अयोध्या
10. रानोपाली
11. मसौधा
12. मदरसा
13. नन्दिग्राम
14. दर्शननगर
15. सरेठी
16. भगवाभीट
17. जलालुद्दीननगर
18. बिल्हरघाट
19. मयाकनकपुर
20. अमसिन

बीकापुर तहसील के स्थल

21. अमानीगंज
22. शाहगंज
23. सरायखरगी
24. दाराबगंज
25. डिहवामंगारी
26. तारडीह
27. बीकापुर
28. पातूपुर रहेट ❨पिपरी❩

अकबरपुर तहसील के स्थल

29. मिझौरा
30. भरथुआ
31. फत्तेपुर बेलाबाग
32. खेमार
33. भरथुआ सरैया
34. वन्दनडीह
35. जोगापुर गोहना
36. अकबरपुर
37. सोनहरालालपुर
38. रम्मनपुर
39. लोदीपुर कटौना
40. लोरपुर ताजन
41. करतोरा
42. मौरवा
43. पहाणपुर टंडवा
44. सहनेमऊ
45. कटाट

## टाण्डा तहसील के स्थल

| | | |
|---|---|---|
| 46. दसउवा फूलपुर | 53. तन्सुद्दीनपुर | 60. रामडीह तराद |
| 47. इल्फातगंज | 54. ब्राहिनपुर सगरा | 61. जहिरौली गोविन्द-साहब |
| 48. डिहवा दौलतपुर | 55. टाण्डा | 62. बिड़हर |
| 49. विहरई | 56. सुन्थर | 63. मुबारकपुर |
| 50. खैरपुर | 57. उमरापुर | 64. बलरामपुर |
| 51. दहियावर दरवेशपुर | 58. असरफपुर किछौछा | |
| 52. विहरोजपुर | 59. रसूलपुर दरगाह | |

## जलालपुर तहसील के स्थल

| | | |
|---|---|---|
| 65. कहरासुलेमपुर | 69. गौस्नपुर ककरहिया | 73. मड़हरा |
| 66. सुरहुरपुर | 70. रुकुनपुर | 74. जलालपुर |
| 67. समसपुररुकुद्दीनपुर | 71. एलनपुर भिटौरा | 75. मिन्तूपुर |
| 68. पखरपुर | 72. महुअल | 76. नगपुर |

सर्वेक्षण से प्रकाश में आये इन स्थलों का विवरण - उनकी स्थिति, क्षेत्रफल और इन स्थलों से उपलब्ध महत्त्वपूर्ण पुरावशेषों तथा ऐतिहासिक महत्त्व के स्मारकों आदि का वर्णन निम्न पंक्तियों में किया जा रहा है :-

1. हाजीपुर :

यह स्थल फैजाबाद तहसील में फैजाबाद से 25 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है । बहूबेगम ने यहाँ एक बाजार बनवाने का प्रयास किया था । उसने
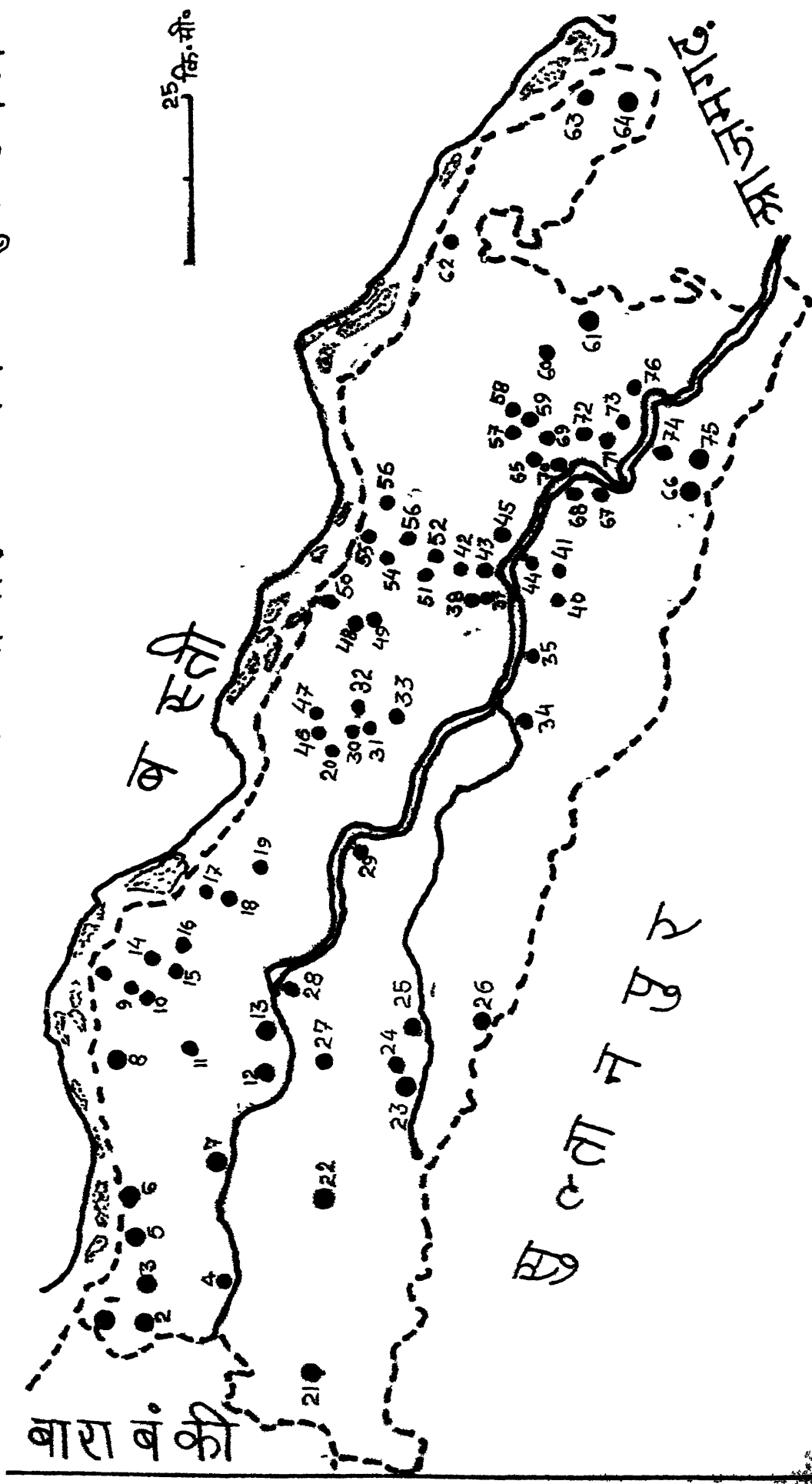
मानचित्र 3 : फैजाबाद जनपद के पुरास्थल

यहाँ दो प्रवेश द्वार बनवाना प्रारम्भ किया था जो पूरे न हो सके थे और अब वे जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं । हाजीपुर पहले चौहानों के कब्जे में था । यहाँ एक बड़ी मस्जिद तथा एक मकबरा है, जिसे पीर ख्वाजा हसन की दरगाह कहते हैं ।

मुस्तफाबाद :

मुस्तफाबाद फैजाबाद तहसील के मंगल्सी परगने में फैजाबाद बाराबंकी रेलवे लाइन के किनारे है । इस गाँव को सैयद मुस्तफा ने बसाया था । उसने गाँव के दक्षिण में एक मस्जिद का निर्माण कराया जहाँ लोग ईद के अवसर पर इकट्ठा होते हैं । सैयद दीदार जहाँ ने 19वीं शताब्दी के मध्य यहाँ एक अन्य मस्जिद का निर्माण कराया था ।

3. पिलखवान :

यह फैजाबाद तहसील के मंगल्सी परगनेमेंफैजाबाद बाराबंकी सेरेलवे लाइन पर घाघरा नदी से लगभग 4 किलोमीटर दक्षिण में स्थित है । ऐसा कहाजाता है कि इस गाँव को राजपूतों ने बसाया था और शताब्दियों तक यह उनके कब्जे में रहा । यह स्थल मध्यकालीन इतिहास से सम्बन्धित है ।

4. कुन्दरखा खुर्द :

यह फैजाबाद तहसील के मंगल्सी परगना के मड़हा नदी के किनारे उत्तर में स्थित है । 1350 ई० के लगभग इसे विसेन राजपूत सुन्दर सिंह ने बसाया था । उसके वंशजों ने यहाँ दीर्घकाल तक शासन किया । बाद में दर्शनसिंह और उसके उत्तराधिकारियों ने इसे हड़प लिया । इसे देवरही हिन्दू सिंह नाम से भी जाना

जाता है क्योंकि यह हिन्दू सिंह नामक एक महत्त्वपूर्ण विसेन सरदार का निवास-स्थान था ।

5. रौनाही :

यह फैजाबाद तहसील में फैजाबाद से लगभग 14 कि०मी० दूर घाघरा नदी पर स्थित पुरानी बस्ती है । यह पहले भरों के कब्जे में था जिसे सैयद लोगों ने भगा दिया । यहाँ की बहुत सी पुरानी इमारतों में एक किला है जो अवध के नवाबों के दिनों में एक आमिल का मुख्यालय तथा सेनाओं की छावनी थी । इसके अतिरिक्त यहाँ अवध के नवाबों के दिनों के कुछ अन्य भवन हैं जिसमें एक मजदूरों की सराय, मस्जिदें, ईदगाह और हिन्दू मन्दिर हैं । कस्बे के पास औलिया शाहिद और मकान शाहिद की मज़ार है ।

जैन परम्परा के अनुसार रौहानी का पुराना नाम रत्नपुरी था । यहाँ पर 15वें तीर्थंकार धर्मनाथ पैदा हुए थे । कस्बे के दक्षिण-पूर्व में एक ऊँचे चबूतरे पर 1800 ई0 के लगभग निर्मित जैन मन्दिर है जो ऊँची दीवार से घिरा हुआ है । मन्दिर के अन्दर काले पत्थर की पार्श्वनाथ की मूर्ति तथा कई और छोटी प्रतिमाएँ हैं । यहाँ एक अन्य जैन-मन्दिर में ऋषभदेव की संगमरमर की मूर्ति तथा कई अन्य छोटी मूर्तियाँ हैं । मन्दिर के विषय में ऐसा कहा जाता है कि यह कलकत्ता और लखनऊ के जैनों द्वारा बनवायी गयी थी ।

6. मंगल्सी :

यह फैजाबाद तहसील में इसी नाम का परगना है । यह पहले भरों के

कब्जे में था जिन्हें शेखों ने यहाँ से बाहर कर दिया । इसके बाद यह काफी समय तक शेखों के कब्जे में रहा ।

7. वारन :

इस स्थान पर एक तालाब है जिसके किनारे बाजार लगती है । परंपरा के अनुसार यहाँ राजा दशरथ के हाथी रहते थे और यहीं श्रवण कुमार की मृत्यु हुई थी । वस्तुत: वारन ताल तमसा नदी का ही भाग है ।

8. फैजाबाद :

फैजाबाद घाघरा नदी के दाहिने तट पर प्राचीन अयोध्या नगर से 8 किलोमीटर दूर स्थित है । इसका बहुत पुराना इतिहास नहीं है । पहले यहाँ केवड़ा का जंगल था । अवध के नवाब बजीर सादात खान ने यहाँ एक बंगला बनवाया जिसे आज भी नदी के किनारे देखा जा सकता है । इसके बाद उसने दिलकुशा महल का निर्माण कराया जिसके कुछ हिस्सों को अब भी देखा जा सकता है । उसके उत्तराधिकारी अब्दुल मंसूर खान (सफदरजंग) ने फैजाबाद शहर का निर्माण कराया। उसने इस नगर में अपना आवास और सैनिक मुख्यालय बनवाया । इस समय यहाँ उसके दरबारियों एवं व्यापारियों द्वारा बहुत से भवन बनवाये गये । उसे नवाब शुजाउद्दौला ने 1764 ई० में बक्सर युद्ध के बाद अपनी राजधानी बनाया । उसने यहाँ एक किला बनवाया था जो अब नष्ट हो गया है । 1785 ई० में उसने चौक और त्रिपोलिया का निर्माण करवाया । इसी समय यहाँ अंगूरीबाग, मोतीबाग, आसफबाग, बुलन्दबाग, लालबाग लगवाये गये । उस काल में बनी इमारतों में

सफ्दरजंग की विधवा का मकबरा, खुर्द महल और सफ्दरजंग का महल उल्लेखनीय हैं। इसमें बाद के दोनों महल नष्ट हो गये हैं।

इसके बाद बनी इमारतों में प्रमुख हैं - नवाब शुजाउद्दौला का मकबरा तथा उसकी बेगम बहू बेगम का मकबरा। शुजाउद्दौला का मकबरा एक बगीचे (गुलाबबाड़ी) में है। यहाँ पर दो दरवाजों से पहुँचा जा सकता है। बहूबेगम मोतीमहल में रहती थीं जो अब छिन्न भिन्न हो गया है। इसी के पास बहूबेगम का मकबरा है। मकबरे के बाहर दक्षिण में एक इमामबाड़ा है जिसे जवाहर अली खान ने बनवाया था। अन्य महत्त्वपूर्ण इमारतों में गुप्तार घाट के मन्दिर, बड़े खानम का मकबरा प्रमुख है। परम्परा के अनुसार महाराजा दशरथ ने पुत्र-प्राप्ति के लिए यहाँ यज्ञ किया था और राम यहीं गुप्त हुए थे।

9. <u>अयोध्या</u> :

अयोध्या घाघरा नदी के दाहिने तट पर फैजाबाद से 8 किलोमीटर उत्तर पूर्व स्थित है (मानचित्र 4)। पाणिनि की अष्टाध्यायी में कोसल शब्द का उल्लेख है।[1] इसकी गणना भारतवर्ष के सात पवित्र नगरियों में की जाती थी।[2] भगवान राम से सम्बन्धित होने के कारण अयोध्या का हिन्दुओं के लिए वही स्थान है जो

---

1. वृद्धेत्कोसलाजादा यङ्. 4/1/171

2. अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिका: ॥

मानचित्र 4 : अयोध्या नगर के पुरास्थल

मुसलमानों के लिए मक्का और यहूदियों के लिए यरूसलम का । प्राचीन भारतीय साहित्य में कोशल जनपद की राजधानी और इक्ष्वाकुवंशियों के जन्म-स्थान के रूप में अयोध्या नगर की विशालता और समृद्धि का विस्तृत वर्णन मिलता है । बहुत से पुरातत्वविद् प्राचीन साहित्यिक विवरण में और पुरातात्विक अनुसंधानों के समन्वय पर बल देते हुए कहते हैं कि साहित्य और पुरातत्व को अतीत के अध्ययन में एक दूसरे के समीप आना चाहिए । इस सन्दर्भ में कुछ श्लाघनीय प्रयास भी हुए हैं ।[1] इसी उद्देश्य से यहाँ अयोध्या सम्बन्धी साहित्यिक सन्दर्भों का उल्लेख किया जा रहा है ।

प्रारम्भिक वैदिक साहित्य में अयोध्या का उल्लेख नहीं मिलता किन्तु ऋग्वेद में सरयू नदी का उल्लेख सरस्वती और सिन्धु नदी के साथ किया गया है ।[2] अथर्ववेद के द्वितीय खण्ड में अयोध्या नगर का उल्लेख हुआ है ।[3] वाल्मीकि रामायण

---

1. लाल, बी०बी०, 1991, प्लाण्ड कोपरेशन बिटवीन आर्कियोलाजिस्ट एण्ड स्कालर्स आफ एन्सियण्ट लिटरेचर - ए क्राइंग नीड, <u>मैन एण्ड इनवायरमेण्ट</u>, वैलूम 16, नं० 1, पृष्ठ 1-3.

2. सरस्वती: सरयु: सिन्धुरूर्मिभि: महोमही रवसायंतु वक्षणा: ।
देवीरापो मातर: सूदयित्न्वो घृतवत्पयो मधुमन्नो अर्चत ॥

3. अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पू: अयोध्या ।
तस्यां हिरण्मय: कोश: स्वर्गो ज्योतिषावृत: ॥

ने अयोध्या का परिखा और प्राचीर से घिरे हुए बड़े नगर के रूप में उल्लेख किया गया है ।[1] इसके चारों ओर प्रवेश द्वार थे । नगर के पश्चिमी द्वार का नाम वैजयन्त द्वार था ।[2] परन्तु यह विवरण काल्पनिक है ।[3] ब्यूलर और वेबर जैसे विद्वान् भी इस नगर की विशालता और उसके रक्षा प्राचीर के बारे में सन्देह व्यक्त करते हैं । उनके अनुसार सम्भवत: अयोध्या के चारों ओर लकड़ी का बाड़ा बना हुआ था जैसा कि बनवासी लोग जंगली पशुओं से रक्षा के लिए बनाते थे ।[4]

बौद्ध परम्परा में इसका नाम साकेत मिलता है जहाँ बुद्ध का कई बार आगमन हुआ । कुछ विद्वान साकेत और अयोध्या को अलग अलग स्थान मानते हैं । अयोध्या जैनों का भी तीर्थस्थल रहा है । अत: जैन साहित्य में भी इसका पर्याप्त

---

1. "अयोध्या नाम तमास्ति नगरी लोक विश्रुता ।
   मनुना मानवेन्द्रेण पुरैव निर्मिता स्वयभू ॥
   आयता दश च द्वे च योजनानि महापुरी ।
   श्रीमती त्रीणि विस्तीर्णा नानासंस्थानशोभिता ॥

   और

   सायोजने द्वे च भूय: सत्यनाम प्रकाशते ॥

2. द्वारेण वैजयन्तेन प्राविश छान्तवाहन: ।

3. घोष, अमलानन्द, 1973, द सिटी इन अरली हिस्तारिकल इण्डिया, शिमला, पृष्ठ 49,- 50, 52.

4. राय, उदयनारायण, 1965, प्राचीन भारत में नगर और नगर जीवन ।
   लाला, सीताराम, 1932, अयोध्या का इतिहास, पृष्ठ 27.

वर्णन मिलता है। धनपाल के तिलकमंजरी में अयोध्या को भारतवर्ष के मध्य भाग का अलंकार कहा गया है जिसके चारों ओर परिखा और प्राकार बने हुए थे।[1] कालिदास के रघुवंश के 16वें सर्ग में कुश परित्यक्ता अयोध्या का वर्णन किया गया है[2], जिससे प्रतीत होता है कि उस समय अयोध्या की स्थिति अच्छी नहीं थी। एक अन्य ग्रन्थ जानकीहरण जिसका रचयिता कुमारदास था - में प्रारम्भ में अयोध्या का वर्णन है।[3] कुछ लोग इसे कालिदास की रचना मानते हैं। कुछ लोग जानकीहरण के रचनाकार की पहचान कुमारगुप्त से करते हैं। सम्भवतः चीनी यात्री फाहियान और ह्वेनसांग भी यहाँ आये थे।

---

1. धनपाल की तिलकमंजरी, पण्डित भवदत्त शास्त्री और काशीनाथ पाण्डुरंग द्वारा सम्पादित तथा तुकाराम जावाजी द्वारा प्रकाशित।

2. रघुवंश, सर्ग 16.

3. आसीदवन्यामतिभोगभारा द्दिवोवतीर्णा नगरीव दिव्या।
क्षमान्तसस्थानशमी समृद्धया पुराभ्यो ध्येति पुरीवराध्ये॥

और

कृत्वापि सर्वस्व मुदं समृद्धया हर्षाय नाभूदभिसारिकाणाम्।
निशासु या का चनतोरणास्थरत्नांशुभिर्भिन्नतमिस्रराशिः॥

परम्परा के अनुसार अयोध्या के राजा वृहद्वल की मृत्यु के बाद अयोध्या एक लम्बे समय तक वीरान रहा और उसके बाद उज्जयिनी के विक्रमादित्य ने वहाँ जंगलों को काटकर रामगढ़ नामक किले का निर्माण किया और 360 मन्दिर बनवाये कनिंघम इस विक्रमादित्य की पहचान गुप्त शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य से करते हैं ।[1] मध्यकाल के प्रारम्भ में अयोध्या मुस्लिम शासकों के अधीन हो गया तथा विशाल सूबे का मुख्यालय बनाया गया । रामजन्मभूमि होने के कारण तथा राम-कथा की लोकप्रियता से इस स्थान को विशेष महत्त्व मिला ।

उत्तर भारत के अन्य नगरों की भाँति अयोध्या में खण्डित मूर्तियों और प्रस्तरखण्डों से आच्छादित ऊँचे टीले नहीं हैं, किन्तु इसी के टुकड़ों से ढके अपेक्षाकृत छोटे टीले हैं जिनका उत्खनन करके स्थानीय लोगों ने ईंट निकालकर समीपवर्ती फैजाबाद में अपने भवनों का निर्माण किया है । फ्यूरर के अनुसार फैजाबाद नगर के भवनों का निर्माण मुख्यत: अयोध्या से निकाली हुई सामग्रियों से किया गया है ।[2]

अयोध्या मुख्य रूप से मन्दिरों का शहर रहा है लेकिन यहाँ के सभी पूजा स्थल केवल हिन्दू धर्म से ही सम्बन्धित नहीं हैं । यहाँ पर कुछ जैन पूजा-स्थल और मुसलमानों के कई मस्जिद और मकबरे हैं । ऐसा कहा जाता है कि मुस्लिम विजय

---

1. अर्कोलाजिक रिपोर्ट्स, वैलूम-2, पृष्ठ 97.

2. फ्यूरर, ए0, 1969, पूर्वोद्धरित ।

के पूर्व यहाँ तीन महत्त्वपूर्ण स्थान थे - जन्म-स्थान, स्वर्ग-द्वार और त्रेता के ठाकुर। ऐसा कहा जाता है 1528 ई0 में बाबर यहाँ आया और उसके आदेश पर एक पुरानी मन्दिर को नष्ट करके बाबरी मस्जिद का निर्माण कराया गया । यह स्थान हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच लम्बे समय से विवाद का कारण रहा है । 1858 ई0 में हिन्दू मस्जिद के बाहर चबूतरा बनाकर पूजा करने लगे । इस विवादग्रस्त स्थल के बाहर की तरफ वाराह की पुरानी टूटी हुई मूर्ति है । यहाँ के प्रसिद्ध स्थल मणिपर्वत के पास दो कब्र (सम्मानित धर्म प्रचारक सेद और जाव की) हैं, जिसका उल्लेख आइने-अकबरी में मिलता है । पुलिस स्टेशन के पास एक कब्र है जिसे नूह की कब्र बताया जाता है । मुसलमानों का दूसरा पवित्र स्थल मुराव टोला में स्वर्गद्वार के पास स्थित शाहजुरान गोरी की कब्र है जो मुहम्मद गोरी के साथ आया था । इसे आदिनाथ के जैन-मन्दिर को समाप्त करके बनाया गया है । प्रसिद्ध घुम्मकड़ संतमीर अहमद की नौरहनीखुर्द मक्का की कब्र तथा कबीर टीला पर स्थित ख्वाजा हाथी के कब्र का भी काफी सम्मान किया जाता है ।

अयोध्या के बहुत से मन्दिरों में एक है त्रेता के ठाकुर । यह उस स्थान पर है, जहाँ राम ने अश्वमेध यज्ञ किया था । इसमें राम और सीता की मूर्तियाँ हैं । अयोध्या के पश्चिमी भाग में स्थित एक ऊँचे स्थान पर रामकोट का दुर्ग है, जिस पर बहुत से मन्दिर बने हैं । इस पर हनुमानगढ़ी का मन्दिर है, जो अयोध्या का सर्वाधिक पवित्र स्थल है । अन्य भवनों में महत्त्वपूर्ण है कनक भवन । परम्परा के अनुसार यह राम का महल था जिसे कैकेयी ने सीता के लिए बनवाया था । इसके ध्वस्त हो जाने पर कई बार इसका निर्माण हुआ । वर्तमान मन्दिर का निर्माण

ओरछा की रानी कृष्णभान कुमारी ने 1891 ई0 में कराया । अन्य पवित्र स्थानों में - सीता की रसोई, रत्न सिंहासन (जहाँ वनवास से लौटने के बाद राम सिंहासनारूढ हुए थे) रंगमहल, आनन्द भवन, कौशल्या-भवन तथा काशीवरनाथ का मंदिर है । यह शिव मन्दिर है । ऐसी मान्यता है कि इसे कौशल्या ने निर्मित करवाया था । अयोध्या में तुलसी चौरा नामक स्थान है जिसके बारे में कहा जाता है कि तुलसीदास ने यही से रामचरित मानस की रचना शुरू की थी । इसी के पास स्वर्ग द्वार घाट तथा नागेश्वर नाथ का मन्दिर है । ऐसा कहा जाता है कि नागेश्वर नाथ के मन्दिर को कुश ने स्थापित किया था । विक्रमादित्य के समय में यही एक मात्र मन्दिर बचा था जिसके आधार पर विक्रमादित्य ने अयोध्या की पहचान की थी ।

1977-78 ई0 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के डॉ0 डी0पी0 सिन्हा और बी0एस0 झा ने अयोध्या में स्वर्गद्वार पर स्थित नागेश्वरनाथ मन्दिर में मौर्यकला शैली में निर्मित एक अधोमुखी कमल के आकार का पत्थर पर निर्मित स्तंभ का शीर्ष-भाग देखा था जिस पर विशिष्ट मौर्यन पालिश थी । यह स्तम्भ-शीर्ष बाद में बने हुए मन्दिर में शिवलिंग के अर्घ के रूप में प्रयुक्त किया गया है ।[1]

अयोध्या में एक विशाल टीला है जिसका नाम है मणिपर्वत । यह करीब 23 मी0 ऊँचा टूटी फूटी ईंटों और कंकणों का टीला है । इसको स्थानीय लोग

-------------------

1. इण्डियन अर्कलाजी, ए रिव्यू, 1977-78, पृष्ठ 83.

औडाझार या झौआझार कहते हैं । कनिंघम के अनुसार यह 200 फिट ऊँचे स्तूप का भग्नावशेष है और वहीं बना हुआ है जहाँ बुद्ध ने अपने 6 वर्षों के निवास के समय अपने धर्म का उपदेश दिया था । ह्वेनसांग ने इस स्तूप को अशोक से सम्बन्धित किया है । इस टीले के निचले भाग में मिट्टी से बने स्तूप के प्रमाण विद्यमान हैं । इसी के आधार पर कनिंघम इसके निचले भाग को अशोक के पहले प्रारम्भिक बौद्ध काल से सम्बन्धित करते हैं जिसके ऊपर बाद में अशोक ने स्तूप का निर्माण किया ।[1] मणि-पर्वत एक आरक्षित भवन है । अयोध्या में रामकोट के दक्षिण पूर्व में दो छोटे टीले हैं जिसमें एक सुग्रीव पर्वत के नाम से जाना जाता है । ह्वेनसांग ने बुद्ध के नाखूनों और बालों पर निर्मित जिस स्तूप का उल्लेख किया है उसकी पहचान कनिंघम ने कुबेर पर्वत से किया है । अयोध्या के अधिकांश छोटे बौद्ध स्मारक काफी पहले विनष्ट हो गये । क्योंकि उनकी सामग्रियों का प्रयोग समीपवर्ती पुलों; मस्जिदों और मजारों के निर्माण में किया गया ।[2]

अयोध्या में बहुत से जैन-मन्दिर हैं जो इस मत के अनुयायियों द्वारा विभिन्न समयों में स्थापित किये गये । यह कहा जाता है कि जैन धर्म के प्रवर्तक आदिनाथ तथा चार अन्य तीर्थंकर अयोध्या में ही पैदा हुए थे । इससे प्रतीत होता है कि यहाँ जैन मत बहुत पहले स्थापित हुआ था लेकिन यहाँ कोई प्राचीन

---

1. कनिंघम, अलेक्जेन्डर, 1972, पूर्वोद्धरित ।

2. वही ।

जैन मन्दिर नहीं है । यहाँ पाँच जैन मन्दिरों का निर्माण नवाब के खजांची केसरी सिंह ने कराया और पुराने जैन मन्दिर की मूर्तियों को लगवाया जिन पर जैन तीर्थंकर के पैर के निशान थे । इन मन्दिरों का विवरण निम्नलिखित है :-

{1} आदिनाथ का मन्दिर :- यह मन्दिर स्वर्गद्वार के पास मुराई टोले में ऊँचे टीले पर जो शाहजुरान के टीले के नाम से जाना जाता है, स्थित है ।

{2} अजितनाथ का मन्दिर :- यह मन्दिर इटउवा {सप्तसागर} के पश्चिम में है ।

{3} अभिनन्दननाथ का मन्दिर : यह सराय के पास स्थित है ।

{4} सुमन्तनाथ का मन्दिर : यह मन्दिर रामकोट के भीतर है, जिसमें पार्श्वनाथ की दो और नेमिनाथ की तीन मूर्तियाँ हैं ।

{5} अनन्तनाथ का मन्दिर : यह मन्दिर गोलाघाट नाले के पास एक ऊँचे टीले पर स्थित है ।

अयोध्या में एक स्थान पर ब्रह्मकुण्ड के नाम से विख्यात है जिसके विषय में कहा जाता है कि यहाँ कुछ दिन गुरूनानक ठहरे थे और यहीं उन्हें ब्रह्मा के दर्शन हुए थे । यहाँ एक लौहस्तम्भ का निर्माण कराया गया है । यह सिक्खों का एक पवित्र तीर्थ-स्थल है । अयोध्या मुसलमानों के लिए भी महत्त्वपूर्ण स्थल माना जाता है । यहाँ से प्रकाशित मदीन तुल औलिया नामक उर्दू ग्रन्थ के

अनुसार अयोध्या में आदम के समय से आज तक अनेक औलिया और पीर हुए हैं ।[1]

प्राचीन अयोध्या के विस्तार क्षेत्र की परिकल्पना इसके पारम्परिक धार्मिक परिक्रमा मार्ग से भी की जा सकती है ॥मानचित्र 5॥। परिक्रमा मार्ग की परिधि॥अयोध्या नगर और उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में बहुत से महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक और धार्मिक स्थल विद्यमान हैं । अयोध्या की पारम्परिक परिक्रमा स्वर्ग-द्वार से प्रारम्भ होती है । नदी के किनारे किनारे चलता हुआ तीर्थयात्री ।। किलोमीटर तक चलने के बाद शाहनवाजपुर और मुकारमनगर से होता हुआ दर्शन-नगर में सूर्यकुण्ड तक पहुँचता है । यहाँ से पश्चिम की ओर कोशाहा, मिर्जापुर और बीकापुर से होता हुआ जनवरा पहुँचता है जो अयोध्या से दक्षिण पश्चिम में ।। किलोमीटर की दूरी पर और फैजाबाद से दक्षिण की ओर ।.5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। जनवरा गाँव में गिरजाकुण्ड नामक एक सरोवर और शिवमन्दिर है । जनवरा में परम्परा के अनुसार राजा जनक जब अयोध्या में आते थे तो वहीं ठहरते थे । जनवरा के उपरान्त तीर्थयात्री खोजनपुर और सिविल लाइन होता हुआ निर्मलीकुण्ड पहुँचता और उसके उपरान्त गुप्तार घाट पर पहुँचकर अपनी यात्रा को समाप्त करता है । इस परिक्रमा मार्ग की परिधि के अन्दर रामकथा से सम्बन्धित कई महत्त्वपूर्ण स्थल हैं जिनमें रामकोट, हनुमानगढ़ी, सुग्रीव टीला, अंगद टीला, मत्तगजेन्द्र ॥मातगेंड॥ उल्लेखनीय हैं ।

---

1. लाला, सीताराम, 1932, पूर्वोद्धरित ।
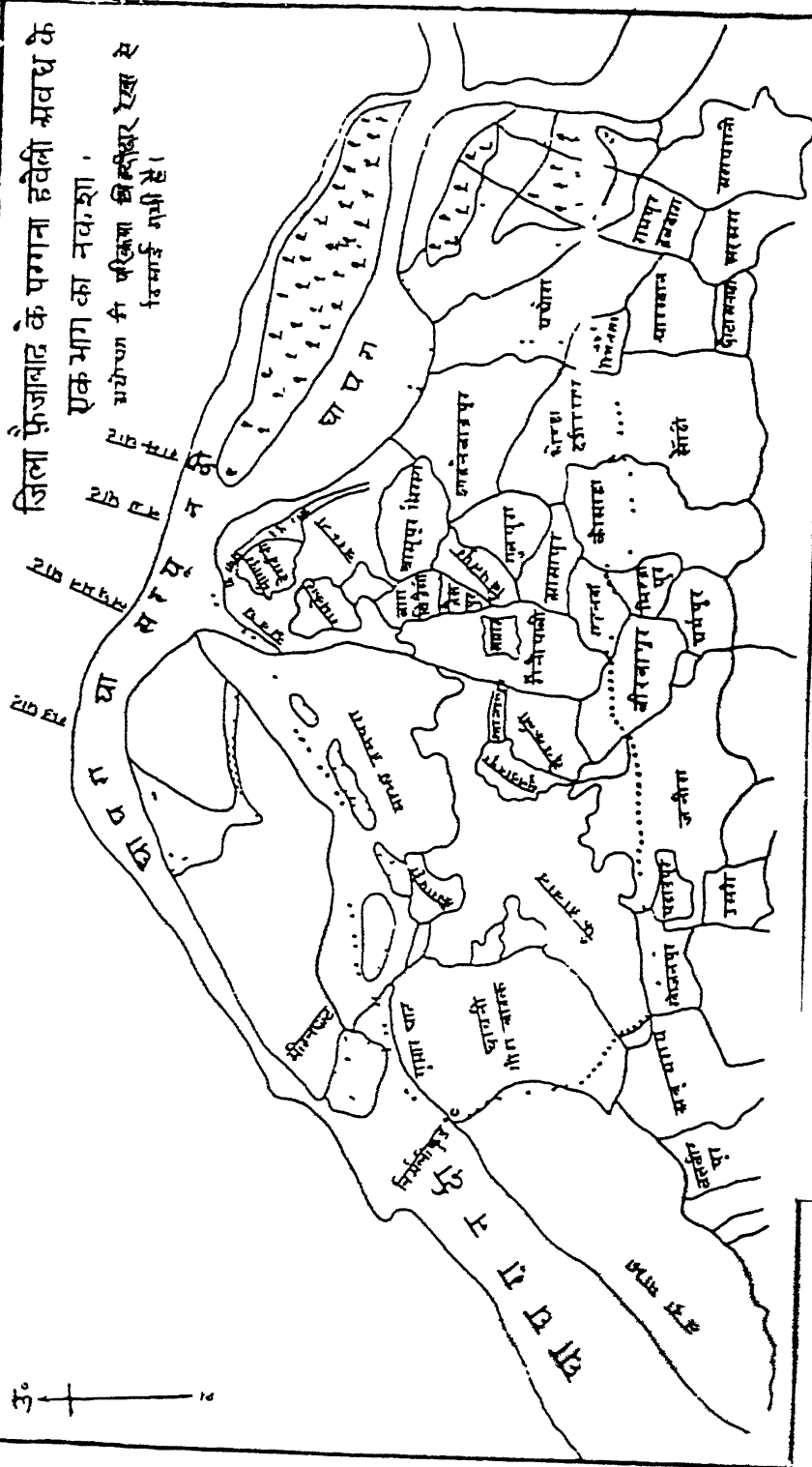
मानचित्र 5 : अयोध्या परिक्रमा मार्ग के अन्तर्गत पुरास्थल

अयोध्या नगर में बहुत से टीले हैं ‌(फलक 1) । इनमें जन्म-स्थान विशेष महत्त्वपूर्ण है जहाँ बाबर के समय में निर्मित बाबरी मस्जिद बनायी गयी है (फलक 2) । इस मस्जिद के बाहर एक वेदिका है जहाँ हिन्दू पूजा करते हैं । इस वेदी के पास ही कनक भवन है जिसे सीताजी का महल कहा जाता है । यहाँ के प्राचीन मन्दिरों में कुलू (पंजाब) के राजा द्वारा निर्मित 'त्रेता के ठाकुर' मन्दिर का उल्लेख किया जा सकता है । इस मन्दिर का जीर्णोद्धार इन्दौर की रानी अहिल्या बाई ने कराया था । सरयू के तट पर पश्चिम की ओर लक्ष्मण मन्दिर और लक्ष्मण घाट है ।

अयोध्या में स्थित ऐतिहासिक महत्त्व के टीलों में 3 टीले - मणि पर्वत, सुग्रीव टीला और कुबेर टीला - विशेष उल्लेखनीय हैं । मणि पर्वत नामक टीला लगभग 4 हेक्टेयर में फैला हुआ है और इस पर बहुत से वृक्ष उगे हैं । इस टीले पर मिट्टी के वर्तनों का अभाव है किन्तु पत्थर और कंकरीट के दीवाल के अवशेष यहाँ दिखायी पड़ते हैं (फलक 3) । यहाँ कुछ ईंट के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । इसके आसपास कब्रगाह हैं ।

दूसरा टीला सुग्रीव टीला है (फलक 4) । यह टीला अयोध्या बस-स्टेशन के निकट करीब में है । यहाँ पर दो टीले हैं । इन दोनों के बीच एक सड़क है । बस स्टेशन के सन्निकट टीले पर एक मन्दिर बना है । दूसरा टीला सड़क के दूसरी ओर है जिस पर बहुत से वृक्ष उगे हैं । यहाँ से फाइन ग्रे वेयर के प्रारम्भिक प्रकार के कटोरे, रेड वेयर के घड़े और ग्रे वेयर के बेसिन प्राप्त हुए हैं ।

इस टीले का सम्बन्ध प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से है ।

तीसरा महत्त्वपूर्ण स्थल है कुबेर टीला है, जो जन्मभूमि के पास स्थित है (फलक 5) । इस टीले के आस-पास कई टीले हैं । मुख्य टीला जो कुबेर टीला के नाम से जाना जाता है, काफी ऊँचा है (फलक 6) । यहाँ के सर्वेक्षण से लाल पात्र-परम्परा और एन०वी०पी० पात्र परम्परा के बर्तन उपलब्ध हुए हैं । लाल पात्र-परम्परा के वर्तन प्रकारों में बेसिन, कटोरे, चौड़े मुख वाले घड़े तथा धूसर पात्र प्रकारों में बेसिन तथा कटोरे उल्लेखनीय हैं । उपलब्ध सामग्रियों से इस स्थल को एन०वी०पी० संस्कृति से सम्बन्धित किया जा सकता है । यहाँ से बहुत अच्छे प्रकार के एन०वी०पी० पात्र खण्ड भी मिले हैं । इसके अतिरिक्त तीन पेबुल भी मिले हैं जो सम्भवतः शिवलिंग के रूप में प्रयुक्त किये जाते थे ।

10. <u>रानोपाली</u> :

यह स्थान फैजाबाद से 4.8 कि०मी० पूरब में है । यह प्रसिद्ध सन्त बाबा माधव दास के आश्रम के लिए प्रसिद्ध है । यहाँ के गुरू सागर तालाब पर फाल्गुन वदी नवमी को मेला लगता है । इसके 2.5 किलोमीटर उत्तर में घाघरा नदी बहती है ।

11. <u>मसौधा</u> :

यह पुरास्थल फैजाबाद-सुल्तानपुर मार्ग पर फैजाबाद से 8 किलोमीटर दूर स्थित हैं । इसके किनारे एक तालाब है (फलक 7) । यह लगभग 6 हेक्टेयर में फैला है । इस पर एक मज़ार है । यहाँ ईंट के टुकड़े तथा लालपात्र परम्परा

के वर्तन के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । यहाँ से लाल पात्र परम्परा के दो बेसिन, चार हाँड़ी और चार चौड़े मुख वाले घड़े के टुकड़े एकत्रित किये गये हैं ।

12. <u>भदरसा</u> :

भदरसा फैजाबाद तहसील के हवेली परगना में मड़हा नदी से 1.5 किलोमीटर उत्तर स्थित है । यहाँ एक पक्का तालाब है जिसे भरतकुण्ड कहते हैं । रामचन्द्र के बन जाने पर भरत ने यहाँ 14 वर्ष तपस्या की थी । यहाँ सोमवारी अमावस्या को हिन्दू दूर-दूर से पिण्डदान करने आते हैं । इस प्रकार इस स्थल का धार्मिक महत्त्व है ।

13. <u>नन्दिग्राम</u> :

रामकथा से सम्बन्धित इस स्थल पर भरत 14 वर्ष तक तपस्वी के वेश में रहते थे । अयोध्या से 15 किलोमीटर दक्षिण में भरतकुण्ड के समीप मड़हा या तमसा नदी के तट पर यह स्थल स्थित है । यद्यपि इस स्थल पर इस समय कोई प्राचीन टीला नहीं है लेकिन इससे कुछ दूर तमसा के दक्षिण में एक टीला विद्यमान है । इस टीले का कोई विशेष नाम नहीं है लेकिन इसे राहट के नाम से पुकारा जाता है । स्थानीय भाषा में जिसका अर्थ है आबादी । इसी टीले को सामान्यतः नन्दिग्राम का अवशेष माना जाता है । प्रो० बी०बी० लाल द्वारा किये गये उत्खनन से इस स्थल पर उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के वर्तन उपलब्ध हुए हैं ।[1]

---

1. लाल, बी०बी०, 1979, की नोट एड्रेस, <u>श्रीराम इन आर्ट अर्कियालाजी एण्ड लिटरेचर</u>, पृष्ठ 5-6.

14. दर्शन नगर :

यह फैजाबाद तहसील के हवेली अवध परगना में फैजाबाद अकबरपुर मार्ग पर फैजाबाद से लगभग 12 किलोमीटर पूरब में स्थित है। इसे राजा दर्शनसिंह ने 1836 ई0 में बनवाया था। इसके चारों ओर मजबूत चहारदीवारी है। यहाँ भगवान सूर्यदेव का मन्दिर है। यहाँ पर एक पक्का तालाब भी है जो सूरजकुण्ड के नाम से जाना जाता है। इसका ऐतिहासिक महत्त्व है।

15. सरेठी :

यह पुरास्थल दर्शन नगर के पास फैजाबाद तहसील में स्थित है (फलक 8)। यहाँ दो स्थानों पर टीला है। एक टीला गाँव में सड़क के किनारे है और दूसरा गाँव की परिधि के बाहर। बाहर वाले टीले पर एक मज़ार है। इन दोनों टीलों पर लाल, काले रंग के मिट्टी के बर्तन के टुकड़े मिलते हैं। लाल पात्र-परम्परा के बर्तनों में घड़े, हाँड़ी और कुछ तेपलेस पात्र खण्ड प्राप्त हुए हैं। पतले अनुभाग के अच्छे प्रकार के एन0वी0पी0 पात्र खण्डों के आधार पर इस स्थल को प्रारम्भिक एन0वी0पी0 काल से सम्बन्धित किया जा सकता है।

16. भगवा भीट :

यह पुरास्थल फैजाबाद तहसील में घाघरा नदी के दक्षिण में स्थित है। यहाँ के ऊँचे टीले दो भागों में विभक्त हैं। यह दर्शन नगर और बिल्हरघाट रेलवे स्टेशन के बीच रेलवे लाइन के उत्तर और दक्षिण में स्थित है। इसका क्षेत्रफल लगभग 10 हेक्टेयर के लगभग है। उत्तरी टीले पर बहुत से वृक्ष उगे हैं (फलक 9)।

यहाँ से लाल और भूरे रंग के मिट्टी के वर्तन के टुकड़े मिले हैं। दक्षिणी टीले पर (फलक 10) भी इसी प्रकार के मिट्टी के वर्तन के टुकड़े बिखरे मिलते हैं। इस स्थल से एकत्रित मिट्टी के वर्तनों में पतले फैब्रिक के धूसर पात्र परम्परा के दो कटोरे और एक बेसिन का उल्लेख किया जा सकता है। यहाँ से एक पात्र का लूप हैण्डिल भी प्राप्त हुआ (फलक 11) है। लाल पात्र परम्परा के वर्तनों में दो बड़े आकार के घड़े दो छिछले बेसिन एक कटोरे के समतल आधार का उल्लेख किया जा सकता है। यहाँ पर धूसरपात्र परम्परा के चार पात्र खण्ड और मिले हैं परन्तु ये आकाररहित हैं।

17. जलालुद्दीन नगर :

यह स्थल फैजाबाद तहसील में फैजाबाद से दक्षिण-पूर्व घाघरा नदी के किनारे बसा है। इसका नाम जलालुद्दीन अकबर के नाम पर जलालुद्दीन नगर पड़ा। यह दो स्थानों पर है जिसमें पश्चिम में बाजार और पूर्व में गाँव है। कहा जाता है कि 1400 ई० के लगभग यह बन्दाशाह नामक एक व्यापारी के कब्जे में था। उसने गाँव के उत्तर में एक बड़ा तालाब खुदवाया, जो अब भी उसके नाम से जाना जाता है। अनुश्रुति है कि शाहभीखा नामक साधु ~~जब~~-उसमें अपने दाँतों को धो रहा था लेकिन जब उसे मना किया गया तो उसने श्राप दे दिया। तब से इसमें पानी कभी-कभी दिखायी पड़ता है। इस स्थल को मध्यकालीन इतिहास से सम्बन्धित किया जाता है।

18. विल्हर घाट :

यह पुरा स्थल फैजाबाद अकबरपुर मार्ग पर पूरा बाजार के पास स्थित है।

इसके दक्षिण लगभग 800 मीटर दूरी पर सरयू नदी बहती है । यह पुरास्थल लगभग 12 हेक्टेयर में फैला है । यहाँ पर राजा दशरथ की समाधि तथा बाबा अखण्डदास की समाधि है । राजा दशरथ की समाधि पर एक नया मन्दिर बना है (फलक 12) । इस मन्दिर में कई मूर्तियाँ हैं जिनमें दो छोटी मूर्तियाँ जो आँगन में हैं । ये मूर्तियाँ मिट्टी में दबी पडी मिली हैं । बाद में इन मूर्तियों को खोदकर मंदिर में लाकर रख दिया गया है । ये दोनों बौद्ध मूर्तियाँ प्रतीत होती हैं । यहाँ पर एक जैन मूर्ति भी पडी हुई थी जिसे बाद में कोई उठा ले गया । यहाँ पर चपटे ईंटों का बना एक पुराना भवन है (फलक 13) जिसके बीच में आँगन है तथा दोनों तरफ मकान का खण्डहर है । यहाँ से पकी मिट्टी के लोढ़े, लाल पात्र परम्परा के घड़े, बेसिन, हांडी और कटोरे प्राप्त हुए हैं ।

19. <u>मया - कनकपुर</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर फैजाबाद मार्ग पर फैजाबाद से 28 किलोमीटर पूर्व मया बाजार के पास स्थित है । यह लगभग 6 हेक्टेयर भूभाग में फैला है । यहाँ पर लाल और धूसर रंग के वर्तन के टुकडे बिखरे मिलते हैं । इस पुरास्थल के कुछ भाग पर खेती की जाती है । इस पर ईंट और बर्तन के टुकडे भी बिखरे मिलते हैं (फलक 14) । ग्रे वेयर के प्रारम्भिक प्रकार में जार तथा लाल पात्र परम्परा के घड़े, हांडी और बेसिन प्राप्त हुए हैं ।

20. <u>अमसिन</u> :

यह फैजाबाद तहसील में स्थित है । 1763 ई0 में हसनपुर के रोशन अली

ने इसे अपने कब्जे में कर लिया था और यहाँ एक किला व इसे अपना मुख्यालय बनवाया था। 1823 ई0 से 1832 ई0 के बीच यह पीरपुर के सईद के हाथ में चला गया। यहाँ एक टीला है जो लगभग डेढ हेक्टेयर में फैला है। इस स्थल का कुछ भाग काफी ऊँचा है और अभी खाली पडा हुआ है। यहाँ से ईंट और मिट्टी के वर्तन के टुकडे मिलते हैं। यहाँ से पतले फैब्रिक और स्टील ग्रे के एन0वी0पी0 पात्र खण्ड, लाल पात्र परम्परा के एक पात्र खण्ड पर पोस्ट फायरिंग स्क्रैच डिजाइन मिलती है। यह पुरास्थल प्रारम्भिक एन0वी0पी0 संस्कृति से सम्बन्धित किया जा सकता है।

21. <u>अमानीगंज</u> :

यह बीकापुर तहसील के खण्डासा परगना में स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि पहले यह स्थान भरों के कब्जे में था जिन्हें शेख मुहम्मद ने निकाल दिया। यह वेंत नदी से 6 किलोमीटर पूर्व है।

22. <u>शाहगंज</u> :

शाहगंज बीकापुर तहसील में स्थित है। यहाँ पर कई पुराने हिन्दू मन्दिर तथा एक मस्जिद है। यहाँ स्थित महल तथा किला को अयोध्या के राजाओं से सम्बन्धित किया जाता है। राजा दर्शन सिंह के कब्जे में आने के बाद इस स्थान का महत्त्व और बढ गया। 1857 ई0 के विद्रोह के समय राजा मानसिंह ने यहाँ यूरोपियों का स्वागत किया था। उस समय यह किला अजेय माना जाता था। और उसके चारों ओर मिट्टी की सुदृढ़ रक्षा प्राचीरें थीं। उसके ऊपर 14 तोपों का निर्माण हुआ था। सर्वेक्षण से इस स्थल से मिट्टी के अनेक पात्र खण्ड प्राप्त हुए

हैं। एक पात्रखण्ड पर पोस्ट फायरिंग स्क्रैच डिजाइन है। कुछ पतले फैब्रिक वाले धूसर पात्र-परम्परा के वर्तन हैं। इन्हें एन0वी0पी0 संस्कृति ﴾प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल﴿ से सम्बन्धित किया जा सकता है। अन्य पात्र-प्रकार इस स्थल पर मध्यकाल तक की आबादी का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

23. <u>सराय खरगी</u> :

यह पुरास्थल खजुरहट-मिल्कीपुर मार्ग पर खजुरहट से 5 किलोमीटर पश्चिम व इस सड़क से 3 किलोमीटर पूर्व स्थित है। इस पुरास्थल पर एक छोटा मन्दिर बना है ﴾फलक 15﴿। इसके दक्षिण में बिसुई नदी बहती है। इसका क्षेत्रफल लगभग 4 हेक्टेयर है। इस पुरास्थल के कुछ भाग पर खेती की जाती है। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के प्रारम्भिक काल के कटोरे, बेसिन, घड़े प्राप्त हुए हैं। यहाँ से फाइन एन0वी0पी0 का एक गहरा कटोरा भी प्राप्त हुआ है। इस स्थल को प्रारम्भिक एन0वी0पी0 काल से सम्बन्धित किया जा सकता है।

24. <u>दारावगंज</u> :

यह बीकापुर तहसील के पश्चिम रथ परगना में बिसुई नदी के उत्तर में स्थित है। यहाँ एक पुराना तालाब है जिसे राम से सम्बन्धित बताया जाता है। ऐसी किंवदन्ती है कि राम बनवास से लौटते समय सीता के साथ यहाँ रुके थे। यहाँ रामनवमी और कार्तिक-पूर्णिमा को एक विशाल मेला लगता है।

25. <u>डिहवा मंगारी</u> :

यह पुरास्थल फैजाबाद सुल्तानपुर रोड पर स्थित खजुरहट बाजार से 2

किलोमीटर दक्षिण दिशा में स्थित है (फलक 16) । इसके दक्षिण में विसुई नदी है । यह लगभग 6 हेक्टेयर में फैला हुआ है । इस पर बहुत से जंगली एवं कटीले वृक्ष उग गये हैं । इसके एक भाग पर खेती की जाती है । यहाँ से मीडियम से कोर्स फैब्रिक तक के लाल पात्र-परम्परा के बेसिन, हाँडी, चौड़े मुख वाले घड़े और कैरीनेटेड हाड़ी आदि प्राप्त हुए हैं ।

26. <u>तारडीह</u> :

परम्परा के अनुसार अपनी वनयात्रा में राम पहले दिन तमसा नदी के तट पर स्थित इस स्थान पर रुके थे । यहाँ से पूर्व में कुछ दूरी पर तमसा नदी के तट पर वाल्मीकि का आश्रम था ।

27. <u>बीकापुर</u> :

यह पुरास्थल फैजाबाद सुल्तानपुर मार्ग पर स्थित बीकापुर नामक कस्बे में है । इसका क्षेत्रफल 5 हेक्टेयर है (फलक 17) । यह सड़क से लगभग 300 मीटर पूर्व में है । यहाँ से लाल व भूरे रंग के मिट्टी के वर्तनों के टुकड़े मिलते हैं । इस पुरास्थल के कुछ भाग पर मकान बन गये हैं । यहाँ से लाल पात्रपरम्परा के चौड़े मुख वाले घड़े, हाँड़ियाँ और बेसिन प्राप्त हुए हैं । यहाँ से धूसर पात्र-परम्परा के दो आकारविहीन पात्र खण्ड भी मिले हैं । सम्भवत: यह स्थल मध्यकाल से सम्बन्धित है ।

28. <u>पातूपुर रहेट (पिपरी)</u> :

यह पुरास्थल बीकापुर तहसील में फैजाबाद सुल्तानपुर मार्ग पर पिपरी

बाजार के पास मड़हा नदी के किनारे स्थित है । इस टीले पर पकी ईंट का बना हुआ एक पुराना स्तम्भ है ﴾फलक 18﴿ । इसका क्षेत्रफल लगभग 6 हेक्टेयर है । यहाँ पर एक गोलाकार हौज का अवशेष है ﴾फलक 19﴿ । इस स्थल से मौआ पुरास्थल से उपलब्ध पात्र परम्पराओं की तरह लाल पात्र-परम्परा के बेसिन और घड़े उपलब्ध हुए हैं । यहाँ से एक लग हैण्डिल का टुकड़ा भी उपलब्ध हुआ है ।

29. <u>मिझौरा</u> :

यह स्थल अकबरपुर तहसील में मड़हा नदी के किनारे स्थित है । 1400 ई0 के लगभग सैयद माइने नामक सरदार ने इसे बसाया था । अकबर के शासनकाल में यह एक परगना था । यहाँ दक्षिण पश्चिम में मिट्टी का एक किला है ।

30. <u>भरथुआ</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर गौहनिया सम्पर्क मार्ग पर अकबरपुर से लगभग 10 किलोमीटर पश्चिम अकबरपुर तहसील में स्थित है । इसके 5 किलोमीटर उत्तर में थिरुआ नदी व इतने ही दक्षिण में मड़हा नदी है । इस टीले पर से ही यह सडक जाती है । यह लगभग 2 हेक्टेयर में फैला है ﴾फलक 20-21﴿ । इसके समीप एक तालाब है । इस टीले पर भट्ठियों के बने होने के निशान भी दिखायी पडते हैं । यहाँ की भट्ठियाँ मुख्यतः आयताकार हैं । यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के बेसिन चौड़े मुख वाले घड़े तथा कैरीनेटेड हाँड़ियाँ प्राप्त हुई हैं । यहाँ से पकी मिट्टी का एक लोढ़ा प्राप्त हुआ है ।

31. <u>फत्तेपुर वेलाबाग</u> :

यह पुरास्थल अमसिन से 4 किलोमीटर दक्षिण पूर्व शारदा नहर के किनारे अकबरपुर तहसील में स्थित है। इसका क्षेत्रफल लगभग 6 हेक्टेयर है। यह स्थल दो बड़े तालाबों दरवत ताल और भदोहा ताल के बीच स्थित है। इसके अधिकांश भाग पर खेती की जाती है। इस पर भी मिट्टी के वर्तन के टुकड़े एवं ईंट के टुकड़े बिखरे मिलते हैं [फलक 22]। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के विभिन्न प्रकार के घड़े [इवर्टेड कालर्ड रिम, ग्रूव्ड रिम, कालर्ड रिम, फ्लेयर्ड आउट रिम से युक्त] प्राप्त हुए हैं। विभिन्न प्रकार के बेसिन भी यहाँ से मिले हैं। कुछ परवर्ती एन0बी0पी0 काल के काले लेप वाले पात्रखण्ड भी यहाँ से उपलब्ध हुए हैं। इस स्थल से प्राप्त पुरावशेषों के आधार पर कहा जा सकता है कि यहाँ परवर्ती एन0बी0पी0 काल से लेकर प्रारम्भिक मध्य काल तक के संस्कृति की जानकारी मिलती है।

32. <u>खेमार</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर गोसाईंगंज मार्ग पर अकबरपुर से 15 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व एवं गोसाईंगंज से 10 किलोमीटर उत्तर पश्चिम अकबरपुर तहसील में स्थित है। इसके उत्तर में थिरुआ नदी है। इस पुरास्थल के अधिकांश भाग पर मकान बन गये हैं। इसका कुछ भाग काफी ऊँचा है [फलक 23]। इस पर ईंट के टुकड़े बिखरे मिलते हैं। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा से सम्बन्धित लम्बी गर्दन वाला घड़ा प्राप्त हुआ है। यहाँ से ऐतिहासिक काल से सम्बन्धित साक्ष्य मिलते हैं।

33. <u>मरथुआ सरैया</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में अकबरपुर गौहनिया मार्ग पर अकबरपुर से 10 किलोमीटर पश्चिम तथा सड़क से 1 किलोमीटर दक्षिण स्थित है । यह लगभग 4 हेक्टेयर में फैला है । इस टीले के अधिकांश भाग पर आधुनिक बस्ती बसी है । कुछ भाग पर खलिहान किया जाता है ॥फलक 24॥ । इस टीले के लगभग 200 मीटर पश्चिम में सीमई नामक नाला है । यहाँ से सर्वेक्षण में लाल पात्र-परम्परा के फाइन फैब्रिक के कटोरे मिले हैं । इसका सम्बन्ध प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से है ।

34. <u>वन्दनडीह</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में अकबरपुर से लगभग 8 किलोमीटर पश्चिम महरुआ मार्ग पर है । यह विसुई नदी से 1.5 किलोमीटर दक्षिण है । यह लगभग 2.5 हेक्टेयर में फैला है ॥फलक 25॥ । इस पुरास्थल के कुछ भाग पर खेती की जाती है । यहाँ से धूम्रयुक्त कैरीनेटेड हाँडी और चौड़े मुख वाले घड़े मिले हैं । इस स्थल को प्रारम्भिक मध्य काल से सम्बन्धित किया जा सकता है ।

35. <u>जोगापुर गोहना</u> :

यह अकबरपुर-दोस्तपुर सडक पर अकबरपुर से 3.5 किलोमीटर दूर स्थित है । यह इस सडक से लगभग 1 किलोमीटर पश्चिम उत्तर है । इसके 2.5 किलोमीटर दूर उत्तर टोंस नदी है । यह लगभग 4 हेक्टेयर में फैला हुआ है॥फलक 26॥। आकस्मिक रूप से नींव की खुदाई से मिट्टी की मूर्ति व शिल मिला है ॥फलक 27॥

यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के बीडेड आउट रिम से युक्त बेसिन, चौड़े मुख वाली हाँड़ी तथा साधारण रिम वाले कटोरे प्राप्त हुए हैं । इन्हें ऐतिहासिक काल में रखा जा सकता है ।

36. <u>अकबरपुर</u> :

अकबरपुर फैजाबाद जिले का महत्त्वपूर्ण स्थल तथा तहसील भी है, जो फैजाबाद से लगभग 60 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में है । यह टोंस नदी के किनारे बसा है । यह अकबर के शासनकाल में सिझौली परगना के सूबेदार मोहसिन-खान द्वारा बसाया गया था । उसने टोंस नदी के बायें किनारे पर भरों से सम्बन्धित प्राचीन टीले के ऊपर एक किला बनवाया था । कहा जाता है कि पहले यह स्थान जंगल से ढका था । एक धार्मिक व्यक्ति सैयद कमाल यहाँ रहते थे जिन्हें डाकुओं ने मार डाला । किले में उसकी कब्र अब भी देखी जा सकती है । किले में फारसी भाषा में एक लेख उत्कीर्ण है जिसमें कहा गया है कि इसका निर्माण इस अधिकारी द्वारा अकबर के शासनकाल में 979 हिज़री में करवाया गया था । उसने नदी पर एक पुल का भी निर्माण कराया था । नदी के दूसरे किनारे पर शहजादपुर है जो बादशाह के पौत्र शाहजहाँ के नाम पर बसाया गया था । इसका इतिहास मुख्य रूप से पीरपुर के सैयद हाउस से जुड़ा है नदी के उस पार शाहजादपुर में एक विशाल इमामबाड़ा तथा बहुत सी मस्जिदें हैं ।

37. <u>सोनहरा लालापुर</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में रम्मनपुर नामक पुरास्थल के 1.5 किलो-मीटर दक्षिण में स्थित है । टोंस नदी इसके 3.5 किलोमीटर दक्षिण में है । यह

लगभग 5 हेक्टेयर में विस्तृत है । यह टीला तीन भागों में बँटा हुआ दिखायी देता है । इस टीले पर बीच-बीच में खेती होती है ﴾फलक 28-29﴿ । इस पुरा-स्थल पर लाल पात्र-परम्परा के बर्तन के टुकड़े व ईंट के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । कुछ एन0वी0पी0 पात्र-परम्परा के बर्तन के टुकड़े भी यहाँ बिखरे मिल जाते हैं । यहाँ साधु की एक कुटिया है । यहाँ पर एक आधुनिक मन्दिर है । मन्दिर में कई मूर्तियाँ रखी हुई हैं ﴾फलक 30﴿ । इनमें दो शिवलिंग काफी प्राचीन हैं क्योंकि ये पहले यहाँ मिट्टी में दबी पड़ी थी ﴾फलक 31﴿ । बरसात में मिट्टी बह जाने पर जब वे दिखायी पड़ी तो उनकी खुदाई करायी गयी । खुदाई में शिवलिंग मिल जाने पर वहीं पर मन्दिर बना दिया गया । यहाँ से प्राप्त मिट्टी के बर्तनों में लम्बी गर्दन का जार, छोटे गर्दन का जार, आड़ी-तिरछी डिजाइन वाला पोस्ट फायरिंग स्क्रैच डिजाइन से युक्त पात्र खण्ड हैं । अधिकांशत: भरों के टीले से मिलने वाला मिट्टी का लोढ़ा भी यहाँ उपलब्ध हुआ है ।

38. <u>रम्मनपुर</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में अकबरपुर इल्फातगंज मार्ग पर अकबरपुर से 5 किलोमीटर उत्तर व सड़क से 1.5 किलोमीटर पश्चिम स्थित है । इसके 4 किलोमीटर दक्षिण में थिरुआ नदी है । यह लगभग 2 हेक्टेयर क्षेत्रफल में है ﴾फलक 32﴿ । यहाँ से लाल-पात्र-परम्परा के चौड़े मुख वाले घड़े और धूम्रयुक्त हाँड़िया मिली हैं । यह स्थल मध्यकाल से सम्बन्धित किया जा सकता है ।

39. <u>लोदीपुर कटौता</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में है । यह अकबरपुर टाण्डा मार्ग पर

स्थित सूरापुर बाजार से लगभग 3 किलोमीटर पश्चिम में है । इसके उत्तर में 1.5 किलोमीटर दूरी पर थिरुआ नदी बहती है । यह लगभग 6 हेक्टेयर में फैला हुआ है । इसके कुछ भाग पर खेती की जाती है [फलक 33] । इस पुरास्थल पर बड़ी मात्रा में टूटे हुए ईंटें बिखरे मिलते हैं [फलक 34-35] । यहाँ से भी लाल पात्र-परम्परा के मृदभाण्ड मिले हैं । यहाँ से बलुआ पत्थर की एक टूटी हुआ पाषाण-खण्ड और मूर्तियाँ मिलीं हैं [फलक 37] । पत्थर की एक सिल भी यहाँ से मिली है । इस पुरास्थल पर सबसे महत्त्वपूर्ण भाग उसके उत्तरी किनारे पर स्थित शिव-मन्दिर का अवशेष है । यह मन्दिर 3 मीटर लम्बा, 3 मीटर चौड़ा वर्गाकार है। उसके बीचोंबीच शिवलिंग है [फलक 38] । स्थानीय लोगों से जानकारी मिलती है कि यह मन्दिर मिट्टी से दबा हुआ था जो बाद में मिट्टी की खुदाई करते समय मिला था । यहाँ से एक चर्ट पत्थर का टुकड़ा भी प्राप्त हुआ है [फलक 39] । खुदाई करते समय जब यहाँ शिवमन्दिर का अवशेष प्राप्त हुआ तब से यहाँ पर प्रतिवर्ष शिवरात्रि के दिन एक मेला लगता है ।

40. <u>लोरपुर ताजन</u> :

यह अकबरपुर तहसील में अकबरपुर जौनपुर मार्ग पर अकबरपुर से 4 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व में स्थित है । यहाँ उत्तर में एक बड़ा-सा तालाब है, जिसके मध्य एक बड़ा टीला है जिस पर सैयद ताज का सुन्दर मकबरा है । सैयद ताज के बारे में कहा जाता है कि वह अवध से यहाँ पर आया था और गोरी सल्तनत के समय यहाँ बस गया था । ऐसा कहा जाता है कि चोरों ने सम्पत्ति की खोज में इस मकबरे को नुकसान पहुँचाया था ।

41. <u>करतोरा</u> :

यह अकबरपुर मालीपुर सडक पर अकबरपुर से 7 किलोमीटर दूर मरैला सूती मिल के पास स्थित है . यह इस सडक के एक किलोमीटर उत्तर में है । इसका विस्तार लगभग 3 हेक्टेयर में है ꞉फलक 40꞉ । इस स्थल से लाल पात्र - परम्परा के वर्तन प्राप्त हुए हैं । इनमें चौड़ी मुख वाली हांड़ी, गोलाकार का घड़ा एवं कटोरा सम्मिलित हैं । सम्भवतः यह स्थल प्रारम्भिक मध्यकाल से संबंधित है ।

42. <u>मौखा</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में स्थित है । यह बसखारी अकबरपुर मार्ग पर स्थित बरियावन बाजार से 3 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में स्थित है । इसके 4 किलोमीटर दक्षिण में टोंस नदी बहती है । यह पुरास्थल लगभग 5 हेक्टेयर में विस्तृत है । इस पुरास्थल के अधिकांश भाग पर मकान बन गया है, कुछ भाग पर खेती भी होती है ꞉फलक 41꞉ । इस पुरास्थल से लाल पात्र-परम्परा के मृदभाण्ड तथा चपटी ईंटें मिलती हैं । इस पुरास्थल पर लगभग 7 मीटर ऊँचा एक शंक्वाकार टीला है जिसमें चपटी ईंटें लगाई गई हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्तूप रहा होगा ꞉फलक 42꞉ । यह पुरास्थल संभवतः कोई प्राचीन नगर था । यहाँ बरसात के समय लाल रंग की मिट्टी का बना एक मेनहोल मिला था जिसे स्थानीय लोगों ने पहले खोदा किन्तु उसे पूरा न निकाल पाने के कारण उसे तोडकर मिट्टी में ढँक दिया । यहाँ एक कुएँ में पत्थर की पट्टी पर एक छोटा सा लेख था ग्रामीणों के अनुसार इसे अवध विश्वविद्यालय के डॉ0 वासुदेव उपाध्याय खुदवाकर ले गये हैं । यहाँ पर दो पुराने कुएँ भी हैं ꞉फलक 43-44꞉ । यहाँ से प्राप्त लाल पात्र-परम्परा के

बर्तनों में लम्बी गर्दन के घड़े, चौड़े मुख की हांडियाँ, कलक्ड रिम के बेसिन सम्मिलित हैं। ये पात्रखण्ड मीडियम फैब्रिक के हैं।

43. <u>पहाणपुर टडवा</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में अकबरपुर वसखारी मार्ग पर स्थित वरियावन बाजार से लगभग 4 किलोमीटर उत्तर-पश्चिम में स्थित है। इस पुरास्थल के दक्षिण में लगभग 2 किलोमीटर दक्षिण टोंस नदी बहती है। यह पुरास्थल 2 हेक्टेयर में फैला हुआ है ॥फलक 45॥। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के चौड़े मुख वाले घड़े, बेसिन और प्रारम्भिक प्रकार के कटोरे प्राप्त हुए हैं। यह स्थल संभवतः प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से सम्बन्धित हैं।

44. <u>सहनेमऊ</u> :

यह पुरास्थल टाण्डा वरियावन पट्टी मार्ग पर अकबरपुर तहसील में सुल्तानगढ़ बाजार से 1 किलोमीटर दक्षिण में टोंस नदी के किनारे पर स्थित है। नदी के किनारे और लगभग 14 एकड़ में फैले होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि यह पुरास्थल काफी प्राचीन है। इस पुरास्थल पर पुरानी ईंट तथा उत्तरी काले चमकीले मृदमाण्ड ॥फलक 46॥ व लाल रंग के मृदमाण्ड ॥फलक 47॥ के टुकड़े बिखरे मिलते हैं। उपलब्ध पुरा सामग्री के आधार पर इस स्थल को प्रारम्भिक एन0बी0 पी0 संस्कृति से सम्बन्धित कर सकते हैं।

46. <u>कटाट</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर तहसील में अकबरपुर बसखारी मार्ग पर स्थित

वरियावन बाजार के 1.5 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। इस पुरास्थल के दक्षिणी भाग पर .6 किलोमीटर दूरी पर एक छोटा नाला बहता है। इसके लगभग 2 किलोमीटर दक्षिण में टोंस नदी है। यह पुरास्थल लगभग 2 हेक्टेयर में फैला है। इस पुरास्थल के एक भाग पर खेती की जाती है तथा कुछ भाग खलिहान हेतु प्रयोग में लाया जाता है (फलक 48)। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के बेसिन, चौड़े मुख वाले घड़े एवं हाँड़ियाँ प्राप्त हुई हैं। एक पात्रखण्ड पोस्ट फायरिंग तथा ग्रेफिटी के चिन्ह से युक्त हैं। यहाँ से उपलब्ध पात्रों को अच्छी तरह से पकाया गया है इसलिए इन वर्तनों में धातु जैसी खनक मिलती है।

46. <u>दसउवाँ फूलपुर</u> :

यह पुरास्थल टाण्डा फैजाबाद रोड पर टाण्डा से लगभग 15 किलोमीटर टाण्डा तहसील में स्थित है। यह स्थल इस सडक के 2.5 किलोमीटर दक्षिण है। इसके 3 किलोमीटर उत्तर में घाघरा नदी बहती है। यह लगभग 6 हेक्टेयर में फैला है। यहाँ पर दो टीले हैं जिसमें एक पूर्वी दिशा में है और दूसरा पश्चिमी दिशा में (फलक 49-50)। इनके उत्तरी दिशा में एक तालाब है। यहाँ ईंट और मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े काफी संख्या में बिखरे मिलते हैं। यहाँ से विभिन्न प्रकार के घड़े और बेसिन प्राप्त हुए हैं जो बनावट के आधार पर प्रारम्भिक ऐतिहासिककाल से लेकर ऐतिहासिक काल तक के हैं। स्टील ग्रे रंग के एन0वी0पी0 के कटोरे और बेसिन इस स्थल को प्रारम्भिक एन0वी0पी0 काल से सम्बन्धित करते हैं।

47. <u>इल्फातगंज</u> :

यह टाण्डा तहसील में घाघरा नदी के किनारे है। पहले यह नयपुर के

नाम से जाना जाता था । नवाब सफ्दरजंग के समय में यहाँ के जागीरदार ख्वाजा इल्फत-अली-खान ने यहाँ एक बाजार बनाना प्रारम्भ किया और तभी से इसका नाम इल्फतगंज पड़ गया । यहाँ पर ऐतिहासिक काल से सम्बन्धित पुरा सामग्री प्राप्त होती है ।

48. <u>डिहवा दौलतपुर</u> :

यह पुरास्थल टाण्डा इल्फातगंज-फैजाबाद मार्ग पर स्थित टाण्डा थर्मल पावर से 4 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम स्थित है । यह घाघरा नदी से 3.5 किलोमीटर दक्षिण है । यह पुरास्थल 4 हेक्टेयर क्षेत्र के लगभग विस्तृत है ‡फलक 51‡ । इस पुरास्थल के एक बड़े भाग पर खेती तथा कुछ भाग पर खलिहान किया जाता है। इस पुरास्थल पर एक कुँआ है तथा इसके ऊपरी भाग से लाल पात्र-परम्परा के मृद्-भाण्ड मिले हैं । इस पुरास्थल के ऊपरी सतह पर गोल और चौकोर भट्ठियों के निशान दिखायी पड़ते हैं ‡फलक 52-53‡ । उससे ऐसा लगता है कि यहाँ पर कोई छोटा कारखाना रहा होगा । इस पुरास्थल से लाल पात्र-परम्परा के दो जार, तीन बेसिन या नाद, दो हांड़ियाँ ~~सा~~ दो लिड या ढक्कन प्राप्त हुए हैं । यहाँ से 9.4 सेंटीमीटर लम्बा, 11.3 सेंटीमीटर चौडा और 6.1 सेंटीमीटर मोटा एक त्रिभुजाकार बलुआ पत्थर का टुकड़ा उपलब्ध हुआ है ।

49. <u>विहरई</u> :

यह टाण्डा तहसील में टाण्डा इल्फातगंज मार्ग पर टाण्डा थर्मल पावर से 3 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम है । यह पुरास्थल लगभग 4 हेक्टेयर में फैला है । इसके

निचले भाग पर कृषि कार्य किया जाता है एवं कुछ हिस्से पर आबादी है (फलक 54)। यहाँ पर लाल रंग के मृदभाण्ड मिले हैं। यहाँ से मिट्टी की एक खण्डित मूर्ति भी सर्वेक्षण के दौरान मिली है जिसे ग्रामीणों ने मकान बनवाने के लिए नींव की खुदाई के दौरान निकाला था। यह टिपिकल कुषाण परम्परा की हारीति की मूर्ति प्रतीत होती है (फलक 55)। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के बेसिन, हाँड़ी, और ढक्कन प्राप्त हुए हैं। इस स्थल को कुषाण काल से सम्बन्धित कर सकते हैं।

50. <u>खैरपुर</u> :

यह पुरास्थल टाण्डा तहसील में टाण्डा इल्फातगंज मार्ग पर टाण्डा से 6 किलोमीटर दूर स्थित है। यह घाघरा नदी से एक किलोमीटर दक्षिण में है। यह टीला लगभग दो हेक्टेयर में फैला है। इसके अधिकांश भाग पर खेती की जाती है (फलक 56)। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के वर्तन के टुकड़े मिलते हैं। यहाँ से चौड़े मुख वाले दो घड़े, दो कैरीनेटेड हाँड़ियाँ, बड़ा स्टोरेज जार, कलब्ड रिम से युक्त छिछला कटोरा तथा कुषाण परम्परा का एक टोंटीदार बर्तन प्राप्त हुआ है। प्राप्त पुरावशेषों के आधार पर इस स्थल को कुषाणकाल से सम्बन्धित किया जा सकता है।

51. <u>दहियावर दरवेशपुर</u> :

यह पुरास्थल अकबरपुर टाण्डा मार्ग पर टाण्डा तहसील में स्थित है। यह अकबरपुर टाण्डा मार्ग पर स्थित सूरापुर बाजार के 1 किलोमीटर पश्चिम की ओर नहर के किनारे स्थित है। इसके 1.5 किलोमीटर उत्तर में थिरुआ नदी है।

यह लगभग दो हेक्टेयर में फैला हुआ है । इसके कुछ भाग पर खेती की जाती है । इस स्थल से लाल पात्र-परम्परा के पात्रखण्ड उपलब्ध हुए हैं जिसमें नाइफ एज्ड कटोरे व चौड़े मुख वाले घड़े सम्मिलित हैं । यहाँ से लूप हैण्डिल से युक्त ढक्कन भी प्राप्त हुआ है । यहाँ के कुछ बर्तनों को पका लेने के बाद आड़ी तिरछी रेखायें खींचकर अलंकृत करने के प्रमाण मिले हैं ।

52. दिहरोजपुर :

यह पुरास्थल अकबरपुर टाण्डा मार्ग पर स्थित सूरापुर बाज़ार के पास टाण्डा तहसील में स्थित है । यह पुरास्थल लगभग 6 हेक्टेयर में विस्तृत है । यहाँ पर काफी टूटे हुए ईंट बिखरे मिलते हैं (फलक 57-58) । यहाँ से लाल पात्र-परंपरा के मृद्भाण्ड भी मिले हैं । इस पुरास्थल के उत्तरी पूर्वी किनारे पर एक टीला लगभग 1.5 मीटर ऊँचा है जिसके चारों ओर परिखा के अवशेष दिखायी पड़ते हैं । यह ऊँचा भाग वर्गाकार है जो 25 मीटर लम्बा और इतना ही चौड़ा है । यह पुरास्थल थिरूआ नदी से लगभग 1.5 किलोमीटर दक्षिण है । ऐसा प्रतीत होता है कि यह सामन्त का केन्द्र रहा होगा । यहाँ से पकी मिट्टी के दो लोढ़े जिसमें एक पर कपड़े की छाप है, प्राप्त हुआ है । लाल पात्र-परम्परा के बर्तनों में कैरीनेटेड हांड़ियाँ, घड़े और टोंटी प्राप्त हुए हैं ।

53. समसुद्दीनपुर :

यह लघु पुरास्थल टाण्डा कस्बे से 3 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में स्थित है । यह लगभग 2 हेक्टेयर में है (फलक 56) । इसके अधिकांश भाग पर खेती की जाती है और शेष भाग पर बस्ती बसी है । इसका कुछ भाग अभी भी खाली पड़ा

है । यह घाघरा से 6 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में व थिरूआ नदी के 3 किलोमीटर उत्तर में है । सर्वेक्षण के दौरान यहाँ से भी लाल पात्र-परम्परा के बर्तन उपलब्ध हुए हैं जिसमें लम्बी गर्दन, इवरटेड रिम वाले ग्लोबुलर जार, मोटे अनुभाग वाले बड़े आकार के बेसिन तथा ढक्कन प्राप्त हुए हैं । पात्र प्रकारों के आधार पर इस स्थल को परवर्ती एन0वी0पी0 संस्कृति से सम्बन्धित किया जा सकता है ।

54. <u>ब्राहिनपुर सगरा</u> :

यह पुरास्थल टाण्डा तहसील में टाण्डा कस्बे से 3 कि0मी0 दक्षिण स्थित है । इसके दक्षिण पूर्व में 1 किलोमीटर दूर थिरूआ नदी है । यह लगभग 5 हेक्टेयर में फैला है (फलक 60) । इस स्थल पर ईंट के टुकड़े व लाल रंग के बर्तन के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । लाल पात्र-परम्परा के बर्तन (फलक 61) में बीडेड रिम और लम्बी गर्दन वाले जार, चौड़े मुख और क्लब्ड रिम वाले जार, इवर्टेड रिम के जार तथा छिछले कटोरे उपलब्ध हुए हैं । इसमें से कुछ पात्र प्रकार प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल के हैं ।

55. <u>टाण्डा</u> :

यह फैजाबाद जिले के पूर्वी भाग में घाघरा नदी के किनारे स्थित है । यह स्थान बंजारों का मुख्य केन्द्र था । कुछ समय बाद यह एक कस्बे में बदल गया और बादशाह फारूखशियर ने इसे रसूलपुर के शेख परिवार के मुहम्मद हयात को दे दिया । इसके बाद कस्बे का बहुत विकास हुआ । यहाँ बुनकरों ने अपनी कार्यकुशलता के कारण बहुत प्रसिद्धि पा ली थी । एक यूरोपीय व्यापारी जान स्काट यहीं बस गया और वस्त्र व्यापार के विकास में रचनात्मक सहयोग दिया था ।

टाण्डा के 1.6 किलोमीटर पश्चिम आसोपुर में शेख हारून का मकबरा है जो यहाँ लगभग 1420 ई0 में आये थे। इसके एक किलोमीटर पश्चिम हुसेन अली का इनामबाड़ा तथा राजमीरों द्वारा बनाया गया चबूतरा है।

56. सुन्थर :

यह पुरास्थल टाण्डा बसखारी रोड पर टाण्डा से 6 किलोमीटर दूरी पर सड़क के उत्तर दिशा में स्थित है। यह स्थल लगभग 3 हेक्टेयर भू-भाग तक विस्तृत है (फलक 62)। यह घाघरा नदी के लगभग 6 किलोमीटर दक्षिण में है। इस टीले पर ईंटों के टुकड़े बिखरे पड़े हैं (फलक 63)। इस टीले पर साधु की एक कुटी है। कुटी के पास एक गुफा है (फलक 64)। यहाँ रह रहे एक साधु के अनुसार यहाँ एक मन्दिर में हनुमानजी की मूर्ति इसी गुफा से निकालकर स्थापित की गयी है (फलक 65)। इस पुरास्थल से लाल पात्र-परम्परा के सात बेसिन, दो जार और एक कटोरा उपलब्ध हुआ है। यहाँ से पकी मिट्टी के अलंकृत गदा के आकार का लोटा उपलब्ध हुआ है (फलक 66)। इस तरह की सामग्रियाँ अधिकांशतः भरों से सम्बंधित टीलों से मिलती है लेकिन इस पुरास्थल से एन0वी0पी0 काल के धूसर पात्र के कुछ कटोरे प्राप्त हुए हैं। इससे प्रतीत होता है कि यह स्थल काफी लम्बे समय तक आबाद था।

57. उमरापुर :

यह लघु पुरास्थल जिले के टाण्डा तहसील में बसखारी जलालपुर मार्ग पर स्थित किछौछा कस्बे से 1 किलोमीटर पश्चिम है। यह पुरास्थल लगभग 1 हेक्टेयर

में फैला है । इस पुरास्थल के तीन चौथाई भाग पर कृषि कार्य किया जाता है । सर्वेक्षण में यहाँ से भी लाल पात्र-परम्परा मिले हैं । इस पुरास्थल के लगभग 2.5 किलोमीटर पूर्व में एक छोटा नाला बहता है जिसे टोंड़ी नदी कहा जाता है ।

58. अंसरफपुर किछौछा :

यह पुरास्थल जिले के टाण्डा तहसील में है । यह अकबरपुर से आजमगढ़ जाने वाली सड़क पर स्थित बसखारी कस्बे से 1.5 किलोमीटर दक्षिण पूर्व है । इसी के पास से टोनरी नदी बहती है । यहाँ पर कई छोटे छोटे टीलें हैं जिन पर लाल रंग के मृदमाण्डों के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । यहाँ पर कमालुद्दीन नामक एक सन्त की कब्र है जिसे हिन्दू और मुसलमान बड़ी श्रद्धा से देखते हैं । कहा जाता है कि कमालुद्दीन पहले हिन्दू थे और उनका नाम पण्डित दर्पणनाथ था, बाद में उन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया । इसका नाम महान संत मकदूम असरफ से जुड़ा है । इनकी चौथी पीढ़ी में ज़फरशाह हुए जिन्होंने भरों को यहाँ से निकाल कर अपने कब्जे में कर लिया । उसके छोटे भाई शाह मुहम्मद ने इसके निकट एक गाँव बसाया जिसको अंसरफपुर कहा जाता है । ऐतिहासिक दृष्टि से इस स्थल का महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

59. रसूलपुर दरगाह :

यह टाण्डा तहसील में मुसलमानों का एक महत्त्वपूर्ण पूजा-स्थल है जो किछौछा कस्बे से लगा हुआ है । यहाँ पर प्रसिद्ध सन्त मकदूम शेख जहाँगीर असरफ की दरगाह है । कहानियों के अनुसार यह राजा इब्राहिम शाह का पुत्र था और

15 वर्ष के उम्र में इस्पाहन का राजा बना और 7 साल शासन करने के बाद उसने अपने छोटे भाई मुहम्मद शाह के पक्ष में सत्ता छोड़ दी और यह निश्चय किया कि वह अपना ध्यान धर्म में लगायेगा . उसने भारतीय तीर्थ-स्थानों का भ्रमण किया और बंगाल के पहुआ के शाह अला-उल-हक का शिष्य हो गया । उसने इसे जहाँगीर का खिताब दिया । वह इधर उधर भ्रमण करता हुआ जौनपुर आया और यहाँ के सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की से भेंट की । उसने उसे यहीं बसने का निवेदन किया किन्तु वह रसूलपुर चला गया जो प्रसिद्ध पण्डित दर्पणनाथ का स्थान था । अन्ततोगत्वा पण्डित दर्पणनाथ ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया और अपना नाम कमालुद्दीन रख लिया । मकदूम असरफ ने यहीं अपना जीवन बताया । यहीं पर ऊँचाई पर मकदूम असरफ की समाधि है ।

60. <u>रामडीहसराय</u> :

यह टाण्डा तहसील में बसखारी आजमगढ मार्ग पर बसखारी से 6 किलोमीटर दक्षिण पूर्व टोनरी नामक एक छोटी नदी के किनारे स्थित है । यह लगभग 3 हेक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ है । इसके अधिकांश भाग पर खेती की जाती है । यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के विभिन्न प्रकार के घड़े, कटोरे और बेसिन प्राप्त हुए हैं । यहाँ से एक हैण्डलयुक्त पात्रखण्ड भी प्राप्त हुआ है । यहाँ से प्राप्त एक बर्तन पर बुनी हुई रस्सी का आसंजक (एपलीक) अलंकरण बना है । यहाँ के कुछ पात्र प्रारंभिक ऐतिहासिक काल के हैं ।

61. <u>अहरौली गोविन्द साहब</u> :

गोविन्द साहब अकबरपुर आजमगढ रोड पर स्थित टाण्डा तहसील का एक

प्रसिद्ध स्थान है । यहाँ गोविन्द साहब नामक एक विख्यात साधु की समाधि तथा उसके पास एक तालाब है । यह टोनरी नदी के किनारे स्थित है जो इसके दक्षिणी सीमा से प्रवाहित होती है ।

62. <u>बिड़हर</u> :

यह टाण्डा तहसील का एक गाँव है जो फैजाबाद से 75 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में स्थित है । उसके समीपवर्ती क्षेत्र में भरों से सम्बन्धित टीले स्थित हैं। यह घाघरा नदी से 2 किलोमीटर दक्षिण में है ।

63. <u>मुबारकपुर</u> :

यह टाण्डा तहसील में घाघरा नदी के किनारे स्थित है । इसे मुबारकपुर नामक सूबेदार ने बसाया था । यह एक पुराना स्थान है, जो टाण्डा के शेखों से सम्बन्धित है ।

64. <u>बलरामपुर</u> :

यह जिले के पूर्वी भाग में टाण्डा तहसील में स्थित है । इसके दक्षिण में छोटी सरयू नदी बहती है । कहा जाता है कि यह बिड़हर के पलवारों के पूर्वज बलराम द्वारा बसाया गया था । बाद में यहाँ एक बाजार स्थापित किया गया जो राजे सुल्तानपुर के नाम से जाना जाता है । यह स्थान पलवार तालुका का मुख्यालय था । 1857 ई0 के विद्रोह के समय यहाँ का किला काफी मजबूत था, किन्तु बाद में बरबाद हो गया । पहले जिले के इस भाग में सती-प्रथा का काफी प्रचलन था । इस स्थान के नजदीक एक मैदान सती स्मारकों से पूर्ण है ।

65. <u>कहरासुलेमपुर</u> :

यह स्थल अकबरपुर बसखारी मार्ग पर स्थित वरियावन बाजार से लगभग 3 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व है । इसके पश्चिम में लगभग 800 मीटर दूरी पर एक छोटा नाला है । टौंस नदी इसके 2 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में है । यह लगभग 3 हेक्टेयर में फैला हुआ है । इसके अधिकांश भाग पर खेती की जाती है । इस पुरास्थल के दक्षिणी पश्चिमी भाग पर एक ऊँचा टीला है । जिस पर बहुत सी झाड़ियाँ उगी हैं ‡फलक 67‡ । यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के मृदभाण्ड ‡फलक 68‡ मिले हैं जिनमें घड़े ‡इवेर्टेड कलर्ड रिम, कालर्ड रिम से युक्त‡ कैरीनेटेड हाँडी, बड़े आकार के बेसिन जिस पर पकने के पहले क्रिस-क्रास ‡आर-पार‡ की रेखीय डिजाइन बनायी गई है । यह पात्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है । संभवत: इस स्थल का सम्बन्ध प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से है ।

66. <u>सुरहुरपुर</u> :

सुरहुरपुर जलालपुर तहसील में मझुई नदी के किनारे स्थित है । यह एक प्राचीन गाँव है और यहाँ प्राचीन किले का खण्डहर है । इसके विषय में कहा जाता है कि यह सोहनदल नामक भर सरदार के कब्जे में था । यह भी कहा जाता है कि यह शुभ नाथ नामक एक सन्यासी का आवास था । सैयद सालार ने उस पर आक्रमण किया और उसकी रक्षा कर रहे बहुत से भरों को मार दिया । यहाँ पर दो मुस्लिम पीरों की कब्र है । एक सरवर पीर की दरगाह के नाम से जानी जाती है और दूसरी शाहनूर की दरगाह ।

67. <u>सम्मसपुर रूकनुद्दीनपुर</u> :

यह पुरास्थल जलालपुर अकबरपुर मार्ग पर अकबरपुर से 17 किलोमीटर दूर पट्टी चौराहे से उत्तर दिशा में 4 किलोमीटर दूर जलालपुर तहसील में स्थित है । इसके पूर्व में लगभग 1 किलोमीटर दूरी पर टोंस नदी है । यह पुरास्थल लगभग 3.5 हेक्टेयर में फैला है । इस स्थल पर ईंट के टुकड़े व लाल पात्र-परम्परा के बर्तन के टुकड़े बिखरे मिलते हैं (फलक 69-70) । लाल पात्र-परम्परा के बर्तनों में प्रारम्भिक प्रकार के सादे रिम वाले कटोरे, बेसिन, चोंचदार और इवर्टेड रिम वाले घड़े प्राप्त हुए हैं ।

68. <u>पखरपुर</u> :

यह पुरास्थल जलालपुर बसखारी मार्ग पर करबला बाजार के पास सड़क से 2 किलोमीटर पश्चिम टोंस नदी के किनारे जलालपुर तहसील में स्थित है । इस पुरास्थल पर भट्टियों के अवशेष मिलते (फलक 71-72) हैं जिसमें अधिकांश गोलाकार हैं । कुछ भट्ठियाँ वर्गाकार भी हैं । लाल भूरे पात्र-परम्परा के बर्तन व ईंट के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । कुछ एन0वी0पी0 पात्र-परम्परा के बर्तन के टुकड़े मिलते हैं । यह पुरास्थल काफी प्राचीन और महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है । इस स्थल से लाल पात्र-परम्परा के चौड़े मुख वाले घड़े और हाँड़ियाँ प्राप्त हुए हैं ।

69. <u>गौसपुर ककरहिया</u> :

यह पुरास्थल जलालपुर बसखारी मार्ग पर करबला बाजार से 1.5 किलोमीटर दक्षिण है । यह लगभग 3 हेक्टेयर में फैला है (फलक 73-74) । यहाँ से

लगभग 700 मीटर पश्चिम एक और टीला है जो लगभग 4 हेक्टेयर में है । इसके पश्चिम में टोंस नदी है । इन टीलों मे लाल पात्र-परम्परा के बर्तन व ईंट के टुकड़े बिखरे मिलते हैं । दूसरे टीले के कुछ भाग पर खेती की जाती है । दूसरे टीले पर एक शिव मन्दिर बना है । मौरबा से प्राप्त पात्र परम्पराओं की तरह यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के घड़े प्राप्त हुए हैं ।

70. <u>रुकुनपुर</u> :

यह पुरास्थल जलालपुर तहसील में जलालपुर से 3 किलोमीटर पश्चिम-उत्तर में स्थित है । इस ग्राम-सभा में 2 टीले विद्यमान हैं । एक गाँव के पश्चिम में (फलक 75) और दूसरा उत्तर (फलक 76) में । पश्चिमी टीला लगभग 2 हेक्टेयर में है । टीले के दक्षिण में 1.5 किलोमीटर पर टोंस नदी है । इस टीले के अधिकांश भाग पर खेती की जाती है ।

दूसरा टीला जो गाँव के उत्तर में है लगभग 4 हेक्टेयर में फैला है । यहाँ पर लाल पात्र-परम्परा के बर्तन के टुकड़े व ईंट काफी संख्या में बिखरे मिलते हैं । यहाँ पर पक्की ईंट के दीवार का अवशेष भी है (फलक 77) । इस पर एक मजार है । यहाँ के लाल पात्र-परम्परा के बर्तनों में लम्बी गर्दन वाले बीडेड रिम से युक्त घड़े, कालरयुक्त रिम वाले घड़े, चौड़े मुख वाले घड़े और कैरीनेटेड हाँडियाँ प्राप्त हुई हैं । सम्भवतः यह स्थल प्रारम्भिक मध्यकाल से सम्बन्धित हैं ।

71. <u>एलनपुर भिटौरा</u> :

यह पुरास्थल भी जलालपुर तहसील में है । यह बसखारी जलालपुर मार्ग

पर स्थित करबला बाजार से 1 किलोमीटर पश्चिम है। यहाँ से लाल एवं काले रंग के मिट्टी के बर्तन के टुकड़े बिखरे मिलते हैं। यह पुरास्थल भी 2 हेक्टेयर में फैला है (फलक 78)। इस स्थल से लाल पात्र-परम्परा के घड़े और ग्लोबुलर बेसिन मिले हैं। एक पात्रखण्ड ब्लैक एण्ड रेड वेयर का भी है।

72. <u>महुअल</u> :

यह पुरास्थल बसखारी जलालपुर मार्ग पर जलालपुर से लगभग 18 किलोमीटर उत्तर जलालपुर तहसील में स्थित है। यह पुरास्थल एक तालाब के किनारे है और लगभग 3 हेक्टेयर में फैला है (फलक 79)। इसके 1.5 किलोमीटर उत्तर-पूर्व में टोनरी नदी है। इस स्थल पर ईंट व मिट्टी के बर्तन के टुकड़े बिखरे मिलते हैं। इस पुरास्थल के कुछ भाग पर खेती की जाती है। इस स्थल से फाइन फैब्रिक-धूसर पात्र-परम्परा के आकार-रहित पात्र-खण्ड और लाल पात्र-परम्परा के चौड़े मुख वाले तीन घड़े तथा दो हाँड़ी के टुकड़े प्राप्त हुए हैं।

73. <u>महरा</u> :

यह पुरास्थल जलालपुर बसखारी मार्ग पर महुअल से 5 किलोमीटर पूर्व स्थित है। यह टोनरी नदी से 2.5 किलोमीटर दक्षिण में है। यह लगभग 4 हेक्टेयर में फैला है (फलक 80)। यहाँ से लाल पात्र-परम्परा के बर्तन मिले हैं। सर्वेक्षण में यहाँ से एक बलुआ पत्थर का लोढ़ा भी प्राप्त हुआ है। इस स्थल को प्रारम्भिक मध्यकाल से सम्बन्धित कर सकते हैं।

74. <u>जलालपुर</u> :

यह फैजाबाद से 80 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में टोंस नदी के किनारे स्थित है । इसका जलालपुर नाम मोहम्मद जलालुद्दीन अकबर के नाम पर रखा गया । जलालपुर एक संत गोविन्द साहब के जन्म-स्थान के रूप में जाना जाता है ।

75. <u>मिन्तूपुर</u> :

यह पुरास्थल जलालपुर तहसील में जलालपुर के तीन किलोमीटर दक्षिण में स्थित है । यह तीन हेक्टेयर में फैला है {फलक 81} । इसके 2 किलोमीटर दक्षिण में टोंस नदी बहती है । यहाँ मिडियम से कोर्स फैब्रिक के लाल पात्र-परम्परा के चौड़े मुख वाले घड़े, हाँड़ियाँ और बेसिन मिलते हैं ।

76. <u>नगपुर</u> :

यह जलालपुर तहसील में टोंस नदी के तट पर स्थित है । इसे 1610 ई0 के लगभग सैयद नागी ने बसाया था । इसके पास इन्डवा गाँव है जहाँ एक बड़ा ईमामबाड़ा है । इस इमामबाड़े को यार मुहम्मद नामक एक स्थानीय जुलाहे ने बनवाया था । यहाँ मुहर्रम को बहुत बड़ा मेला लगता है । यहाँ एक दूसरा ईमामबाड़ा और करबला है जिसका निर्माण 1880 ई0 में हुआ था । इसके दीवार पर अरबी में लेख उत्कीर्ण है ।

## खण्ड ब : उत्खनन

फैजाबाद जनपद में प्राचीन अयोध्या से संबंधित कतिपय ऐसे टीलों का पुरातात्विक उत्खनन किया गया है जो रामायण से संबंधित है । पुरातात्विक उत्खनन, जैसा कि हम जानते हैं, एक शोधार्थी की शक्ति-सीमा से परे है, इसलिए शोध-संस्थानों, विश्वविद्यालयों और अन्य पुरातात्विक संस्थानों द्वारा किये गये उत्खननों से प्राप्त साक्ष्यों का विवेचन प्रस्तुत करना ही यहाँ अभीष्ट है ।

अयोध्या के ऐतिहासिक, पौराणिक और धार्मिक महत्त्व के बारे में हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं । अयोध्या में प्राचीन ध्वंसावशेष लगभग 4-5 किलोमीटर की परिधि में फैले हुये हैं जो समीपवर्ती धरातल से लगभग 10 मीटर ऊँचे हैं । इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विजय शंकर दुबे ने 1961-62 में अयोध्या के कई टीलों का सर्वेक्षण किया था और यहाँ की पुरातात्विक सम्पन्नता की ओर संकेत किया था । उन्हें सरयू नदी के तट पर 7.60 मीटर मोटे नदी के अनुभाग से एन०बी०पी० पात्र-परम्परा के बर्तन और इसके साथ मिलने वाले अन्य पात्र-परम्पराओं के पात्र-खण्ड उपलब्ध हुये थे । रिंगवेल और सोकेज जार के भी यहाँ पर विद्यमान थे ।[1] इस स्थल की प्राचीनता तथा सांस्कृतिक अनुक्रम के निर्धारण के लिए 1969-70 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के ए०के० नारायण ने टी०एन० राय और पुरुषोत्तम सिंह की सहायता से उत्खनन किया था । सरयू नदी द्वारा काटे गये इसके प्राचीन अनुभागों में दीर्घकालीन आवास के प्रमाण मिलते हैं जो अयोध्या के प्राचीन स्थल के

---

1. इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू, 1961-62, पृष्ठ 53.

उत्तरी भाग में आवासीय प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरातात्विक दल ने यहाँ 3 स्थलों पर उत्खनन कार्य किया था - जैन घाट के समीप लक्ष्मण टेकरी और नल टीला।[1] प्रथम दो स्थलों के उत्खननों में तीन सांस्कृतिक कालों का अनुक्रम प्राप्त हुआ था। यहाँ प्रथम और द्वितीय काल में सातत्यता थी पर तृतीय काल के पहले समय का एक अन्तराल था। तीसरे स्थल, जो अपेक्षाकृत निचले धरातल पर है, के उत्खनन में केवल प्रथम सांस्कृतिक काल के प्रमाण उपलब्ध हुये थे। प्रथम सांस्कृतिक काल में एन0बी0पी0 वेयर (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र-परम्परा), मोटा ग्रे-वेयर और इसका समकालीन रेड-वेयर के पात्र-खण्ड प्राप्त हुये हैं। इस काल की अन्य पुरा-सामग्रियों में पकी हुई मिट्टी का चक्र, गोलियाँ, पहिये, हड्डी के बने हुए वाणाग्र तथा तांबे, क्रिस्टल, शीशा और मिट्टी के बने हुए मनके उल्लेखनीय हैं। इस सांस्कृतिक काल के परवर्ती धरातल से भूरे रंग की 6 मानव मृण्मूर्तियाँ, कई पशु मृण्मूर्तियाँ और दो अयोध्या-सिक्के उपलब्ध हुये हैं। इस उत्खनन में कुछ लौह उपकरण भी प्राप्त हुये हैं। उल्लेखनीय है कि अयोध्या नगर की कुछ ताम्र मुद्रायें जिन पर प्रथम शताब्दी ई0पू0 की ब्राह्मी लिपि में 'अजुधे' लिखा है 1970-71 में भी मिली थीं।[2]

इस पुरातात्विक दल ने कुबेर टीले का भी गहन सर्वेक्षण किया था जिसकी पहचान, जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, कनिंघम ने बौद्ध स्तूप से की थी।

---

1. इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू, 1969-70, पृष्ठ 40-41.
2. इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू, 1970-71, पृष्ठ 63.

यहाँ 39 x 23 x 6 सेंमी० के आकार के ईंटों से निर्मित प्राचीन स्मारक के कई स्तर प्राप्त हुये थे।

'आर्क्यालजी आफ दि रामायण साइट्स' प्रोजेक्ट के अन्तर्गत सेन्टर आफ एडवान्स्ड स्टडी शिमला के बी०बी० लाल ने भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण के के०वी० सौन्दरराजन तथा के०एन० दीक्षित के साथ सम्मिलित रूप से ~~तथा~~ रामकथा से संबंधित अयोध्या के 14 स्थलों का 1975-76, 1976-77 तथा 1979-80 ई० में उत्खनन किया था।[1]

अयोध्या नगर के प्राचीन क्षेत्रों के दो प्रमुख स्थलों का उत्खनन कार्य 1976 77 में किया गया - पहला रामजन्मभूमि टीला का और दूसरा हनुमानगढ़ी के पश्चिम में स्थित खुले हुए क्षेत्र में। इसके अतिरिक्त सीता की रसोई-स्थल पर भी कुछ उत्खनन हुआ। उत्खनन में स्थल की प्राचीनता निर्धारण में कतिपय महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आये। यहाँ पर सर्वप्रथम मानव आवासीय जमाव उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा [एन०बी०पी०डब्लू०] संस्कृति का था जिसमें कई रंगों के एन० बी०पी० पात्र खण्ड उपलब्ध हुए हैं। एन०बी०पी० पात्र-परम्परा के साथ धूँधले काले

-----------------

1. इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू, 1976-77-, पृष्ठ 52-53.

   इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू, 1979-80, पृष्ठ 76-77.

रंग से चित्रित रेखीय चित्रों से युक्त धूसर रंग के पात्र-खण्ड भी उपलब्ध हुए थे।[1] जो श्रावस्ती, [illegible], कौशाम्बी, आदि स्थलों से चित्रित धूसर पात्र-परम्परा (पी०जी०डब्लू०) के समान हैं। ये पात्र-खण्ड हस्तिनापुर, मथुरा और अहिच्छत्र के चित्रित धूसर पात्र-परम्परा की संस्कृति के परवर्ती चरण का प्रतिनिधित्व करते हैं। मथुरा, श्रावस्ती, कौशाम्बी आदि स्थलों से प्राप्त तिथियों के आलोक में उत्खनन कर्ताओं ने जन्मभूमि के इस आवासीय जमाव का तिथि सातवीं श०ई०पू० निर्धारित की है। यह टीला तृतीय शताब्दी ई० तक आबाद रहा जैसा कि कई निर्माणात्मक चरणों से प्रतीत होता है। प्रारम्भिक चरणों में लकड़ी, घास-फूस और मिट्टी के घरों का निर्माण किया जाता था, लेकिन बाद में पकी ईंटों का प्रयोग किया जाने लगा। जन्मभूमि क्षेत्र के उत्खनन में ईंटों से निर्मित एक विशाल दीवाल के प्रमाण उपलब्ध हुए हैं जिसकी पहचान रक्षा-प्राचीर से की जा सकती है (फलक 82)। इस विशाल दीवाल के ठीक नीचे कच्ची मिट्टी की ईंटों से निर्मित एक ढाँचा उपलब्ध हुआ था। इस चरण के ऊपरी धरातल में - जिसे संभवतः तृतीय श०ई०पू० से प्रथम श०ई०पू० के मध्य के रक्षा-प्राचीर के परवर्ती चरण से संबंधित किया जा सकता है -

---

1. अयोध्या में बी०बी० लाल द्वारा किये गये उत्खनन में निचले धरातल से चित्रित धूसर पात्र-परम्परा के जो पात्र-खण्ड उपलब्ध हुए हैं उनका फैब्रिक (अनुभाग) मोटा है और उन पर धुंधले रेखीय चित्र बने हैं। ऐसे पात्र-खण्ड कौशाम्बी के उत्खनन से भी उपलब्ध हुए हैं। क्योंकि ये पात्र-खण्ड विशिष्ट (टिपिकल) चित्रित धूसर पात्र खण्डों से भिन्न हैं इसलिए इन्हें पुरातत्वविद चित्रित धूसर पात्र-परम्परा की संस्कृति के स्थलों के अन्तर्गत नहीं रखते - देखिए - अग्रवाल, डी० पी०, 1984, <u>आर्क्यालजी आफ इण्डिया</u>, पृष्ठ 253.

पकी मिट्टी के रिंगवेल प्राप्त हुए हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि रक्षा-प्राचीर एक गहरी खाई से युक्त थी, जो आंशिक रूप से प्राकृतिक मिट्टी में खोदी गयी थी । इसी तरह हनुमानगढ़ी के पास के उत्खनन में भी एन0बी0पी0डब्लू0 और परवर्ती कालों के ढाँचे, कई प्रकार के रिंगवेल जिसमें परवर्ती एन0बी0पी0 काल में मिलने वाले वेज आकार के ईंटों से निर्मित कुएं भी सम्मिलित हैं, प्राप्त हुए हैं (फलक 83) अयोध्या के प्राचीन टीलों के अधिकांश भाग संभवत: नदी द्वारा बहा दिये गये हैं । एन0बी0पी0 जमाव के ऊपर यहाँ गहरे लाल रंग का जला हुआ स्तर है ।[1] इस प्रमाण के आधार पर शुंगों की द्वितीय राजधानी अयोध्या में पतंजलि द्वारा उल्लिखित इण्डो-यूनानी आक्रमण का संकेत मिलता है । इसी अग्निकाण्ड के कारण अयोध्या में एक युग का अन्त हुआ और एन0बी0पी0 संस्कृति नष्ट हुई ।[2]

इस उत्खनन में बहुत सी महत्त्वपूर्ण पुरासामग्रियाँ उपलब्ध हुई थीं - लगभग आधा दर्जन मुहरें, 70 सिक्के और एक सौ से अधिक मृण्मूर्तियाँ । इसमें राजा वासुदेव की मिट्टी की मुहर विशेष उल्लेखनीय है (फलक 83 बी) इस राजा के द्वितीय शताब्दी ई0पू0 के अयोध्या के सिक्के भी उपलब्ध हुए हैं । इसी काल से संबंधित मूलदेव का एक सिक्का और एक भूरे रंग की कायोत्सर्ग मुद्रा में मानव मृण्मूर्ति (जो जैन केवलिन की प्रतीत होती है) उपलब्ध हुई है (फलक 83) । चतुर्थ श0ई0पू0 के

-----------------

1. बी0बी0 लाल से जी0आर0 शर्मा को व्यक्तिगत जानकारी ।

2. शर्मा, जी0आर0, 1980, रेह इन्स्क्रिप्सन आफ मेनाण्डर एण्ड इण्डोग्रीक इनवेजन आफ दि गंगा वैली ।

धरातल से उपलब्ध यह मृण्मूर्ति संभवतः सम्पूर्ण भारतवर्ष में अपने प्रकार की सबसे प्राचीन मूर्ति है । [illegible] हुई बड़े आकार की धार्मिक मृण्मूर्तियाँ प्रथम श0ई0 के धरातल से हनुमानगढ़ी से अधिक संख्या में उपलब्ध हुई है जो अहिच्छत्र के उत्खनन से प्राप्त वी0एस0 अग्रवाल द्वारा वर्णित तथाकथित विदेशी प्रकार की मृण्मूर्तियों की तरह है । इस प्रकार की मृण्मूर्तियाँ कौशाम्बी, पिपरहवा, वैशाली आदि स्थानों से भी उपलब्ध हुई हैं ।

प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल के महत्त्वपूर्ण खोजों में प्रथम द्वितीय श0ई0 के धरातल से उपलब्ध राउलेटेड वेयर के पात्र-खण्डों (फलक 83 डी) का उल्लेख किया जा सकता है जो ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में अयोध्या में बड़े पैमाने पर व्यापार एवं वाणिज्य का संकेत करते हैं । यह व्यापार जलमार्ग से होता था । सरयू नदी का गंगा से छपरा में संगम होता है । गंगा नदी के मार्ग से अयोध्या का सम्बन्ध पूर्वी भारत के ताम्रलिप्ति जैसे नगरों से था ।[1] हाल के समय तक सरयू और गंगा नदियों द्वारा बड़ी आकार की नावों से व्यापार होता था । राउलेटेड वेयर की खोज से देश के अन्तर्वर्ती भागों से व्यापार एवं वाणिज्य का प्रमाण उपलब्ध हुआ है।

इस उत्खनन में यहाँ गुप्तकाल के आवासीय जमाव प्राप्त हुए हैं । प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल के जमावों के बाद यहाँ के आवासीय जमाव में एक अन्तराल

---

1. राउलेटेड पात्र परम्परा के पुरातात्विक महत्व, प्रसार क्षेत्र और महत्व के लिए देखिये - देशपाण्डे, एम0एन0, 1969, रोमन पाटरी, पाटरीज इन एन्सियण्ट इण्डिया ।

दिखाई पड़ता है । ग्यारहवीं शताब्दी ई० के आस-पास यह स्थल फिर से आबाद हुआ । ईंटों और चूने से [illegible] इस धरातल से प्राप्त हुई है।

अयोध्या से 16 किलोमीटर दक्षिण में नन्दिग्राम और उसके समीप के क्षेत्रों में इस अभियान दल द्वारा कुछ उत्खनन किये गये थे । तमसा नदी के तट पर स्थित नन्दिग्राम वाल्मीकि रामायण के अनुसार वह स्थान था जहाँ से भरत ने राम के वनवास के समय शासन किया था । यहाँ के उत्खनन से अयोध्या की ही तरह की प्राचीनता का प्रमाण प्रस्तुत करने वाली पुरासामग्रियाँ उपलब्ध हुई हैं । यद्यपि आजकल नन्दिग्राम तमसा के उत्तरी तट पर स्थित है लेकिन इसके दक्षिणी तट पर स्थित राहेट टीले के उत्खनन से महत्त्वपूर्ण पुरावशेष उपलब्ध हुए हैं । इन उत्खननों के आलोक में अयोध्या की प्राचीनता को सातवीं श०ई०पू० तक ले जाया जा सकता है ।[1]

1979-80 ई० में अयोध्या में 'आर्क्यालजी आफ दि रामायन साइट्स' प्रोजेक्ट के अन्तर्गत सेन्टर आफ एडवान्स स्टडी शिमला के प्रो० बी०बी० लाल और भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के के०एन० दीक्षित के संयुक्त तत्वाधान में उत्खनन कार्य पुन: प्रारम्भ किया गया । इस वर्ष के उत्खनन का मुख्य उद्देश्य इस तथ्य का पता लगाना था कि क्या एन०बी०पी०डब्ल्यू० काल के पहले का कोई आवासीय जमाव अयोध्या में है या नहीं ?

---

1. इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू, 1976-77, पृष्ठ 52-53.

इस उत्खनन से यह पता चला कि यहाँ का प्राचीनतम काल सातवीं श०ई०पू० के प्रारम्भ में एन०बी०पी०डब्लू० के प्रथम चरण से संबंधित किया जा सकता है और यह क्षेत्र पी०जी०डब्लू० के विस्तार क्षेत्र के बाहर था। प्रारम्भिक चरण में एन०बी०पी०डब्लू० पात्र परम्परा के बर्तन पतले अनुभाग वाले अच्छी तरह पके हुए, चमकदार पालिश से युक्त और कोल ब्लैक, स्टील ग्रे, इण्डिगो, सिल्वरी, सुनहले आदि विभिन्न रंगों के हैं। कुछ बर्तनों के प्रकार ऐसे हैं जो इसी चरण में मिलते हैं। एन०बी०पी०डब्लू० के साथ मिलने वाली लाल पात्र परम्परा के प्रकारों में प्रथम चरण से मध्यवर्ती और परवर्ती चरणों में परिवर्तन दिखायी पड़ता है। मृण्मूर्तियों में विकास के चिह्न परिलक्षित होते हैं। ये अधिक संख्या में उपलब्ध हुए हैं (फलक 84)। उल्लेखनीय अन्य पुरासामग्रियों में जैस्पर, अगेट, चलसिडनी के बने हुए और लगभग सभी धरातलों से मिलने वाले विभिन्न प्रकार के बाट अथवा बेलनाकार टुकड़े और राक क्रिस्टल और दूसरे अर्धरत्नों वाले पत्थर पर पक्षियों और पशुओं के आकार में बने हुए लटकनों का उल्लेख किया जा सकता है। एन०बी०पी०डब्लू० काल में ही पकी ईंटों के मकानों से युक्त नगर नियोजन, पकी मिट्टी के रिंगवेल आदि उपलब्ध हुए हैं लेकिन ये इस संस्कृति के प्रथम चरण से संबंधित नहीं हैं।

लगभग द्वितीय श०ई०पू० में एन०बी०पी०डब्लू० काल के अन्त के बाद अयोध्या लगातार शुंग कुषाण और गुप्त युग से मध्यकाल तक आबाद रहा। शुंग काल की पकी ईंटों की बनी हुई एक दीवाल प्रकाश में आयी है। इसी प्रकार गुप्त-कालीन एक मकान के प्रमाण भी उपलब्ध हुए हैं (फलक 85)। इस स्थल से उपलब्ध गुप्तकालीन मिट्टी के बर्तन श्रृंगवेरपुर और भारद्वाज आश्रम से उपलब्ध

गुप्तकालीन बर्तनों के सदृश हैं ।[1]

अयोध्या के उत्खनन में एन0बी0पी0 संस्कृति और प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की 10 कार्बन तिथियाँ प्राप्त हुई थीं ।तालिका 2।

<u>तालिका 2 : अयोध्या से उपलब्ध रेडियो कार्बन तिथियाँ</u>[2]

| प्रयोगशाला संख्या | 5720 ई0पू0 अर्धजीवन के अनुसार तिथियाँ | संशोधित तिथियाँ | सांस्कृतिक काल |
|---|---|---|---|
| पी0 आर एल-456 | 470 ± 144 ई0पू0 | 625-370 ई0पू0 | प्रारंभिक ऐतिहासिक |
| पी आर एल -452 | 350 ± 103 ई0पू0 | 405-355 ई0पू0 | प्रारंभिक ऐतिहासिक |
| वी एस - 70 | 245 ± 108 ई0पू0 | 390-10 ई0पू0 | परवर्ती एन0वी0पी0 |
| पी आर एल -466 | 180 ± 93 ई0पू0 | 195ई0पू0-25ई0 | एन0वी0पी0 |
| वी एस - 66 | 175 ± 124 ई0पू0 | 195ई0पू0-25ई0 | परवर्ती एन0वी0पी0 |
| पी आर एल -462 | 100 ± 93 ई0पू0 | 165ई0पू0-60ई0 | एन0वी0पी0 |
| वी एस - 69 | 85 ± 103 ई0पू0 | 165ई0पू0-65ई0 | परवर्ती एन0वी0पी0 |
| पी आर एल -459 | 30 ± 93 ई0पू0 | 30ई0पू0-220ई0 | प्रारंभिक ऐतिहासिक |
| पी आर एल -458 | 30 ± 155 ई0पू0 | 15ई0पू0-230ई0 | प्रारंभिक ऐतिहासिक |
| पी आर एल -467 | 15 ± 93 ई0पू0 | 20ई0पू0-225ई0 | एन0वी0पी0 |

1. <u>इण्डियन आर्क्यालजी : ए रिव्यू</u>, 1979-80, पृष्ठ 76-77.

2. पोशेल, जी0एल0, 1988, रेडियो कार्बन डेट्स फ्राम साउथ एशिया, <u>मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट</u>, वाल्यूम 12, पृष्ठ 171.

इन उत्खननों से उपलब्ध पुरातात्विक निष्कर्षों का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार से किया जा सकता है। ये स्थल नदी के किनारे-किनारे तथा उत्तरी उपान्तों पर, भूखण्ड के बीचोंबीच, साथ ही पूर्वी तथा दक्षिणी पार्श्वों में विभिन्न प्रकार से स्थित हैं और उनमें अनेक प्रारम्भिक स्थल सम्मिलित हैं, जैसे जन्मभूमि क्षेत्र, हनुमानगढ़ी, सीता की रसोई, नल टीला, कौशल्या घाट आदि। इस प्रकार का विस्तृत उत्खनन इसलिए किया गया कि हम प्राचीनतम सांस्कृतिक धरोहर से वंचित न रह जायें। यद्यपि कोई नहीं कह सकता कि अनुत्खनित क्षेत्रों में धरती के नीचे क्या दबा पड़ा है। उत्खनित क्षेत्रों से पता चला कि इस स्थल पर ऐसी कोई वस्तु नहीं थी, जो नार्दर्न ब्लैक पालिश्ड वेयर (एन0बी0पी0डब्लू0) काल के आरम्भिक चरण से पूर्व की मानी जा सके। यह चरण, जिसे सुदूर सातवीं शताब्दी ई0 पू0 के आरम्भ में स्थापित किया जा सकता है, उस काल का प्रतिनिधित्व करता है जब पेन्टेड ग्रे वेयर वस्तुतः समाप्त हो चुका था और एक नवीन डीलक्स वेयर, नार्दर्न ब्लैक पालिश्ड वेयर अपनी सम्पूर्ण गरिमा से उभरकर सामने आ रही थी। कुछ ऐसे आकार भी हैं जो प्रारम्भिक चरणों में मिलते हैं किन्तु आगे चलकर विलुप्त हो जाते हैं। यही स्थिति इसके समकालीन रेड वेयर के साथ भी है जिसमें प्रत्येक अगले चरण में परिवर्तन लक्षित होते हैं।

लोहा जो पहले ही 'चित्रित धूसर भाण्ड काल' में प्रयोग में आ चुका था, उत्तरी कृष्ण परिमार्जित भाण्ड काल में प्रबलतर रूप में प्रचलित रहा। इस प्रकार एन0बी0पी0डब्ल्यू0 काल के दौरान जैसे जैसे वास्तुस्थितियों का विकास हुआ, इस नयी धातु से, युद्ध के शस्त्रास्त्रों, जिनके लिए इसे प्रथम वरीयता दी गयी, के अति-

रिक्त विविध प्रकार के कृषि सम्बन्धी उपकरण भी निर्मित किये गये । इसका यथा समय परिणाम कृषिपरक उत्पादन [illegible] में [illegible] वृद्धि के रूप में सामने आया । इस प्रकार व्यापार और वाणिज्य पनपने लगे जैसा कि भार-मापन की एक प्रणाली कपिश-प्रस्तर, सुलेमानी पत्थर, श्वेत प्लास्टिक आदि से निर्मित विभिन्न माप-तौल वाले बेलनाकार बाटों से निर्दिष्ट होता है । थोड़े समय बाद उसी एन0बी0पी0डब्ल्यू0 काल में सोने ताँबे के विभिन्न प्रकार के, आहत सिक्कों का उपयोग किया जाने लगा, जो नगरीकरण की दिशा में एक और कदम को स्पष्ट रूप से दर्शाता है । इसी काल के भीतर भट्ठों में पकायी गयी ईंटों के मकानों के साथ नगर-योजना का भी साक्ष्य मिलता है ।

मृण्मूर्ति कला और रत्नाभूषण व्यवसाय में भी विकास तथा अधिक वैविध्य लक्षित हुए । चित्रित धूसर माण्ड काल की आदिम जैसी दिखने वाली धूसर लघु मूर्तियाँ आंशिक रूप से परिष्कृत हुईं और उन्हें उत्तरी कृष्ण परिमार्जित माण्ड के समतुल्य चमकती हुई चिकनाहट दी गयी । वन्धनियों तथा कुण्डलों में उत्कृष्ट रूप से पहलदार अद्धरत्नों की वस्तुएँ निर्मित हुईं, जिन्हें बहुधा पक्षियों तथा पशुओं की आकृतियों में निर्मित किया जाता था ।[1]

---

1. लाल, बी0बी0, 1979, पूर्वोद्धरित ।

अब तक किये गये उत्खननों से अयोध्या में पांचवीं से दसवीं ई0ई0 के मध्य के आवासीय जमावों के प्रमाण नहीं उपलब्ध हुए हैं लेकिन [illegible] अभिलेखीय प्रमाण संकेत करते हैं कि गुप्तकाल में अयोध्या में आबादी थी । इसी प्रकार चीनी यात्री फाह्यान और हवेनसांग क्रमशः पाँचवीं और सातवीं ई0ई0 में अयोध्या की यात्रा की थी, से भी इसी प्रकार के संकेत मिलते हैं । [illegible]वीं ई0ई0 में इस स्थल के पुनः आबाद होने के दो शताब्दियों के अन्दर ही मध्यकाल की ग्लेज्ड वेयर की पात्र परम्परा मिलने लगती है । मध्यकाल से ही यह स्थल संघर्षों के झंझावात से जूझ रहा है । अयोध्या के अधिकांश वर्तमान मन्दिर पिछली दो शताब्दियों में निर्मित किये गये थे ।[1]

---------::0::---------

---

1. लाल, बी0बी0, 1989, ए0 घोष द्वारा सम्पादित, <u>एन इन्साइक्लोपीडिया आफ इण्डियन आर्क्यालजी</u>, इण्डियन कौंसिल आफ हिस्टारिकल रिसर्च के लिए मुंशीराम मनोहर लाल प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 31-32.

# अध्याय-पंचम

## अयोध्या की पहचान :

## साहित्यिक और पुरातात्विक साक्ष्यों का सामंजस्य

अयोध्या की पहचान : साहित्यिक और पुरातात्विक साक्ष्यों का सामंजस्य

महाकाव्यों (रामायण और महाभारत) में वर्णित घटनाओं और उनके काल-क्रम के निर्धारण के लिए पुरातत्व ने जो प्रयास किया उसका महाकाव्यों में वर्णित घटनाओं और उनके काल से पूर्णतः सामंजस्य नहीं हो पाया है । सर्वप्रथम 1950 ई0 में प्रो0 बी0बी0 लाल ने महाभारत की ऐतिहासिकता के निर्धारण के लिए महाभारत में वर्णित स्थलों का पुरातात्विक अन्वेषण किया ।[1] उनके निष्कर्षों पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है । यह महाकाव्य कई चरणों में विकसित हुआ । जैसा कि हम जानते हैं कि प्रारम्भ में जब इसे जय के नाम से जाना जाता था तब इसमें 8008 श्लोक थे । बाद में इसका नाम भारत हो गया और इसमें श्लोकों की संख्या 2400 हो गयी तथा अन्त में जब यह महाभारत हुआ तब इसमें लगभग एक लाख श्लोक हो गये । महाभारत से सम्बन्धित स्थलों के पुरातात्विक उत्खनन और सर्वेक्षण से कुछ महत्वपूर्ण प्रमाण प्राप्त हुए हैं । लगभग सभी स्थलों पर पी0जी0डब्लू0 संस्कृति की उपलब्धि के आधार पर महाभारत काल प्रथम सहस्राब्दी ई0पू0 का प्रथम चरण माना जा सकता है । हस्तिनापुर में पी0जी0डब्लू0 जमाव का बाढ द्वारा विनाश और उसके बाद कौशाम्बी में पी0 जी0डब्लू0 का मिलना साहित्यिक साक्ष्य से पुष्ट होता है । हस्तिनापुर के बाढ में विनष्ट हो जाने के बाद कौशाम्बी में राजधानी बनायी गयी । इन सब विवरणों के पुरातात्विक साक्ष्य से पुष्टि से लगता है कि महाभारत में वर्णित कथानक पूर्णतः काल्पनिक नहीं है । संभवतः इसमें सत्य का कुछ अंश है जो लगभग एक,डेढ हजार

---

1. लाल, बी0बी0, 1954-55, इक्सकैवेशन एट हस्तिनापुर एण्ड इक्सप्लोरेशन, 1950-52, एन्सियण्ट इण्डिया, नं0 10-11, पृष्ठ 4-15.

वर्षों के दीर्घ काल में निरन्तर बढ़ता हुआ महाभारत के रूप में हो गया ।[1]

बी0बी0 लाल के निष्कर्षों से अधिकांश पुरातत्वविद् और कुछ इण्डोलोजिस्ट सहमत हैं ।[2] लेकिन कुछ विद्वान् ऐसे भी हैं जो इस सम्बन्ध में ठोस प्रमाण चाहते हैं । हम जानते हैं कि सैन्धव सभ्यता[3] जिसकी लिपि अभी तक संतोषजनक ढंग से पढ़ी नहीं जा सकी है - के अतिरिक्त तृतीय और चतुर्थ श0ई0पू0 के पहले के कोई भी लेखन के प्रमाण नहीं हैं । इसलिए अन्य साक्ष्यों पर निर्भर करना पड़ता है ।

महाभारत के उपरान्त बी0बी0 लाल ने रामायण महाकाव्य को पुरातात्विक धरातल पर उतारने का प्रयास किया और रामायण में वर्णित विभिन्न स्थलों का उत्खनन किया । वाल्मीकि रामायण में कई स्थलों का स्पष्ट उल्लेख हुआ है जैसे अयोध्या, जो राम की राजधानी थी, श्रृंग्वेरपुर जहाँ उन्होंने वन-यात्रा के समय गंगा को पार किया था, भारद्वाज आश्रम जहाँ वे कुछ समय के लिए ठहरे थे, आदि । यद्यपि इन उत्खननों से बी0बी0 लाल को कई महत्त्वपूर्ण प्रमाण उपलब्ध हुए

------------------

1. लाल, बी0बी0, 1976, महाभारत एण्ड आर्क्यालजी, <u>महाभारत : मिथ एण्ड रियल्टी डिफरिंग व्यूज</u> (सं0) एस0पी0 गुप्ता और के0एस0 रामचन्द्रन ।

2. गुप्ता, एस0पी0 और के0एस0 रामचन्द्रन (सं0) 1976, <u>महाभारत : मिथ एण्ड रियल्टी डिफरिंग व्यूज</u> ।

3. मिश्रा, बी0एन0, 1992, रिसर्च आन दि इन्डस सिविलाइजेशन : ए ब्रीफ रिव्यू, <u>दि इस्टर्न एन्थ्रोपोलाजिस्ट</u>, वैलूम 45, नं0 1 और 2, पृष्ठ 1-19.

हैं लेकिन फिर भी कुछ मौलिक बिन्दुओं पर प्रश्नचिह्न लगाये गये हैं, जैसे अयोध्या एक काल्पनिक नगरी थी इसलिए फैजाबाद जनपद के वर्तमान अयोध्या के उत्खनन के परिणाम सार्थक नहीं हैं। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के मुनीश चन्द्र जोशी ने तैत्तरीय आरण्यक में उपलब्ध अयोध्या के दर्शन सम्बन्धी लाक्षणिक विवरण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि आधुनिक अयोध्या से राम का सम्बन्ध बाद में किया गया। इस प्रकार तैतरीय आरण्यक की अयोध्या एक काल्पनिक नगरी थी। बी0 बी0 लाल के अनुसार तैत्तरीय आरण्यक और अथर्ववेद में उल्लिखित अयोध्या (अ + योध्या, अ + योध्या:, अ + योध्येन) जिसका तात्पर्य अजेय है, वस्तुवाचक संज्ञा के रूप में नहीं प्रयुक्त हुआ है। इसलिए इसका तात्पर्य नगर से नहीं है। अत: वर्तमान अयोध्या के उत्खननों से जो भी प्रमाण उपलब्ध हुए हैं उनकी वास्तविकता को स्वीकार करना चाहिए। उत्खननों ने सिद्ध किया है कि वर्तमान अयोध्या काल्पनिक नगर न होकर एक वास्तविक प्राचीन नगर था।[1]

संयुक्त निकाय के अनुसार अयोध्या गंगा के तट पर स्थित था, वाल्मीकि रामायण में कोशल की राजधानी अयोध्या गंगा की सहायक सरयू नदी से काफी दूर लगभग 3 किलोमीटर पर स्थित था। कालिदास ने अयोध्या और साकेत को पर्यायवाची शब्दों के रूप में प्रयुक्त किया है जबकि पालि साहित्य में साकेत अयोध्या से एक पृथक नगर था। ह्वेनसांग ने अयोध्या की स्थिति कान्यकुब्ज से 600 ली (192 किलोमीटर) पूर्व और दक्षिण पूर्व तथा गंगा से 1.5 किलोमीटर दक्षिण की

---

1. लाल, बी0बी0, 1981, वाज अयोध्या ए मिथिकल सिटी ? पुरातत्व नं0 10, पृष्ठ 45-49.

तरफ बताया है ।

इन उल्लेखों के आधार पर मुनीश चन्द्र जोशी का अनुमान है कि वर्तमान अयोध्या प्रारम्भिक बौद्ध साहित्य में वर्णित साकेत के ध्वंसावशेषों पर स्थित है । गुप्तकाल में इसे अयोध्या के नाम से जाना जाने लगा। जोशी के अनुसार इसलिए प्राचीन अयोध्या की खोज हमें कहीं अन्यत्र करनी चाहिए ।[1] मुनीश चन्द्र जोशी के इन संदेहों का निवारण बी0बी0 लाल ने अपने एक विस्तृत लेख में किया है ।[2] उनके अनुसार वाल्मीकि रामायण में भी इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि अयोध्या सरयू के तट पर स्थित थी । संयुक्त निकाय में अयोध्या को गंगा के तट पर कहने का तात्पर्य सिर्फ यह है कि अयोध्या एक पवित्र नदी के तट पर स्थित थी । इस तरह के विवरण अन्य प्राचीन नगरों के लिए भी बौद्ध साहित्य में मिलते हैं, जैसे संयुक्त निकाय में कौशाम्बी को गंगा के तट पर स्थित बताया गया है । वाल्मीकि रामायण में राम सीता और लक्ष्मण के वन-गमन के सन्दर्भ में जो भौगोलिक विवरण मिलता है कि वे सुमन्त के साथ रथ पर चढ़कर अयोध्या से चले । अयोध्या निवासियों ने तमसा नदी तक उनका अनुगमन किया । तमसा के तट पर उन्होंने रात्रि

---

1. जोशी, एम0सी0, 1982, अयोध्या : मिथिकल एण्ड रीयल, <u>पुरातत्व</u> नं0 11, पृष्ठ 107-109.

2. लाल, बी0बी0, 1987, अयोध्या आफ दि वाल्मीकि रामायण : इज इवर जाइजिंग डिवेट आन इट्स आइडेन्टीफिकेशन, <u>पुरातत्व</u> नं0 16, पृष्ठ 79-84.

व्यतीत की, प्रातःकाल अयोध्यावासियों को वहीं छोड़कर वे आगे बढ़े और तमसा नदी को पार किया । दक्षिण में बढ़ते हुए उन्होंने वेदश्रुति, गोमती और स्यन्दिका नदी को पार किया जिन्हें क्रमशः वर्तमान विसुई, गोमती और सई नदियों से समीकृत किया जा सकता है और दक्षिण में चलने पर वे श्रृंग्वेरपुर पहुँचे और पवित्र गंगा का दर्शन किया जहाँ निषादराज गुह ने उनका स्वागत किया । यहीं से सुमन्त रथ के साथ अयोध्या लौटे । गंगा को पार करने के बाद गंगा यमुना के संगम पर वे भरद्वाज ऋषि के आश्रम में पहुँचे । भारद्वाज की सलाह पर वे यमुना को पार करके चित्रकूट चले गये । इस विवरण के आधार पर स्पष्टतः कहा जा सकता है कि अयोध्या गंगा के तट पर न होकर सरयू के तट पर ही स्थित थी क्योंकि सरयू के तट पर फैजाबाद के समीपवर्ती अयोध्या के अतिरिक्त और किसी अयोध्या नामक नगर की स्थिति नहीं है, इसलिए लाल के अनुसार वर्तमान अयोध्या ही वाल्मीकि रामायण की अयोध्या मानी जानी चाहिए ।[1]

कुछ पुरातत्वविद रामकथा के भौगोलिक क्षेत्र में मिलने वाली आखेटक मध्य पाषाणिक संस्कृति और रामायण में आदिम संस्कृति के विभिन्न सन्दर्भों के आधार पर मूल रामकथा को प्रागैतिहासिक काल में रखने के पक्ष में हैं ।[2] संभव है परवर्ती काल में जब इस कथानक में विस्तार हुआ तो विकसित संस्कृतियों के प्रभाव से इसका

---

1. लाल, बी०बी०, 1987, पूर्वोद्धरित ।

2. पाल, जे०एन०, 1989, पूर्वोद्धरित ।

रूप बदल गया लेकिन बन्य संस्कृति के प्रमाण पूर्णतः विलुप्त नहीं हुये ।

रामायण के अनुसार अयोध्या की स्थापना वैवस्वत मनु द्वारा की गयी । यह इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की राजधानी रही । उस वंश में रघु, दशरथ, राम जैसे विख्यात महापुरुष हुए । इस नगरी का अन्त वृहद्बल की मृत्यु के बाद हुआ जो महाभारत युद्ध में मारा गया । परम्परा के अनुसार वृहद्बल की मृत्यु के बाद से लेकर उज्जैनी के विक्रमादित्य के समय तक यह नगरी वीरान रही । विक्रमादित्य ने इस पवित्र नगरी को ढूढ निकाला और जंगल काटकर यहां किला और मन्दिर बनवाये । विक्रमादित्य की पहचान जनरल कनिंघम ने गुप्तवंश के चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य से की है । अगर इस पारम्परिक तथ्य को सही मान लिया जाय तो यह मानना पडेगा कि महाभारत युद्ध के पूर्व अर्थात 1000 ई0पू0 तक एक सुव्यवस्थित नगरी के रूप में अयोध्या अस्तित्व में आ चुकी थी । परन्तु समस्या यह है कि वाल्मीकि रामायण में वर्णित अयोध्या एक सुव्यवस्थित नगरी है जो ईशा पूर्व के पाँचवीं शताब्दी के पहले की नहीं हो सकती क्योंकि इसके पूर्व गंगा की घाटी में ऐसी किसी शहरी सभ्यता का विकास नहीं हुआ था । कोशल देश का ई0पूर्व 5वीं श0 के बाद का इतिहास हमें ज्ञात है पर इसमें इक्ष्वाकुवंशीय राजा दशरथ, राम आदि के शासन की कोई गुंजाइश नहीं है ।

अतः यदि रामायण में वर्णित घटनाएँ ऐतिहासिक हैं तो वे ई0पू0 5वीं श0 के पहले की होगी और तब रामायण में अयोध्या का वर्णन निश्चित ही बाद का प्रक्षेप है । कहने का तात्पर्य यह कि अयोध्या यदि काल्पनिक नहीं थी तो अधिक

से अधिक एक छोटा सा ग्राम रही होगी । एक विकसित नगरी के रूप में इसका वर्णन बाद में प्रक्षिप्त किया गया होगा । या फिर हम यह मान लें कि वाल्मीकि रामायण बहुत बाद में लिखी गयी और अयोध्या भले ही एक नगरी न रही हो, उस काल में अनेक नगर स्थापित हो चुके थे जिसके आधार पर वाल्मीकि ने अयोध्या का एक नगरी के रूप में वर्णन किया । रामायण में अयोध्या को कोशल महाजनपद की राजधानी कहा गया है जबकि बौद्ध और जैन ग्रंथों में कोशल की राजधानी को साकेत कहा गया है । यदि साकेत और अयोध्या एक ही स्थल के दो नाम थे तो आश्चर्य है कि समूची वाल्मीकि रामायण में साकेत का कोई उल्लेख नहीं है । 500 ई0 के हूणों के विजेता गुप्त सम्राट स्कन्दगुप्त अपनी राजधानी पाटलिपुत्र से अयोध्या लाते हैं तो अयोध्या और साकेत दोनों के एक होने का सन्दर्भ देते हैं । वे अपनी तुलना शिलालेख में राम से करते हैं । रघुवंश में अयोध्या और साकेत दोनों ही नाम पर्यायवाची होकर बार-बार प्रयुक्त हुए हैं । इस आधार पर कुछ विद्वानों का मत है कि साकेत और अयोध्या एक ही नगरी के दो नाम हैं । एस0 पी0 गुप्त का कहना है कि प्राचीन धार्मिक नगर अधिकतर युग्म नामों से सम्बोधित होते थे, जैसे - वाराणसी-काशी, प्रतिष्ठानपुर-प्रयाग या साकेत-अयोध्या ।

चीनी यात्री ह्वेनसांग ने जहाँ एक ओर अयोध्या में बौद्ध विहारों का होना बताया है, वहीं कई देव-मन्दिरों का होना भी । यदि बौद्ध ग्रन्थों में साकेत नाम अधिक प्रचलित है तो अयोध्या नाम भी उसमें आया है, किन्तु कम । क्योंकि एक मत के लोग प्रायः एक नाम का ही प्रयोग अपनी धर्म-पुस्तकों में करते हैं जैसे हिन्दू अयोध्या नाम का अधिक प्रयोग करते हैं । संयुक्त निकाय, [illegible]

निकाय, अंगुन्तर निकाय आदि ने कोशल की राजधानी को साकेत कहा गया है किन्तु अंगुत्तर निकाय, संयुक्त निकाय और बुद्ध घोष में अयोध्या नगर का भी उल्लेख हुआ है ।

बौद्ध ग्रन्थों में अयोध्या और साकेत को अलग अलग दर्शाया गया है । संयुक्त निकाय में उल्लेख मिलता है 'एक सय भगव अयोध्यं विहारति गंगय नादिय तीरे ।' अर्थात् एक समय भगवान बुद्ध अयोध्या, जो गंगा के तट पर बसा था, वहाँ रह रहे थे ।

बौद्ध ग्रन्थों में अनेक ऐसे उल्लेख हैं जिससे अयोध्या का साकेत से भिन्न होना सिद्ध होता है । ऐसा कहा गया है कि अयोध्या गंगा के किनारे स्थित थी और बुद्ध वहाँ दो बार गये । पहली बार उन्होंने वहाँ फेनसुत्त का प्रवचन दिया दूसरी बार दारुखण्डसुत्त का । बौद्ध स्रोतों में केवल एक ही बार कौशाम्बी को गंगा के किनारे स्थित बताया गया है । इसी प्रसंग में यह भी कहा गया है कि बुद्ध ने दारुखण्डसुत्त का प्रवचन दिया । सुप्रसिद्ध पाली भाषा के विद्वान् जी0पी0 मलालसेकर का मत है कि वहाँ कौशाम्बी का उल्लेख प्रतिलिपिक की गलती मानना चाहिए क्योंकि कई ग्रन्थों में इस सुत्त का प्रवचन स्थान गंगा तट पर बसी अयोध्या कहा गया है । अतः गलती का कारण भौगोलिक ज्ञान का अभाव नहीं बल्कि प्रतिलिपि बनाने में हुई भूल है । कौशाम्बी के सम्बन्ध में ऐसा भ्रम आधुनिक युग में भी रहा है । कनिंघम ने लिखा है कि इस क्षेत्र के ब्राह्मण इसे गंगा तट पर बसा हुआ मानते हैं । कौशाम्बी से गंगा यमुना का संगम 30 मील दूरी पर है और गंगा नदी और उसकी शाखाएँ कालान्तर में दिशा बदलती रही हैं । यह भी हो

सकता है कि पहले संगम पास रहा हो और इसी कारण कौशाम्बी को गंगा के तट पर स्थित माना जाता हो । इसके अतिरिक्त बौद्ध ग्रन्थों में जहाँ जहाँ कौशाम्बी का उल्लेख हुआ है वहाँ अधिकतर उसे किसी नदी से न जोड़कर घोषिताराम विहार से जोड़ा गया है ।

घट जातक में कहा गया है कि दस राजकुमारों ने, जो अन्ध वेन्हु के पुत्र थे, मथुरा जीती और अयोध्या पर आक्रमण किया । पर विचित्र बात यह है कि वे अयोध्या से द्वारावती गये । इससे प्रतीत होता है कि यह आज की अयोध्या नहीं अपितु कहीं और पश्चिम में स्थित रही होगी । साकेत को कोशल देश से जोड़ा गया है और यह श्रावस्ती जाने के रास्ते में पड़ता था । साकेत को उत्तर-भारत के 6 बड़े नगरों में गिना जाता है । यह एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र था और अनेक व्यापारियों का निवासस्थान था । यहाँ अनेक बौद्ध बिहार थे जहाँ बुद्ध अनेक बार ठहरे थे । यदि साकेत और अयोध्या एक ही होते तो इसमें कोई संदेह नहीं कि बौद्ध ग्रन्थों में ऐसा जरूर कहा गया होता । इसी कारण विमल चरण ला ने लिखा है - कुछ विद्वानों का विचार है कि साकेत और अयोध्या एक ही थे पर रीस डेविड ने सफलतापूर्वक दर्शाया है कि बुद्ध के काल में दोनों नगरों का अपना अलग अस्तित्व था । बौद्ध ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि साकेत श्रावस्ती से छह-सात योजन की दूरी पर है और यही दूरी आज साहेत-माहेत ﴾श्रावस्ती﴿ और फैजाबाद के बीच की भी है । जहाँ तक राम की पूजा का प्रश्न है प्राचीन भारतीय कला के सुप्रतिष्ठित इतिहासकार जे०एन० बनर्जी ने अपनी पुस्तक 'द डवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी' में लिखा है कि पहले 'राम' का प्रयोग

राम दशरथ के लिए न होकर राम बलराम के लिए हुआ है । उदाहरण के लिए पतंजलि के महाभाष्य में नृपति राम और केशव का उल्लेख हुआ है पर वहाँ का तात्पर्य बलराम से है । सबसे पहले स्पष्ट रूप से दशरथ के पुत्र राम की मूर्ति का उल्लेख वाराहमिहिर की बृहत्संहिता (57-30) में ही मिलता है पर यह तो गुप्त-युग के बाद की रचना है । आधुनिक अयोध्या में ईसा के दूसरे सहस्राब्द से पहले राम की पूजा प्रचलित होने का प्रमाण नहीं मिलता ।

राम-कथा जिस रूप में वाल्मीकि ने वर्णित की है, वह सर्वमान्य रही हो- ऐसी बात नहीं है । यह दशरथ जातक या विमल सूरि के पढ़ने से स्पष्ट ज्ञात हो जायेगा । इन दोनों ही विवरणों में घटनाएँ और चरित्रांकन वाल्मीकि रामायण से काफी भिन्न है । और जैसा अनेक विद्वानों ने दर्शित किया है कि ग्रन्थों में बार-बार संशोधन और प्रक्षेपण भी हुए हैं । यह निश्चय ही संभव है कि वाल्मीकि ने जिन स्थलों की चर्चा की है, वे एक समय में आबाद थे पर इस संदिग्ध तथ्य के आधार पर इस कथा की घटनाओं का सही सही स्थान निर्धारण किया जाना संभव नहीं है ।

अयोध्या (ह्वेनसांग का आ-यु-तो) के लिए कई अन्य शब्दों का प्रयोग भी मिलता है - अवध, साकेत (साची), विशाखा (विशोकिया), विनीतापुरी आदि । प्रारम्भिक इतिहासकार ह्वेनसांग के विवरण में मिलने वाले नामों की सही पहचान न कर पाने के कारण अयोध्या को विभिन्न स्थलों से समीकृत करते रहे हैं । मेजर कर्नल कास्ट साकेत को प्रतापगढ के सुजारन बिहार से समीकृत करते हैं ।

इसे लखनऊ, कुर्सी (बाराबंकी), तुजानकोट (उन्नाव), डौडियाखेड़ा (उन्नाव) से समीकृत किया गया है। जैनों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव आदिनाथ जो कि राजा नाभि और मेरुदेवी के पुत्र थे। इस तीर्थंकर का एक मन्दिर शाहजुरान के टीले के पास स्थित था।

बौद्ध परम्परा के अनुसार गौतम बुद्ध ने साकेत में एक दातून का पेड़ लगाया था जो फाह्यान और ह्वेनसांग की यात्रा के समय भी विद्यमान था। साची (साकेत) के सम्बन्ध में फाहियान कहता है "नगर के दक्षिण द्वार से निकलकर सड़क के पूर्व में एक स्थान है जहाँ बुद्ध देव ने कटीले वृक्ष की एक टहनी तोड़कर भूमि में लगा दी थी जहाँ वह सात फुट तक बढ़ी और फिर न घटी न बढ़ी।" इसी तरह ह्वेन सांग ने विशाखा के सम्बन्ध में कहा है कि राजधानी के दक्षिण में और मार्ग के बायीं ओर (अर्थात् पूर्व में जैसा फाह्यान ने कहा था) एक छः या सात फुट ऊँचा वृक्ष था जो पवित्र समझा जाता था और जो न घटता था और न बढ़ता था। यही बुद्धदेव का प्रख्यात दातून का वृक्ष था।

कहा जाता है कि बुद्ध ने साकेत में 16 वर्ष तक निवास किया था। हनुमानगढी के बाद जब हम अयोध्या से फैजाबाद की ओर पक्की सडक पर चलते हैं तो मार्ग की बायीं ओर दातूनकुण्ड पड़ता है। यद्यपि सर्व-साधारण का विश्वास है कि इस कुण्ड पर भगवान रामचन्द्र दातून किया करते थे, तथापि कदाचित यही वह स्थान है जहाँ बुद्ध ने दातून का वृक्ष लगाया था या जहाँ पर पास ही सरोवर खोदा गया था जिसमें बुद्ध मंज्जन करते थे और जो आजकल भी वृक्ष के सूख जाने पर भी भगवान बुद्ध के अयोध्या में निवास का स्मारक है।

संभव है दक्षिण द्वार हनुमानगढ़ी के पास था । हनुमानगढ़ी से सरयू तक की दूरी 1.5 किलोमीटर से कुछ अधिक है किन्तु नदी की धारा बदलती रहती है और संभव है कि चीनी यात्री (ह्वेनसांग) के समय में वह कुछ और उत्तर की ओर बहती रही हो ।

ह्वेनसांग कहता है कि पिसोकिया की परिधि लगभग 16 ली थी । इतना स्थान एक शक्तिशाली राज्य के लिए कदापि काफी नहीं था । अयोध्या की परिधि 12 योजन (लगभग 160 किलोमीटर) बतायी गयी है । कनिंघम इसे 12 कोस (40 किलोमीटर) मानते हैं । पश्चिम के गुप्तार घाट से लेकर पूर्व में राम-घाट तक की दूरी 10 किलोमीटर है । इस प्रकार इसकी परिधि 12 कोस मानी जा सकती है । आजकल भी नगर की पश्चिमी सीमा गुप्तार घाट और पूर्वी बिल्वहरि तक मानी जाती है । दक्षिणी सीमा मदरसा के पास भरतकुण्ड तक बतायी जाती है । इसकी दूरी भी 6 कोस अर्थात् 20 किलोमीटर है ।

आइने-अकबरी में इसकी लम्बाई 148 कोस और चौड़ाई 32 कोस बताया गया है । इसका अभिप्राय घाघरा के उत्तर के अवध प्रान्त से है । अयोध्या की धार्मिक परिक्रमा मार्ग को प्राचीन नगर की सीमा-रेखा माना जा सकता है जिसकी परिधि 40 किलोमीटर के लगभग है । इस विवरण से अयोध्या के धार्मिक महत्ता पर प्रकाश पड़ता है ।

बी०बी० लाल के अनुसार - अभी तक जो पुरातात्विक प्रमाण मिले हैं वे

मूल प्रश्न अर्थात् रामायण की ऐतिहासिकता के बारे में मौन हैं । हमें कोई तत्कालीन अभिलेख नहीं मिला है और न किसी ऐसे प्रमाण की आगे उपलब्ध होने की आशा है ।

कालिदास ने साकेत का अयोध्या से समीकरण किया है, इससे तो इस बात की पुष्टि होती है कि जब स्कन्दगुप्त ने साकेत को अपना निवास-स्थान बनाया तो उसे अयोध्या की संज्ञा दी । इस नाम से साकेत को गुप्त-युग से पहले नहीं अभिहित किया गया । यदि राम को आदर्श राजा के रूप में प्रयुक्त कर स्कन्दगुप्त स्वयं को गौरवान्वित करना चाहता था तो यह उचित ही था कि वह अपने निवासस्थान को अयोध्या ही कहे । इस प्रकार के उदाहरण दक्षिण-पूर्व एशिया में भी पाये जाते हैं। अयोध्या अनेक धर्मों से जुड़ी रही है । यह नगरी बौद्ध, जैन, वैष्णव मत, शैवमत सभी का केन्द्र रही है । इस क्षेत्र के उत्खनन में एक मृण्मूर्ति मिली है जो बी0बी0 लाल के विचार में संभवत: किसी जैन तीर्थंकर की है । इसके अतिरिक्त कुछ और लघु मृण्मूर्तियाँ मिली हैं जो उर्वराशक्ति की प्रतीक हैं । अयोध्या से एक मिट्टी की मुहर उपलब्ध हुई है जिस पर दो पैरों के निशान (पादुका युग्म) बने हैं और पुष्य-सार: लिखा हुआ है । थपलियाल के अनुसार इसे ब्राह्मण धर्म से सम्बन्धित किया जा सकता है ।[1] 1094 ई0 के एक अभिलेख के अनुसार अयोध्या के गहड़वाल राजा

---

1. इस समय यह मुहर इलाहाबाद संग्रहालय में है, थपलियाल, के0के0, 1972, स्टडीज इन एन्सियण्ट इण्डियन सील्स, पृष्ठ 161-162.

चन्द्रदेव ने भूमिदान करने से पहले परम्परानुसार नदी में स्नान किया और वैष्णव-मतानुसार पूजा-अर्चना की ।

इस विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः माना जा सकता है कि वर्तमान अयोध्या बाल्मीकि रामायण की अयोध्या की । वाल्मीकि रामायण ही मूल राम काल से कितना दूर है, इसके बारे में इतिहास और पुरातत्व कुछ कहने में असमर्थ है। हम नहीं कह सकते कि वाल्मीकि रामायण की कथा कितनी ऐतिहासिक है लेकिन पुरातत्वीय अनुसन्धानों ने पूरे कथानक के कम से कम भौगोलिक परिदृश्य को स्पष्टतः पुष्ट किया है ।

---------::0::---------

अध्याय-षष्ठ

उपसंहार

## उपसंहार

क्षेत्रीय पुरातत्व के अध्ययन में फैजाबाद जनपद अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण उल्लेखनीय है । एक ओर यह ऊपरी गंगा घाटी और मध्य गंगा घाटी के संक्रमण क्षेत्र में पड़ता है तो दूसरी ओर तराई और मैदानी क्षेत्रों के मध्य में । इस स्थिति के कारण ऊपरी गंगा घाटी की संस्कृतियों के पूर्व में तथा मध्य गंगा घाटी की संस्कृतियों के पश्चिम में प्रसार प्रक्रिया पर उल्लेखनीय प्रकाश पड़ा है । पी०जी० डब्लू० और एन०बी०पी० संस्कृतियों के क्रमशः पूर्व और पश्चिम के प्रसार को इस प्रसंग में विशेष रूप से उल्लिखित किया जा सकता है । परवर्ती पी०जी०डब्लू० और प्रारम्भिक एन०बी०पी० संस्कृतियाँ इस प्रसार प्रक्रिया में एक दूसरे के सम्पर्क में आईं । इसी प्रकार के पुरातात्विक प्रमाण दक्षिण (विन्ध्य क्षेत्र और उसके समीपवर्ती गांगेय क्षेत्र) की संस्कृतियों के उत्तर की ओर प्रसरित होने के प्रमाण भी प्राप्त होते हैं, जैसा कि सूरजू पार के क्षेत्र में हुए सर्वेक्षणों से पता चलता है ।

फैजाबाद जनपद गंगा के मैदान के सघन आबादी वाले क्षेत्रों में से है । उर्वरा भूमि, धनुषाकार झीलें और इनसे निकलने वाली सरिताओं तथा घाघरा जैसी बड़ी नदियों, बनस्पतियों और पशुओं के लिए एक साथ उपयुक्त प्राकृतिक सम्पदा से सम्पन्न इस क्षेत्र ने प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से ही मानव को आकृष्ट किया । मध्य देश (कोशल) में विभिन्न संस्कृतियाँ विकसित हुईं जिन्होंने न केवल गंगा के मैदान के सांस्कृतिक स्वरूप का निर्धारण किया अपितु सम्पूर्ण उत्तर भारत को सांस्कृतिक विरासत प्रदान की । विभिन्न ऐतिहासिक स्रोतों से कोशल महाजनपद (मध्य गंगा घाटी) के इतिहास का जो पुनर्निर्माण किया गया है वह फैजाबाद जनपद पर भी घटित किया जा सकता है, यद्यपि पारम्परिक पौराणिक इतिहास को अभी भी

इतिहासकार सन्देह की दृष्टि से देखते हैं । नन्द, मौर्य, शुंग, कण्व, कुषाण, गुप्त, परवर्ती गुप्त, मौखरि, वर्धन, राजपूत, भर, सल्तनत, लोदी, मुगल, नवाब आदि वंशों ने क्रमशः इस क्षेत्र में शासन किया । यहाँ के इतिहास में इस प्रकार अविच्छिन्नता दिखाई पड़ती है । ब्रिटिश काल और उसके बाद स्वतंत्रता आन्दोलन तथा स्वातंत्र्योत्तर काल में भी इस क्षेत्र ने अपनी महत्ता को कम नहीं किया ।

यद्यपि फैजाबाद जनपद में इस समय मूल आदिम जातियाँ बहुत कम रह गयी हैं और जो हैं भी वे अन्य जातियों के सामाजिक रीति-रिवाजों और परम्पराओं से अत्यधिक प्रभावित होकर उनके साथ घुल-मिल सी गयी हैं, लेकिन फिर भी उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में किये गये जनगणना के अनुसार बहेलिया, बंगाली, कंजड़, वधिक, भाँटु और बेड़िया जैसी कुछ आखेटक आदिम जातियाँ विद्यमान हैं । इन आदिम जातियों के सामाजिक नृतत्त्वीय अध्ययन से भी प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के पुनर्निर्माण में सहायता मिली है ।

फैजाबाद जनपद के समीपवर्ती दक्षिणी क्षेत्रों से प्रारम्भिक नूतनकालीन मध्य पाषाणिक संस्कृतियों के प्रमाण प्राप्त हुये हैं ।[1] गंगा के उत्तर में इलाहाबाद, प्रतापगढ़, जौनपुर, सुलतानपुर और वाराणसी जिलों में हुए पुरातात्त्विक अन्वेषणों से आखेटक और संग्रहक मध्य पाषाणिक संस्कृति के कई चरणों के प्रमाण मिले हैं । सराय नाहर राय, महदहा और दमदमा के उत्खननों ने मध्य गंगा घाटी में मध्य पाषाणिक संस्कृति के विभिन्न पक्षों पर उल्लेखनीय प्रकाश डाला है । संभव है कि गंगा, यमुना,

---

1. शर्मा, जी०आर० और अन्य, 1980, पूर्वोद्धरित ।

सई आदि नदियों को पार कर विन्ध्य क्षेत्र के मध्य पाषाणिक मानव ने गोमती नदी को भी पार किया हो और इस क्षेत्र की प्राकृतिक सम्पदा का दोहन किया हो । लेकिन अभी तक इस जनपद से मध्य पाषाणिक संस्कृति का कोई स्थल प्रकाश में नहीं आया है । गहन सर्वेक्षण की कमी इसका एक कारण हो सकती है । जन-संख्या के दबाव के कारण इस जनपद के अधिकांश क्षेत्रों में ऐसे स्थलों के विनष्ट हो जाने की भी संभावना है । इसी प्रकार की संभावना कृषि और पशुपालक परक नव पाषाणिक और ताम्र पाषाणिक संस्कृतियों की अनुपस्थिति के लिए भी मानी जा सकती है । यद्यपि इसके समीपवर्ती सरयू पार के अनुसन्धानों से इन संस्कृतियों के उपस्थिति के प्रमाण मिलते हैं ।[1]

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि अयोध्या में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा तीन अलग अलग स्थलों का उत्खनन कराया गया । इस उत्खनन कार्य का मुख्य उद्देश्य सांस्कृतिक क्रम का निर्धारण करना था । इस तीन स्थलों में पहला स्थल जैन-घाट के निकट, दूसरा लक्ष्मण टेकरी और तीसरा नल-टीला पर है । इसमें प्रथम दो स्थलों (जैन-घाट के निकट और लक्ष्मण टेकरी) से तीन सांस्कृतिक कालों का पता चला है । प्रथम दो सांस्कृतिक कालों में निरन्तरता है, जबकि द्वितीय और तृतीय कालों के बीच समय का कुछ अन्तराल है । तीसरे स्थल से मात्र प्रथम सांस्कृतिक काल का साक्ष्य प्राप्त होता है । प्रथम सांस्कृतिक काल में उत्तरी

---

1. चतुर्वेदी, एस०एन०, 1985, पूर्वोद्धरित ।

काले, चमकीले, मृद्‌माण्ड, भूरे और लाल-पात्रों की प्राप्ति हुई है । उस काल की जो अन्य वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं, उनमें टेराकोटा डिस्क, गेंद, पहिये, हड्डियों के बाणाग्र तथा ताँबे, सीसे और टेराकोटा के मनके सम्मिलित हैं । इस जमाव के ऊपरी हिस्से से 6 मानव मृण्मूर्तियाँ और भूरे रंग के पशुओं की मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं । अयोध्या के दो सिक्के भी इसी जमाव से मिले हैं । कुछ लोहे की वस्तुएँ भी प्राप्त हुई हैं ।

सेण्टर आफ एडवान्स्ड स्टडी शिमला और भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा अयोध्या में राम जन्म-भूमि, हनुमान गढ़ी, सीता की रसोई, कौशल्या घाट आदि। 14 स्थानों पर उत्खनन कार्य किया गया है । इस खुदाई से कहीं से भी कोई ऐसी सामाग्री नहीं प्राप्त हुई है जो प्रारम्भिक एन०बी०पी० युग के पूर्व की कही जा सके। अवशेषों से प्रतीत होता है कि सर्वप्रथम प्रसिद्ध उत्तरी काले चमकीले मिट्टी के विभिन्न प्रकार के बर्तनों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ । सबसे निचली सतह पर इन उत्तरी काले चमकीले मृदभाण्डों के बर्तनों के साथ कुछ धूसर बर्तनों के टुकड़े प्राप्त हुए हैं, जिन पर चित्रकारी की गयी है । श्रावस्ती, पिपरहवा, कौशाम्बी आदि स्थलों से प्राप्त मृदभाण्डों और विख्यात चित्रित धूसर मृदभाण्ड जो हस्तिनापुर, मथुरा, अहिच्छत्र आदि स्थलों से मिले हैं, के आधार पर यह कहना अनुचित न होगा कि राम-जन्म-भूमि की पहली बस्ती सातवीं शताब्दी ईशा पूर्व में बसी । इस तिथि के निर्धारण में श्रावस्ती, मथुरा और कौशाम्बी आदि स्थानों से उपलब्ध तिथियाँ महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं ।

इस प्रारम्भ के साथ उपलब्ध टीले की निरन्तरता लगभग तीसरी शताब्दी तक बनी रही, यद्यपि इसका प्रतिनिधित्व अनेक आधारभूत संरचनाओं ने किया। प्रारम्भिक स्तर पर गृह-निर्माण योजना में लकड़ी और घास-फूस से निर्मित तथा मिट्टी के लेप से युक्त झोपडियों का प्रमुख योगदान हुआ करता था। इसके बाद में पक्की ईंटों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ। जन्म-भूमि क्षेत्र में ईंटों की एक बड़ी दीवाल पायी गयी है जो संभवतः नगर के किलेबन्दी की दीवाल हो सकती है। इसी दीवाल के नीचे कच्ची ईंटोंवाला ढाँचा प्राप्त होता है। इस चरण के ऊपरी सतह पर जिसे किलेबन्दी की पूर्व अवस्था का कह सकते हैं और जो तीसरी शताब्दी ईशा पूर्व से प्रथम शताब्दी ईशा पूर्व के बीच की है, पक्की मिट्टी वाले कुएँ (रिंगवैल) देखे गये। जन्म-भूमि के अन्य हिस्सों में, जैसे हनुमानगढ़ी के पास, पर्याप्त संख्या में काले ओपदार वर्तन और साथ में रिंगवेल भी पाये गये।

इस खुदाई से पुरानी वस्तुओं का एक अच्छा खासा जखीरा सामने आया, जिसमें आधा दर्जन मुहरें, लगभग 70 सिक्के और वासुदेव नरेश की लगभग एक दर्जन मिट्टी की मुहरें शामिल हैं। इसी के साथ द्वितीय शताब्दी ईशा पूर्व के मूलदेव का एक सिक्का और एक धूसर मिट्टी की मूर्ति, जो संभवतः जैन कैवलिन की है और कायोत्सर्ग आसन में है, प्राप्त हुई है। यह संभवतः चौथी शताब्दी ईशा पूर्व की मूर्ति है, और यही नहीं, यह संभवतः सबसे पहली जैन मूर्ति होगी। दूसरी मिट्टी की मूर्ति जो हनुमानगढ़ी से प्राप्त हुई है, उसकी तुलना वी०एस० अग्रवाल द्वारा अहिच्छत्र से प्राप्त मूर्ति से की जा सकती है। यह संभवतः प्रथम या द्वितीय शताब्दी ईशा पूर्व की बनी होगी।

इस सबमें महत्त्वपूर्ण खोज जो प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से सम्बन्धित है वह है राउलेटेड पात्र परम्परा के बर्तनों की प्राप्ति । यह वर्तन संभवतः प्रथम, द्वितीय शताब्दी में प्रयुक्त हुए होंगे । इससे अयोध्या का ईशा के प्रारम्भिक शताब्दियों में सरयू तथा गंगा के जलमार्गों द्वारा पूर्वी भारत के अन्य नगरों से बड़े पैमाने पर वाणिज्यिक एवं व्यापारिक सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ता है ।

यह काफी महत्त्वपूर्ण है कि इस खुदाई से अयोध्या में गुप्त युग से संबंधित पुरातात्विक सामाग्री प्रामाणिक रूप से कम मिली है । यह तथ्य 1975 की पहली खुदाई से भी पुष्ट होता है ।

गुप्तयुगीन सामाग्री की प्राप्ति के बाद इस क्षेत्र के आवासीय जमाव में एक लम्बा अन्तराल प्राप्त होता है जिसका क्रम फिर ग्यारहवीं शताब्दी के आसपास टूटता है जब अनेक मध्यकालीन ईंटों के फर्श खोद निकाले गये । लेकिन इस बाद के युग में कोई खास विशेषता या प्रवृत्ति उपलब्ध नहीं हुई ।

इस प्रकार अयोध्या की प्राचीनता इन खुदाइयों के आधार पर सातवीं शताब्दी ईशा पूर्व के प्रारम्भिक काल में निर्धारित होती है ।

अयोध्या के उत्खनन में मोटे फैब्रिक के कुछ पी0जी0डब्लू0 के पात्र खण्ड उपलब्ध हुए हैं जो कौशाम्बी, श्रावस्ती और तिलौरकोट की तरह के हैं और परवर्ती पी0जी0डब्लू0 संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं ।[1]

---

1. त्रिपाठी, विभा, 1976, दि पेण्टेड ग्रे-वेयर - एन आइरन एज कल्चर आफ नार्दर्न इण्डिया।

प्रारम्भिक एन0वी0पी0 संस्कृति के धरातल से ही पी0जी0डब्लू0 पात्रखण्डों के मिलने के आधार पर दोनों के समसामयिक होने का प्रमाण मिलता है ।

एन0वी0पी0 संस्कृति के उल्लेखनीय प्रमाण अयोध्या में हुये पुरातात्विक उत्खननों से उपलब्ध हुये हैं । यहाँ न केवल इस संस्कृति के विभिन्न अवयवों के पात्र परम्परा, मृण्मूर्तियाँ, आवास, हड्डी के उपकरण, लघु पुरासामग्रियाँ आदि प्राप्त हुये थे अपितु एन0वी0पी0 के उत्कृष्ट फैब्रिक के विभिन्न रंगों और आकारों के एन0 वी0पी0 संस्कृति की सम्पन्नता का द्योतन करते हैं । अयोध्या में स्थित विभिन्न स्थलों के उत्खनन के अतिरिक्त सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप भी एन0वी0पी0 संस्कृति के कई स्थल प्रकाश में आये हैं ।

फैजाबाद जनपद में वर्तमान अध्ययन में किये गये सर्वेक्षण में, जिनमें पूर्ववर्ती विद्वानों के भी स्थल सम्मिलित हैं, कुल 76 स्थल प्रकाश में आये हैं । इनमें से 20 स्थल फैजाबाद तहसील में 8 स्थल बीकापुर तहसील में 17 स्थल अकबरपुर तहसील में, 12 स्थल जलालपुर तहसील में स्थित हैं । इनमें से अधिकांश स्थल कई संस्कृतियों के पुरावशेष अपने में समेटे हुये हैं, लेकिन कुछ स्थल ऐसे हैं जो दो या एक ही संस्कृति से संबंधित हैं । जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है वर्तमान शोध में मध्य पाषाण काल का कोई भी स्थल प्रकाश में नहीं आया है, यद्यपि धनुषाकार झीलों के किनारे ऊसरीली भूमि में जो अभी तक खेतों में नहीं परिवर्तित हुये हैं, ऐसे स्थलों के विद्यमान होने की संभावना है । इसके लिए ऐसे क्षेत्रों में गहन सर्वेक्षण की आवश्यकता है ।

लगभग यही स्थिति नवपाषाणकाल और ताम्रपाषाणकाल के स्थलों के संदर्भ में भी है ।

अधिकांशतः एन0वी0पी0 के स्थल नदियों या बड़ी झीलों के तट पर स्थित हैं । परवर्ती एन0वी0पी0 और शुंग कुषाण काल के जो स्थल सर्वेक्षण से प्रकाश में आये हैं उनमें ऐसे स्थल भी हैं जो मुख्य नदियों से दूर स्थित हैं । प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल के इन स्थलों से प्रतीत होता है कि इस काल तक आते आते संभवतः जनसंख्या के दबाव के कारण लोगों ने नये क्षेत्रों को भी आबाद करने की आवश्यकता समझी ।

ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों के आस-पास इस क्षेत्र में संभवतः आबादी में वृद्धि हुई और न केवल नदियों और झीलों के तटों पर अपितु अन्तर्वर्ती क्षेत्रों में भी आवास स्थलों की संख्या में वृद्धि हुई ।

संभवतः जलवायु सम्बन्धी परिवर्तन और राजनीतिक अस्थिरता के कारण लगभग तीसरी शताब्दी ई0 के उपरान्त इस क्षेत्र में गंगा के मैदान के अन्य क्षेत्रों की तरह आवास स्थलों की संख्या में कमी दिखाई पड़ती है ।

फैजाबाद जनपद में किये गये इस सर्वेक्षण से जो निष्कर्ष निकले हैं लगभग वैसे ही प्रमाण इस क्षेत्र में हुए अन्य क्षेत्रीय पुरातत्वीय अध्ययनों से भी प्राप्त हुये हैं ।

फैजाबाद जनपद से लगे हुए इसके दक्षिण में स्थित सुल्तानपुर जनपद में किये गये पुरातात्विक सर्वेक्षणों से रवीन्द्र कुमार ने निष्कर्ष निकाला कि इस क्षेत्र की नदियों ने यहाँ के नगरीकरण में छठी शताब्दी ई0पू0 से ही महत्त्वपूर्ण योगदान

दिया था और इस समय के आवास नदियों और बड़ी झीलों के तट पर ही स्थित थे। तृतीय शताब्दी ई०पू० में आवास स्थलों की संख्या और नये क्षेत्रों में भी उनकी उपस्थिति के प्रमाण यहाँ से भी मिले हैं। प्रथम और द्वितीय शताब्दी में नदियों से दूर के क्षेत्रों में भी इनकी संख्या में और वृद्धि हुई।[1] कौशाम्बी के समीपवर्ती क्षेत्रों में हुए पुरातात्विक अनुसन्धानों से जार्ज एरडसी ने यह निष्कर्ष निकाला है कि गंगा के मैदान में 700 ई०पू० के पहले के स्थल प्राय: ग्रामीण स्वरूप के हैं और नदियों के तट पर ही स्थित हैं लेकिन 700 ई०पू० के बाद राजनीतिक सत्ता-केन्द्र नगर-स्थल मिलने लगते हैं। द्वितीय शताब्दी ई०पू० के आते आते आवासों की स्थिति विकसित अवस्था का द्योतन करने लगती है। बड़े आकार का नगरीय केन्द्र, और उसकी परिधि में सामरिक महत्त्व के क्षेत्रों में उससे छोटे आकार के केन्द्र, ग्राम्य क्षेत्रों में कुछ छोटे प्रशासनिक केन्द्र और कृषक और पशुपालक जनसंख्या का छोटे-छोटे ग्रामों में आवास। यह आवास व्यवस्था मौर्य, शुंग और कुषाण कालों में लगभग एक जैसी रही।[2]

---

1. कुमार, रवीन्द्र, 1991, डिस्पर्सल आफ सेटिलमेण्ट्स इन दि मिडिल गोमती बेसिन : एन आर्क्यालोजिकल इन्वेस्टीगेशन, <u>इण्डो पैसिफिक प्री-हिस्ट्री</u>, 1990, पृष्ठ 192-197.

2. एरडसी, जार्ज, 1985, सेटिलमेण्ट आर्क्यालजी आफ दि कौशाम्बी रीजन, <u>मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट वाल्यूम 9</u>, पृष्ठ 66-79.

जनरल ए कनिंघम ने चीनी यात्रियों फाह्यान और ह्वेन सांग के यात्रा - मार्ग के आधार पर इस क्षेत्र में जो पुरातात्विक अनुसन्धान किये और ए० फ्यूरर ने बौद्ध ग्रन्थों और चीनी यात्रियों के विवरणों से इस क्षेत्र के पुरातत्व और इतिहास के अनुसन्धान में जो योगदान दिया उससे भी अयोध्या जनपद के पुरातात्विक अध्ययन में सहायता प्राप्त हुई है ।

इतिहासकारों में इस बात को लेकर काफी विवाद है कि वर्तमान अयोध्या ही वाल्मीकि रामायण में वर्णित अयोध्या है या वाल्मीकि रामायण की अयोध्या एक काल्पनिक नगर है ? डॉ० रोमिला थापर तथा कुछ अन्य इतिहासकारों का मत है कि वाल्मीकि रामायण में वर्णित अयोध्या एक सुविकसित नगरी थी, जो ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी के पहले की नहीं हो सकती, क्योंकि इसके पूर्व गंगा की घाटी में ऐसी किसी शहरी सभ्यता का विकास नहीं हुआ था । कोशल क्षेत्र का ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी का इतिहास हमें ज्ञात है, पर इसमें इक्ष्वाकुवंशीय राजा दशरथ, राम आदि के शासन की कोई गुंजाइश नहीं है । अतः यदि रामायण में वर्णित घटनाएँ ऐतिहासिक हैं, तो वे पाँचवीं शताब्दी के पूर्व की होंगी और तब रामायण में अयोध्या का वर्णन निश्चित ही बाद का क्षेपक है । कहने का तात्पर्य यह है कि वाल्मीकि की अयोध्या यदि काल्पनिक नहीं थी, तो अधिक से अधिक यह एक छोटा ग्राम रही होगी । एक विकसित नगरी के रूप में इसका वर्णन बाद में प्रक्षिप्त किया गया होगा या फिर हम यह मानें कि वाल्मीकि रामायण बहुत बाद में लिखी गयी और तब अयोध्या भले ही एक नगरी न रही हो, और चूँकि उस काल में अनेक अन्य नगर स्थापित हो चुके थे जिनके आधार पर वाल्मीकि ने अयोध्या का भी एक नगरी

के रूप में वर्णन किया । एक संभावना यह भी है कि सम्पूर्ण रामकथा प्रागैतिहासिक काल की है और ऐतिहासिक काल में इस कथा को नये युग के अनुरूप नया कलेवर प्राप्त हुआ ।

# सन्दर्भ-सूची

## सन्दर्भ सूची


अग्रवाल, डी0पी0, 1984, दि आर्क्यालजी आफ इण्डिया, नई दिल्ली ।

अग्रवाल, डी0पी0 और शीला कुसुमगर, 1974, प्रीहिस्टारिक क्रोनोलाजी एण्ड रेडियोकार्बन डेटिंग इन इण्डिया, नयी दिल्ली ।

एरडसी, जार्ज, 1985, सेटिलमेण्ट आर्क्यालजी आफ कौशाम्बी रीजन, मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट, वाल्यूम 9, पृष्ठ 66-79.

एलन, जॉन, 1936, कैटलाग आफ दि क्वाइन्स आफ एन्सियण्ट इण्डिया [इन दि ब्रिटिश म्यूजियम] लन्दन, 1975 में पुनर्मुद्रित

एलन, जे0, 1975, कैटलाग आफ क्वाइन्स आफ एन्सियण्ट इण्डिया, [रिप्रिन्ट]

कार्नेजी, पी0, 1870, ए हिस्टारिकल स्केच आफ तहसील फैजाबाद, इलाहाबाद, पृष्ठ 24.

कनिंघम, ए0, 1924, एन्सियन्ट जाग्रफी आफ इण्डिया, कलकत्ता ।

1924, दि एन्सियण्ट जाग्रफी आफ इण्डिया, वाराणसी [रिप्रिंट]

1972, आर्क्यालाजिकल सर्वे आफ इण्डिया फोर्थ रिपोर्ट मेड ड्यूरिंग दि इयर, 1962, 1963, 1964, 1965 [रिप्रिंट], वाराणसी ।

कुमार, रवीन्द्र, 1991, डिस्पर्सल आफ सेटिलमेण्ट्स इन दि मिडिल गोमती बेसिन: एन आर्क्यालॉजिकल इन्वेस्टिगेशन, इण्डोपैसिफिक प्रीहिस्ट्री, 1990, पृष्ठ 192-197.

कुक, डब्ल्यू0, 1986, दी ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स आफ दी नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध, वाल्यूम 1-4, कलकत्ता ।

गुप्त, रबीन्द्र, 1982, जिला जनगणना हस्त-पुस्तिका, निदेशक, जनगणना परिचालन, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद ।

गुप्ता, एस०पी० एण्ड के०एस० रामचन्द्रन (एड) 1976, महाभारत : मिथ एण्ड रियल्टी डिफरिंग व्यूज, नई दिल्ली ।

घोष, ए० 1973, दि सिटी इन अरली हिस्टारिकल इन इण्डिया, सेन्टर आफ एडवान्स्ड स्टडी, शिमला ।

चतुर्वेदी, शैलनाथ, 1980, अरली पाटरी फ्राम सोहगौरा, इलाहाबाद में इण्डियन आर्कोलाजिकल सोसाइटी के सम्मेलन में पढ़ा गया शोधपत्र

1985, एडवान्स आफ विन्ध्यन नियोलिथिक एण्ड चैलकोलिथिक कल्चर्स टू दि हिमालयन तराई : इक्सकैवेसन एण्ड इक्सप्लोरेशन इन दि सरयूपार रीजन आफ उत्तर प्रदेश, मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट, वैलूम 9, पृष्ठ 101-108.

चम्याल, एल०एस०, 1987, ए प्रिलिमनरी नोट आन दि क्वाटरनरी डिपाजिट्स आफ दि अपर सरयू बेसिन इन कुमायूँ हिमालय, मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट, वैलूम 11.

जोशी, ई०बी०, 1960, उ०प्र० डिस्ट्रिक्ट गजेटियर फैजाबाद, इलाहाबाद ।

जोशी, एम०सी०, 1982, अयोध्या : मिथिकल एण्ड रियल पुरातत्व नं० 11, पृष्ठ 107-109.

त्रिपाठी, आर०एस०, 1937, हिस्ट्री आफ कन्नौज, बनारस ।

1942, हिस्ट्री आफ एन्सियण्ट इण्डिया, बनारस ।

त्रिपाठी, विभा, 1976, दि पेन्टेड ग्रे-वेयर - एन आइरन एज कल्चर आफ नार्दर्न इण्डिया, दिल्ली ।

थपलियाल, के0के0, 1972, स्टडीज इन एन्सियन्ट इण्डियन सील्स, (ए स्टडी आफ नार्थ इण्डियन सील्स एण्ड सीलिंग्स फ्राम थर्ड सेन्चुरी बी0सी0 टू मिड सेवेन्थ सेन्चुरी ए0डी0), अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ ।

दानी, ए0एच0, 1963, इण्डियन पौलियोग्राफी, क्लैरेन्डन प्रेस, आक्सफोर्ड ।

दास, गुप्ता, पी0सी0, 1964, इक्सकैवेशन्स ऐट पाण्डु राजा रढ्रिवि, कलकत्ता ।

दे, नन्दलाल, 1990 दि जियोग्राफिकल डिक्सनरी आफ एन्सिएन्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया (द्वितीय संस्करण), बाम्बे, मूलत: 1927 में मुद्रित ।

देशपाण्डे, एम0एन0, 1969, रोमन पाटरी, पाटरीज इन एन्सियन्ट इण्डिया, (सं0) बी0पी0 सिन्हा, पटना ।

नागर, मालती और वी0एन0 मिश्र, 1989, हन्टर गैदरर्स इन ऐन अग्रेरियन सेटिंग: दि नाइनटीन सेंचुरी सिचुएशन इन दी गंगा प्लेन्स, मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट, वाल्यूम 13, पृष्ठ 66-78.

1990, दि कन्जर्स - ए हंटिंग गैदरिंग, कम्युनिटी आफ दी गंगा वैली, उ0प्र0, मैन एण्ड इनवाइरनमेन्ट, वाल्यूम 15, नं0 2, पृष्ठ 71-88.

नारायण, ए0के0 और राय, टी0एन0, 1968, इक्सकैवेशन्स ऐट प्रहलादपुर, वाराणसी ।

1977, इक्सकैवेशन ऐट राजघाट, वाराणसी ।

नारायण, एल0ए0, 1970, नियोलिथिक सेटिलमेन्ट एट चिरांद, जरनल आफ बिहार रिसर्च सोसायटी, वैलूम 56.

नेगी, जे0एस0, 1975, नहुष का टीला, के0सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वैलूम, इलाहाबाद ।

नेविल, एच0आर0, 1905, फैजाबाद : ए गजेटियर, इलाहाबाद ।

नेशफील्ड, 1983, ब्रीफ रिव्यू आफ द कास्ट सिस्टम आफ द नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध, कलकत्ता ।

पाल, जे0एन0, 1977, नवपाषाणिक संस्कृतियाँ, डॉ0 राधाकान्त वर्मा द्वारा लिखित भारतीय प्रागैतिहासिक संस्कृतियाँ, इलाहाबाद

1989, क्या राम प्रागैतिहासिक हैं ? श्री राम इन आर्ट आर्क्यालजी एण्ड लिटरेचर, पृष्ठ 196-205, पटना ।

पार्जिटर, एफ0ई0, 1913, पुराण टेक्स्ट्स आफ दि डायनेस्टीज आफ दि कलि एज, आक्सफोर्ड ।

पोशेल, जी0एल0, 1988, रेडियो कार्बन डेट्स फ्राम साउथ एशिया, मैन एण्ड इनवायरनमेन्ट, वैल्यूम 12, पृष्ठ 17.

बेवरिज, 1921, दि बाबरनामा, लन्दन ।

फ्यूरर, ए0, 1891, दि मानूमेण्टल एन्टीक्विटी एण्ड इन्सक्रिप्सन इन दि नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज एण्ड अवध, इलाहाबाद, दिल्ली से 1969 में पुनर्मुद्रित ।

भट्ट, एस0के0, 1970, आर्क्यालोजिकल इक्सप्लोरेशन इन बस्ती डिस्ट्रिक्ट, पुरातत्व, नं0 3, पृष्ठ 78-88.

भण्डारकर, आर0जी0, 1975, अरली हिस्ट्री आफ द दक्कन, भारतीय पब्लिशिंग हाउस, वाराणसी ।

मजूमदार, आर०सी० ‡सं०‡, 1951, द हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इन्डियन पीपुल, वैलूम 2, क्लासिकल एज, बम्बई ।

मजूमदार, आर०सी० एण्ड पुसालकर ‡सं०‡, 1951, द हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल वैलूम 1, वैदिक एज, बम्बई ।

मणि, बी०आर०, 1991, आइडेन्टीफिकेशन आफ सेतव्या, द एन्सियन्ट सिटि आफ कोशल विद सिसवानिया एण्ड इट्स टेराकोटा आर्ट, पुरातत्व नं० 21, पृष्ठ 43, 49.

मण्डल, डी०, 1972, रेडियोकार्बन डेट्स एण्ड इण्डियन आर्कलाजी, इलाहाबाद

मिश्र, वी०डी०, 1970, चैल्कोलिथिक कल्चर्स आफ ईस्टर्न इन्डिया, दि ईस्टर्न एन्थ्रोपोलाजिस्ट ।

1977, सम ऐस्पेक्ट्स आफ इण्डियन आर्कलाजी, इलाहाबाद ।

मिश्रा, वी०एन०, 1992, रिसर्च आन द इण्डस सिविलाइजेशन : ए ब्रीफ रिव्यू, द इस्टर्न एन्थ्रोपोलोजिस्ट, वैलूम 45, नं० 1 और 2, पृष्ठ 1-19.

मुखर्जी, आर०के०, 1926, हर्ष, आक्सफोर्ड ।

रिजवी और भार्गव, 1958, फ्रीडम स्ट्रगिल इन यू०पी०, वैलूम 2, लखनऊ ।

राय, उदय नारायण, 1965, प्राचीन भारत में नगर और नगर जीवन, इलाहाबाद ।

रायचौधरी, एच०सी०, 1953, पोलिटिकल हिस्ट्री आफ एन्सियन्ट इण्डिया, कलकत्ता

राय, भारती कुमारी, 1987, दि प्राकार आफ अयोध्या एज नोटिस्ड बाई पतंजलि, हिस्ट्री एण्ड कल्चर : वी०पी० सिन्हा फैलिसिटेशन वैलूम ‡सं० भगवन्त सहाय‡, पृष्ठ 101-103. दिल्ली ।

ला, बी०सी०, 1943, हिस्टारिकल जागर्फी आफ एन्सियण्ट इण्डिया, पूना.

1943, ट्राइब्स इन एन्सियन्ट इण्डिया

लाल, बी०बी०, 1954-55, इक्सकैवेशन्स एट हस्तिनापुर एण्ड अदर इक्सप्लोरेशन्स इन दि अपर गंगा एण्ड सतलज बेसिन, 1950-52, एन्सियण्ट इण्डिया, नं० 10, 11.

1976, महाभारत एण्ड आक्यालाजी, महाभारत : मिथ एण्ड रियल्टी डिफरिंग व्यूज (सं०) एस०पी० गुप्ता और के०एस० रामचन्द्रन, नई दिल्ली ।

1979, की नोट एड्रेस, श्रीराम इन आर्ट आक्यालजी एण्ड लिटरेचर, पटना ।

1981, वाज अयोध्या ए मिथिकल सिटी ? पुरातत्व नं० 10, पृष्ठ 45-49.

1987, अयोध्या आफ द वाल्मीकि रामायण : एन इनरजायजिंग डिवेट आन इट्स आइडेन्टीफिकेशन, पुरातत्व नं० 16, पृष्ठ 79-84.

1989, ए० घोष द्वारा सम्पादित, इन इन्साइक्लोपीडिया आफ इन्डियन आक्यालजी, इण्डियन कौंसिल आफ हिस्टारिकल रिसर्च के लिए मुंशीराम मनोहरलाल प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 31-32.

1991, प्लान्ड को-आपरेशन बिटवीन आर्कलाजिस्ट एण्ड स्कालर्स आफ एन्सियन्ट लिटरेचर-ए क्राइंग नीड, मैन एण्ड इनवायरनमेन्ट, वाल्यूम 16, नं० 1, पृष्ठ 1-3.

लाल, बी०बी० एण्ड के०एन० दीक्षित, 1981, श्रृंग्वेरपुर : ए की साईट फार दि प्रोटोहिस्ट्री एण्ड अरली हिस्ट्री आफ द सेन्ट्रल गंगा वैली, पुरातत्व, नं० 10, पृष्ठ 1-7.

लाल, बी०बी० और के०के० शर्मा, 1990, दि डेट आफ किंग धनदेव आफ कोशल : ए रिइक्जामिनेशन आफ दि पैलियोग्राफिक एण्ड हिस्टोरिकल इविडेन्स, पुरातत्व नं० 19, पृष्ठ 38-42.

लाला, सीताराम, 1932, अयोध्या का इतिहास, इलाहाबाद ।

वाटर्स, थामस, 1904-05, आन युवानच्वांग्स इन इण्डिया, सम्पादित द्वारा टी० डब्ल्यू०, राइजडेविड्स और एस० डब्ल्यू० वुसेल, दो खण्ड, लन्दन ।

वर्मा, आर०के०, मिश्रा, वी०डी०, पाण्डेय, जे०एन० और पाल, जे०एन०, 1985, ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन दी इक्सकैवेशन्स एट दमदमा (1982-1984), मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट, वाल्यूम 9, पृष्ठ 45-65.

वर्मा, वी०एस०, 1969, ब्लैक एण्ड रेडवेयर इन बिहार, वी०पी० सिन्हा (सं०) पाटरीज इन एन्सियन्ट इन्डिया ।

1971, इक्सकैवेसन एट चिराद : न्यू लाइट आन इण्डियन नियोलिथिक कल्चर काम्पलेक्स, पुरातत्व नं० 4.

वर्मा, टी०पी०, 1971, दि पैलियोग्राफी आफ ब्राह्मी स्क्रिप्ट इन नार्थ इन्डिया (236 ई०पू० से 200 ई० तक), सिद्धार्थ प्रकाशन, वाराणसी ।

1981, उ०प्र० के अभिलेख, उत्तर प्रदेश पुरातत्व विशेषांक

विन्टरनित्ज, एम०, 1927, ए हिस्ट्री आफ इन्डियन लिटरेचर, वैलूम I, कलकत्ता

विष्णु, मित्र, 1975, पैलियोबाटनिस्ट

शास्त्री, भवदत्त और काशीनाथ पाण्डरंग (सं०) धनपाल की तिलक मंजरी, प्रकाशक तुकाराम जावाजी ।

शर्मा, जी०आर०, 1960, दि इक्सकैवेशन एट कौशाम्बी (1957-1959), इलाहाबाद

1973, स्टोन एज इन दि विन्ध्याज एण्ड दि गंगा वैली, रेडियोकार्बन डेट्स एण्ड इण्डियन आर्कलाजी (सं०), डी०पी० अग्रवाल और ए० घोष,

1973, मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन दि गंगा वैली, प्रोसिडिंग्स आफ दि प्रीहिस्टारिक सोसायटी, वैलूम 31.

1975, सीजनल माइग्रेसन्स एण्ड मेसोलिथिक लेक कल्चर्स आफ दि गंगा वैली, के०सी० चट्टोपाध्याय मेमोरियल वैलूम, इलाहाबाद ।

1978, प्रागैतिहासिक मानव की कहानी : गंगा घाटी की प्राचीन संस्कृति पर नया प्रकाश, दिनमान, भाग 14, अंक 34, 20 से 26 अगस्त

1980, रेह इन्सक्रिप्सन आफ मेनान्डर एण्ड इन्डोग्रीक इनवेजन आफ द गंगा वैली, इलाहाबाद ।

शर्मा, जी०आर०, वी०डी० मिश्रा, डी० मण्डल, बी०बी० मिश्रा और जे०एन० पाल, 1980, विगिनिंग्स आफ एग्रीकल्चर, इलाहाबाद ।

शर्मा, जी०आर०, वी०डी० मिश्रा और जे०एन० पाल, 1980, इक्सकैवेशन एट महदहा, इलाहाबाद ।

श्रीवास्तव, ए०एल०, 1954, दि फर्स्ट टू नवाब्स आफ अवध, आगरा ।

सिंह, आर०एल० (सं०) 1971, इण्डिया : ए रीजनल जाग्रफी, वाराणसी ।

सिंह, पुरुषोत्तम और मक्खनलाल, 1985, नरहन, 1983, 85 : ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट, भारती (बुलेटिन आफ दी डिपार्टमेण्ट आफ एन्सियन्ट इण्डियन हिस्ट्री कल्चर एण्ड आक्यालाजी, बनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी), (एन०एस०, 3)

सिंह, वीरेन्द्र प्रताप, 1989, खैराडीह : ए चैलकोलिथिक सेटिलमेन्ट, मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट, वाल्यूम 13, पृष्ठ 28, 34.

सिन्हा, के०के०, 1967, इक्सकैवेशन्स एट श्रावस्ती, 1959, वाराणसी ।

सेन, सुरेन्द्रनाथ, 1957, इण्डियन ट्रेवेल्स आफ थीवनार एण्ड का री री, दिल्ली

सरकार, डी०सी०, 1965, सेलेक्ट इन्सक्रिप्सन: बियरिंग आन इन्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेशन, वैलूम 1, यूनिवर्सिटी आफ कलकत्ता ।

स्पेट, ओ०एच०के० और ए०टी०ए० लीरमान्थ, 1960, इण्डिया एण्ड पाकिस्तान : ए जनरल एण्ड रीजनल जागर्फी, स्फोल्क ग्रेट ब्रिटेन ।

## (ब) रिपोर्ट

आक्यालाजिकल सर्वे रिपोर्ट,

इण्डियन आक्यालजी : ए रिव्यू

इपीग्राफिया इण्डिका

फलक 1 : अयोध्या : एक टीले का विहंगम दृश्य

फलक 2 : अयोध्या : बाबरी मस्जिद के निकट का विहंगम दृश्य

फलक 3 : अयोध्या : मणिपर्वत टीले का विहंगम दृश्य
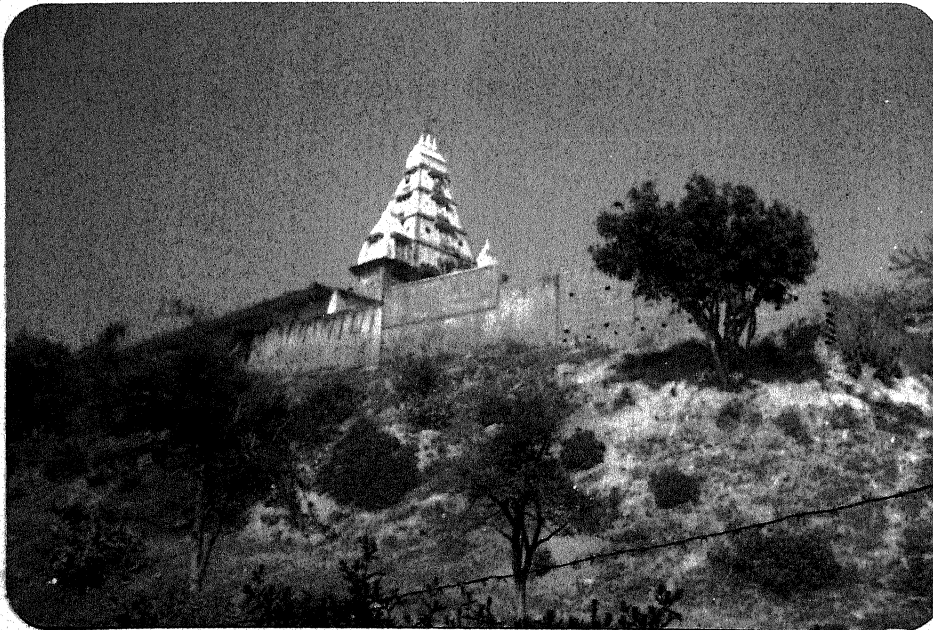
फलक 4 : अयोध्या : सुग्रीव टीले का विहंगम दृश्य

फलक 5 : अयोध्या : जन्मभूमि और कुबेर टीले के मध्यवर्ती भाग का विहंगम दृश्य

फलक 6 : अयोध्या : कुबेर टीले का विहंगम दृश्य
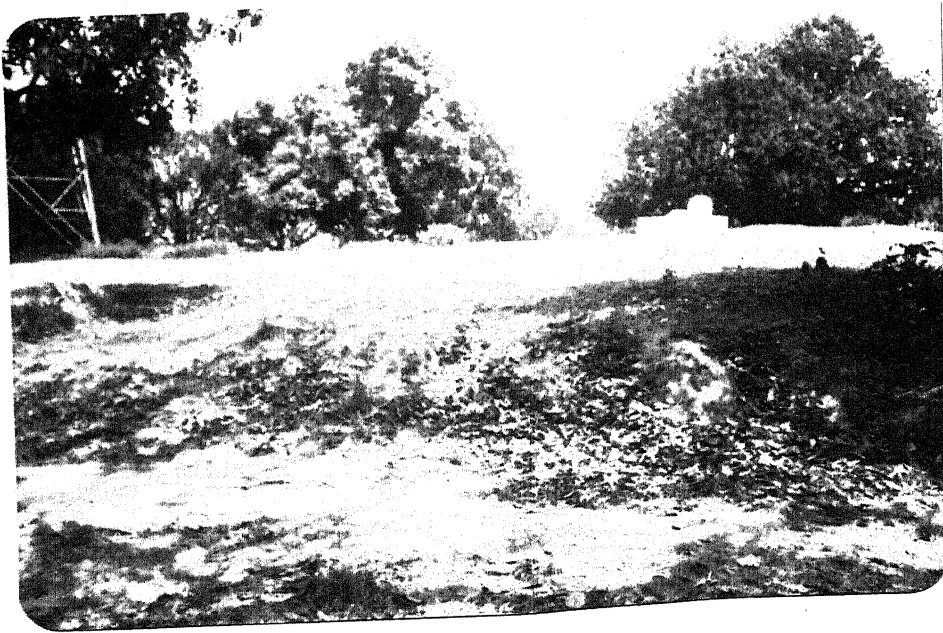
फलक 7 : मसौधा : स्थल का विहंगम दृश्य

फलक 8 : सरैठी : विहंगम दृश्य

फलक 9 : भगवाभीट : विहंगम दृश्य

फलक 10 : भगवाभीट : विहंगम दृश्य
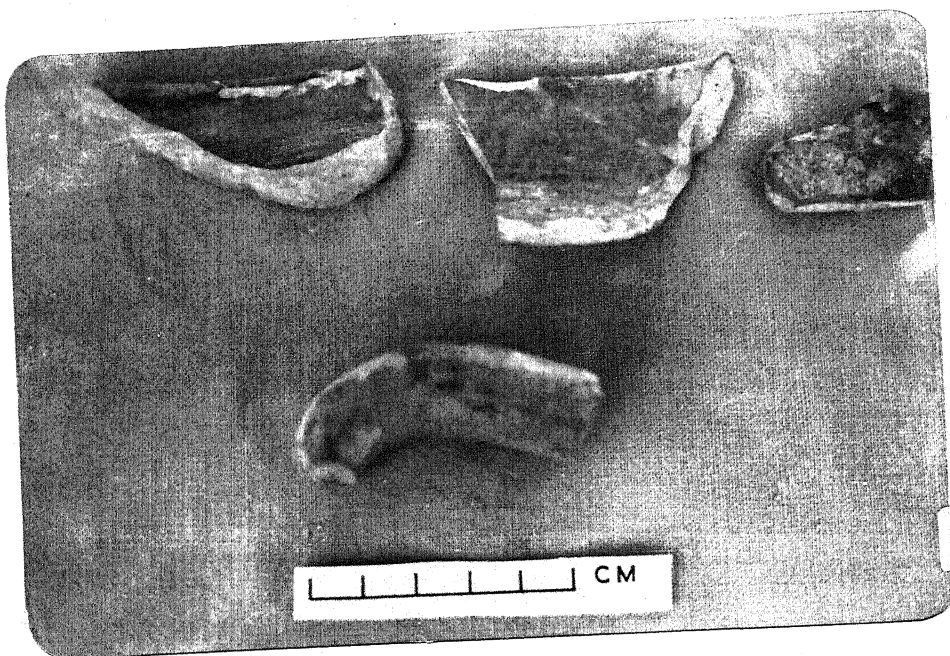
फलक 11 : भगवाभीट : ग्रे-वेयर के पात्र-खण्ड
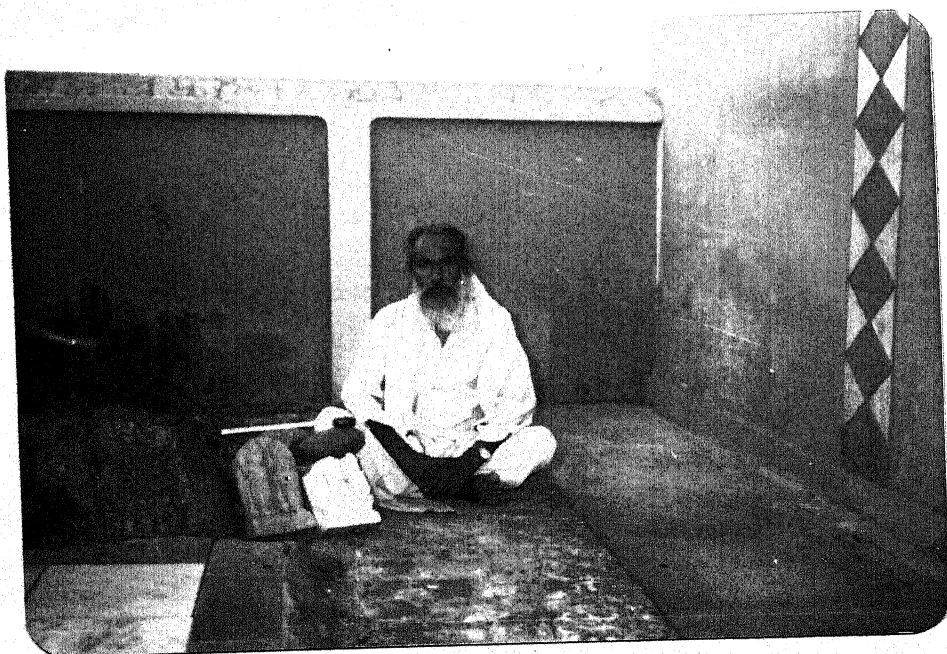
फलक 12 : विल्हर घाट : दशरथ समाधि पर निर्मित नया मन्दिर और पाषाण मूर्तियाँ

फलक 13 : विल्हर घाट : चपटे ईंटों का एक पुराना भवन

फलक 14 : मयाकनकपुर : विहंगम दृश्य

फलक 15 : सरायखरगी : विहंगम दृश्य

फलक 16 : डिहवा मंगारी : विहंगम दृश्य

फलक 17 : बीकापुर : विहंगम दृश्य

फलक 18 : पातूपुर : विहंगम दृश्य

फलक 19 : पातूपुर : एक गोलाकार हौज के अवशेष
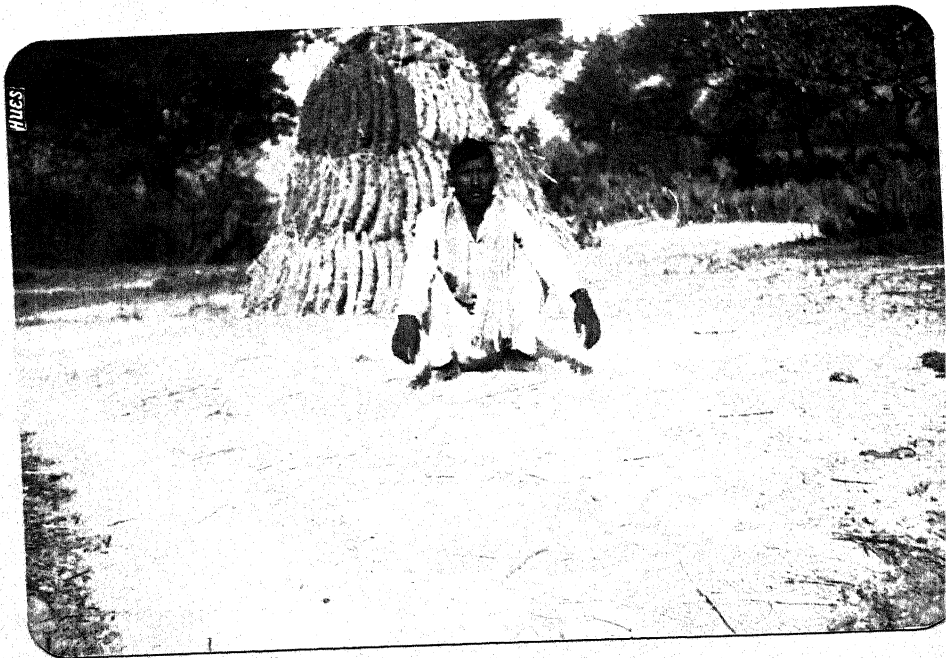
फलक 20 : भरथुआ : विहंगम दृश्य

फलक 21 : भरथुआ : विहंगम दृश्य

फलक 22 : फत्तेपुर बेलाबाग : विहंगम दृश्य
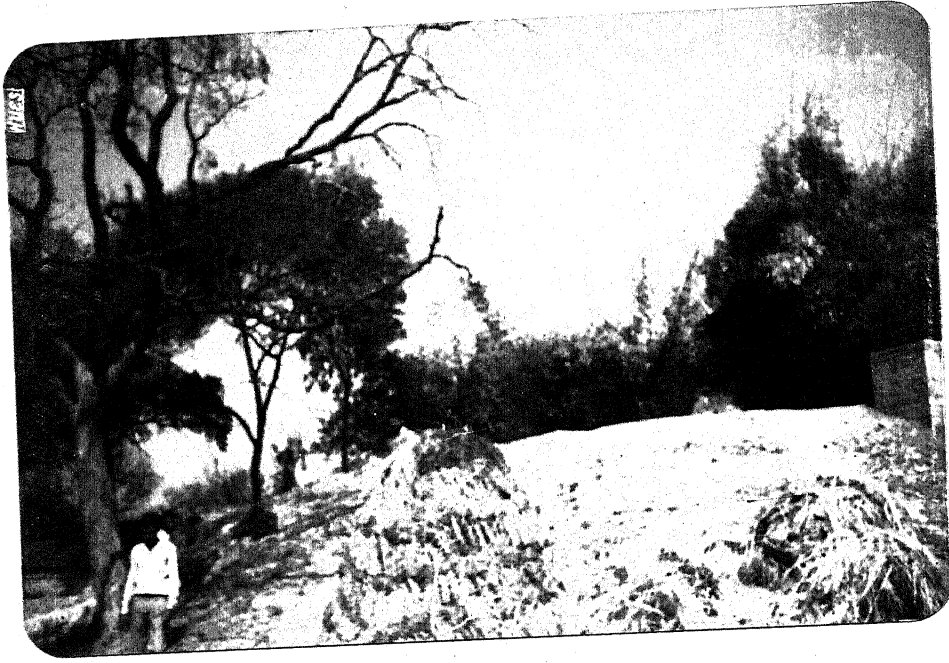
फलक 23 : खेवार : विहंगम दृश्य

फलक 24 : भरधुआ-सरैंया : विहंगम दृश्य

फलक 25 : बन्दनडीह : विहंगम दृश्य
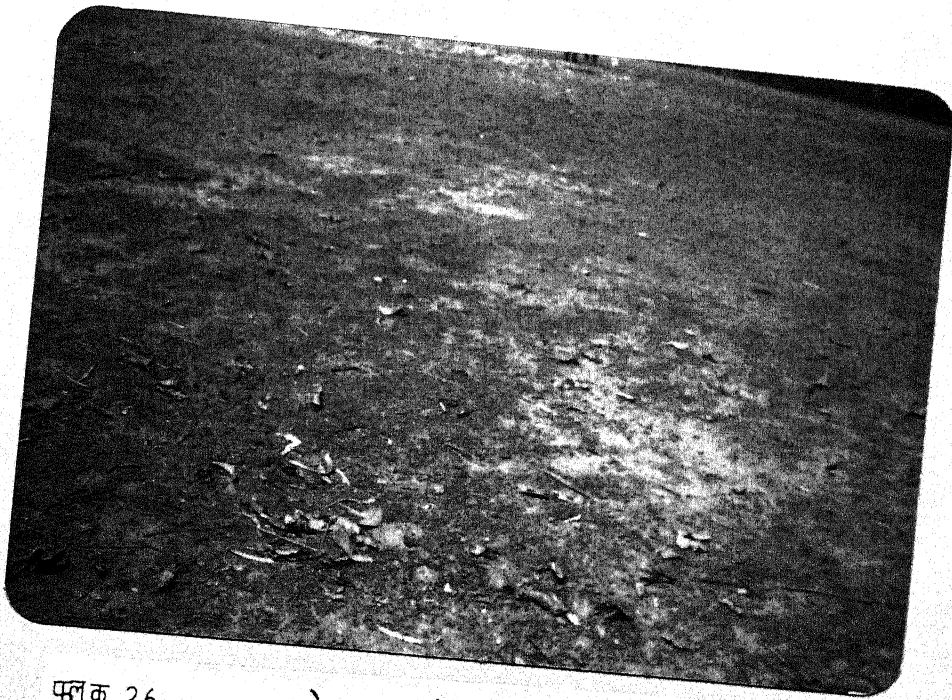
फलक 26 : जोगापुर गोहन्ना : विहंगम दृश्य
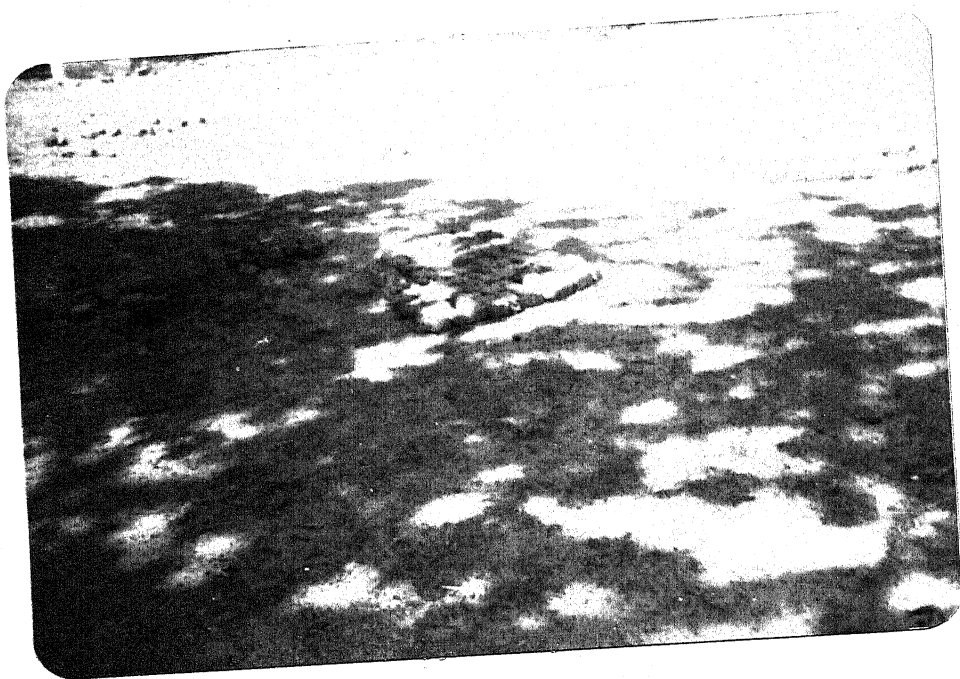
फलक 27 : जोगापुर गोहन्ना : विहंगम दृश्य

फलक 28 : सोनहरा लालापुर : विहंगम दृश्य

फलक 29 : सोनहरा लालापुर : विहंगम दृश्य
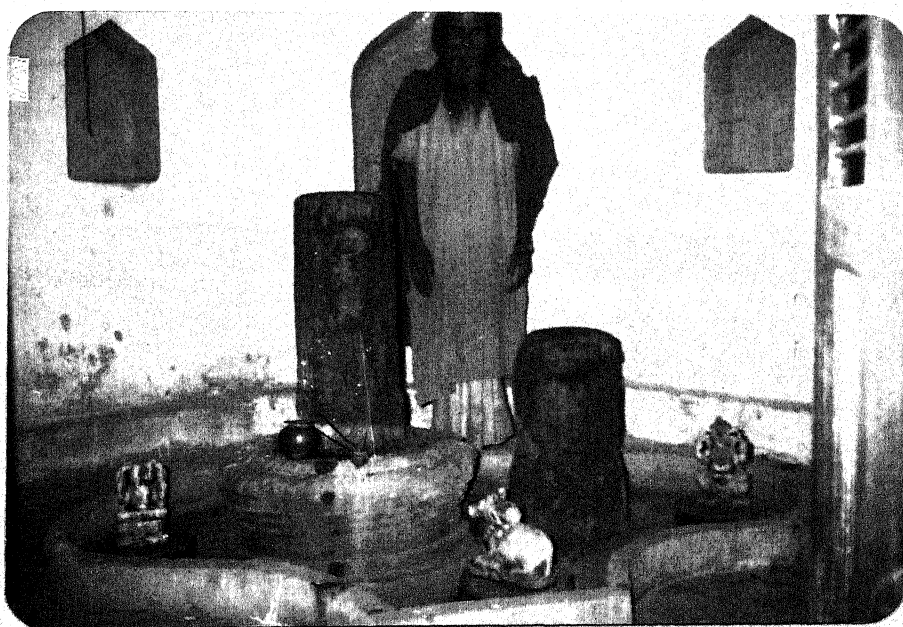
फलक 30 : सोहनरा लालापुर : आधुनिक मन्दिर में कुछ प्राचीन पाषाण मूर्तियाँ

फलक 31 : सोनहरा लालापुर : दो प्राचीन शिवलिंग

फलक 32 : रम्मनपुर : विहंगम दृश्य

फलक 33 : लोदीपुर कटौना : विहंगम दृश्य

फलक 34 : लोदीपुर कटौना : ईंट खण्ड
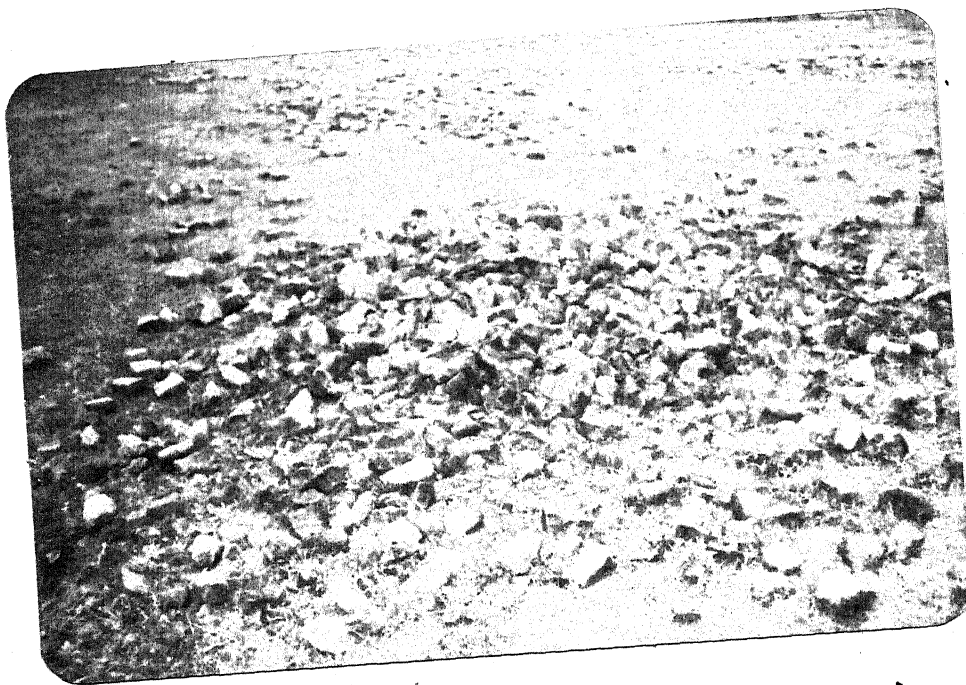
फ्लक 35 : लोदीपुर कटौना : बिखरे हुए ईंटों के टुकड़े
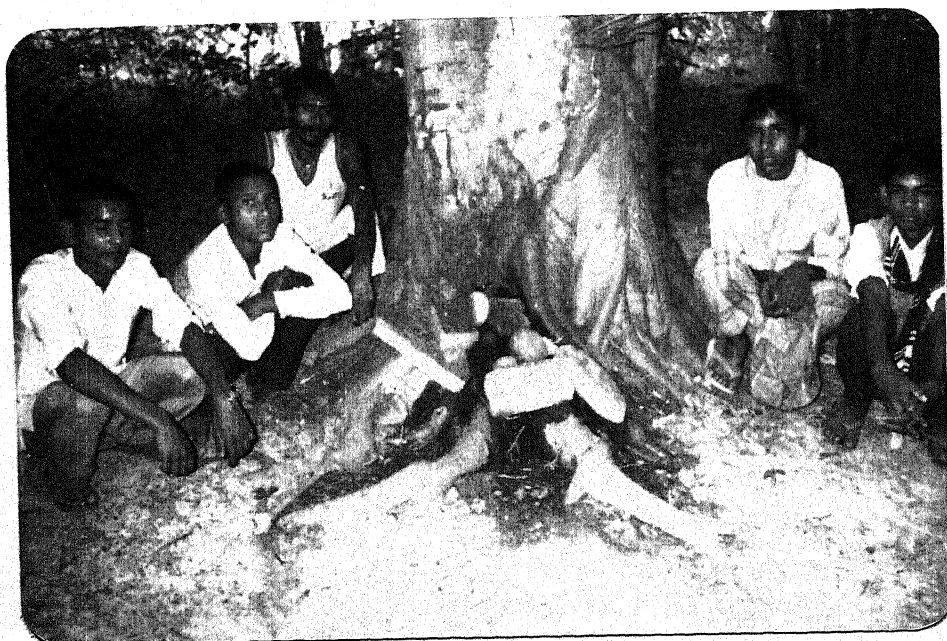
फलक 37 : लोदीपुर कटौना : पाषाण मूर्तियों के टुकड़े ।
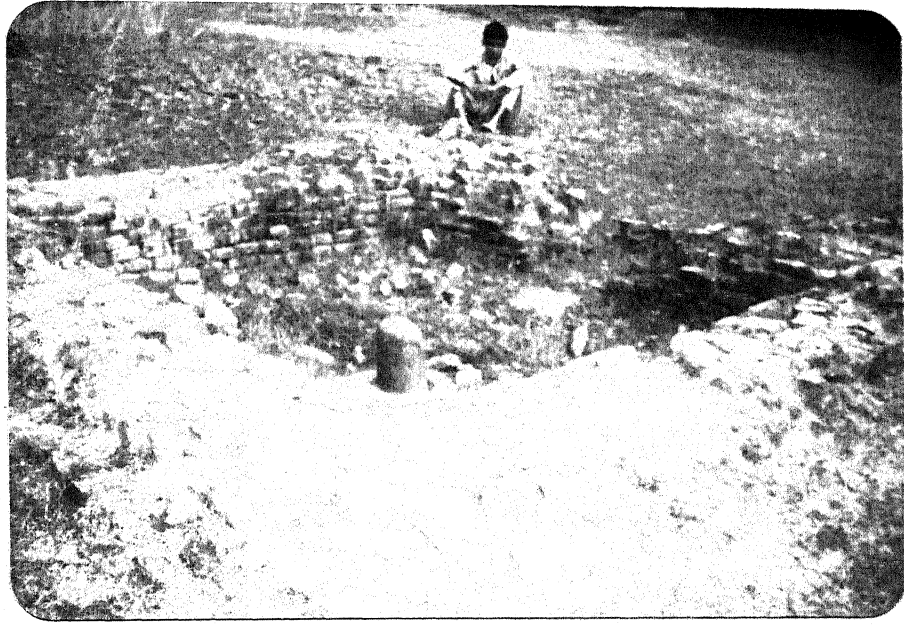
फलक 38 : लोदीपुर कटौना : प्राचीन शिवमन्दिर

फलक 39 : लोदीपुर कटौना : चर्ट पत्थर का टुकड़ा

फलक 40 : करतोरा : विहंगम दृश्य

फलक 41 : मौखा : विहंगम दृश्य
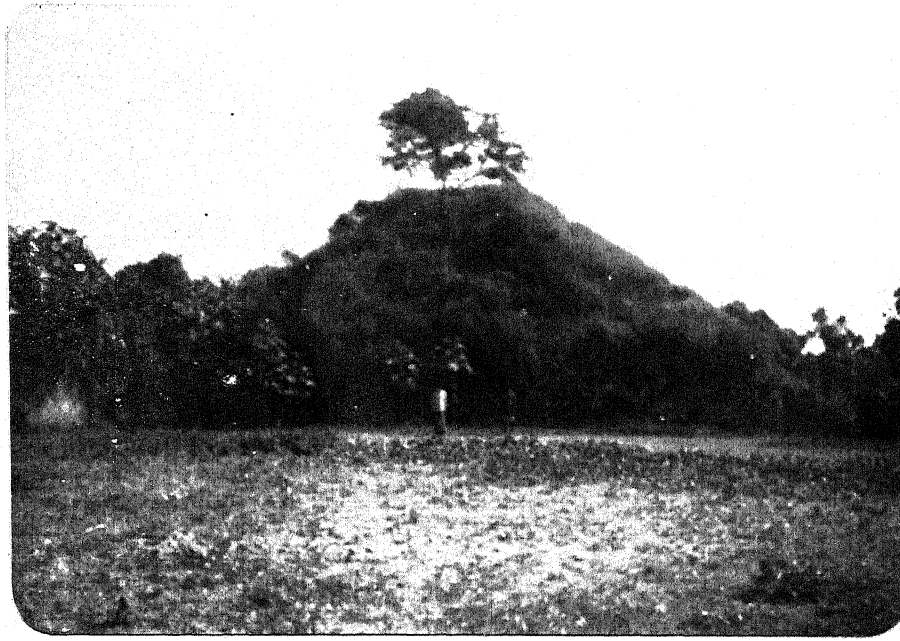
फलक 42 : मौखा : स्तूप का विहंगम दृश्य

फलक 43 : मौखा : प्राचीन कुँआ
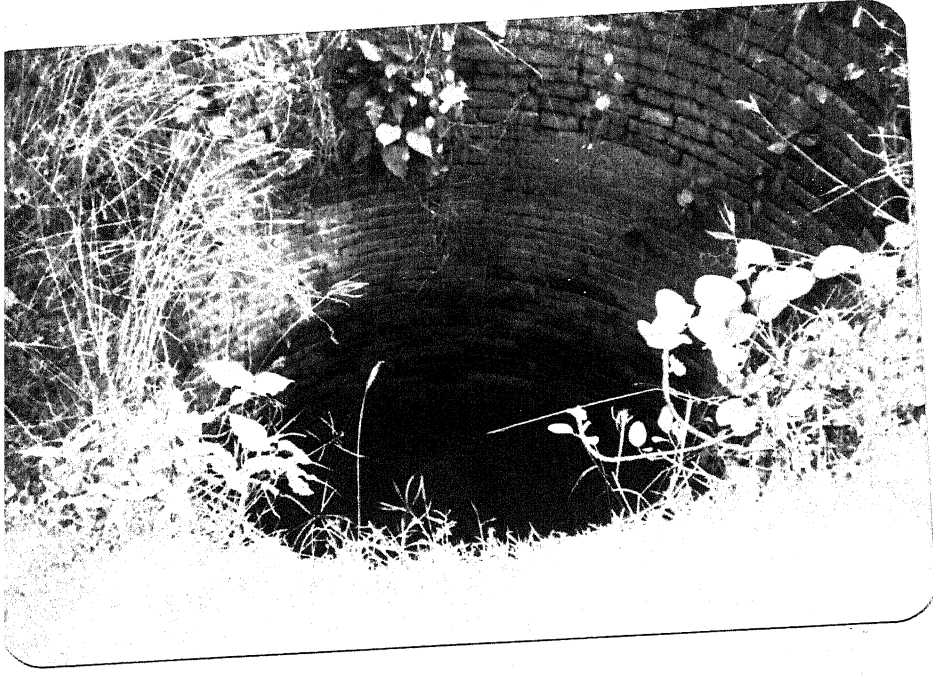
फलक 44 : मौखा : प्राचीन कुँआ

फलक 45 : पहाड़पुर टंडवा : विहंगम दृश्य

फलक 46 : सहनेमऊ : एन0बी0पी0 पात्र-खण्ड
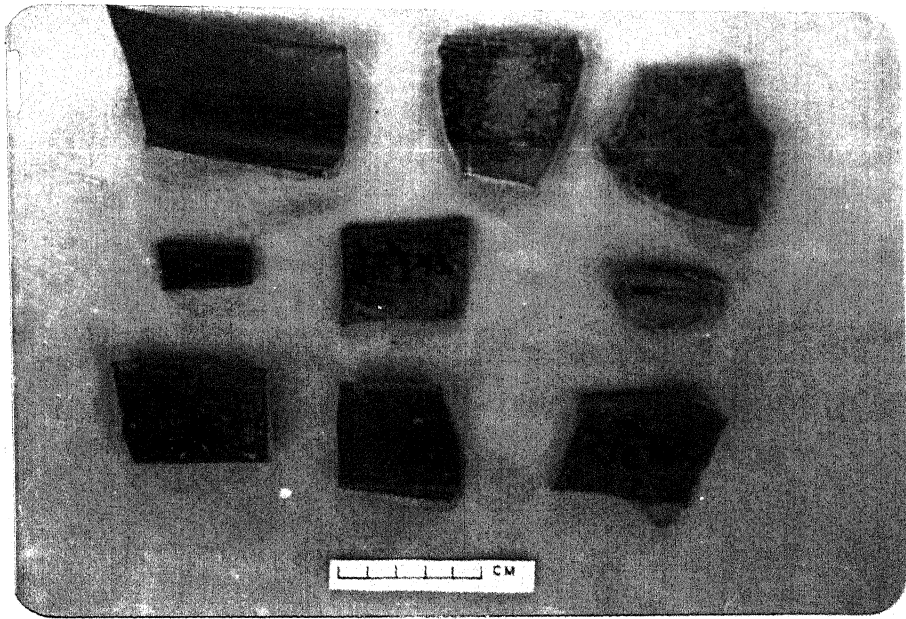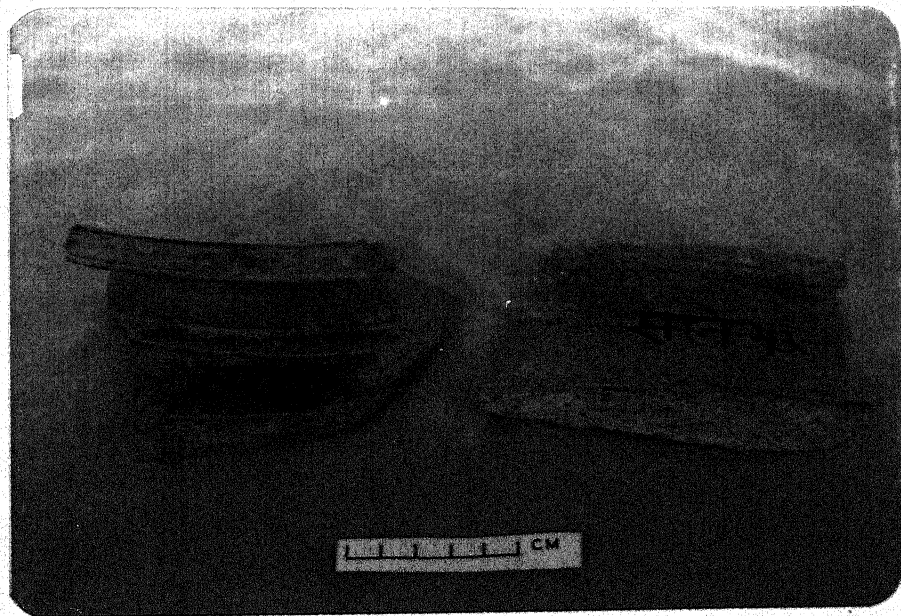
फलक 47 : सहनेमऊ : लाल पात्र-परम्परा के पात्र-खण्ड

फलक 48 : कटाट : विहंगम दृश्य

फलक 49 : दसउवाँ : फूलपुर : विहंगम दृश्य

फलक 50 : दसउआँ : फूलपुर : विहंगम दृश्य
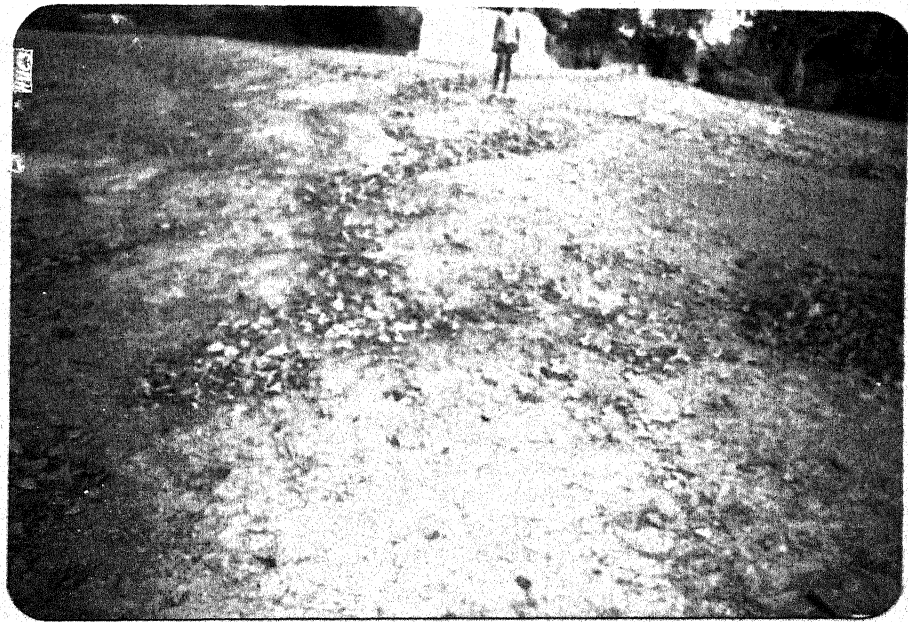
फलक 51 : डिहवा दौलतपुर : विहंगम दृश्य
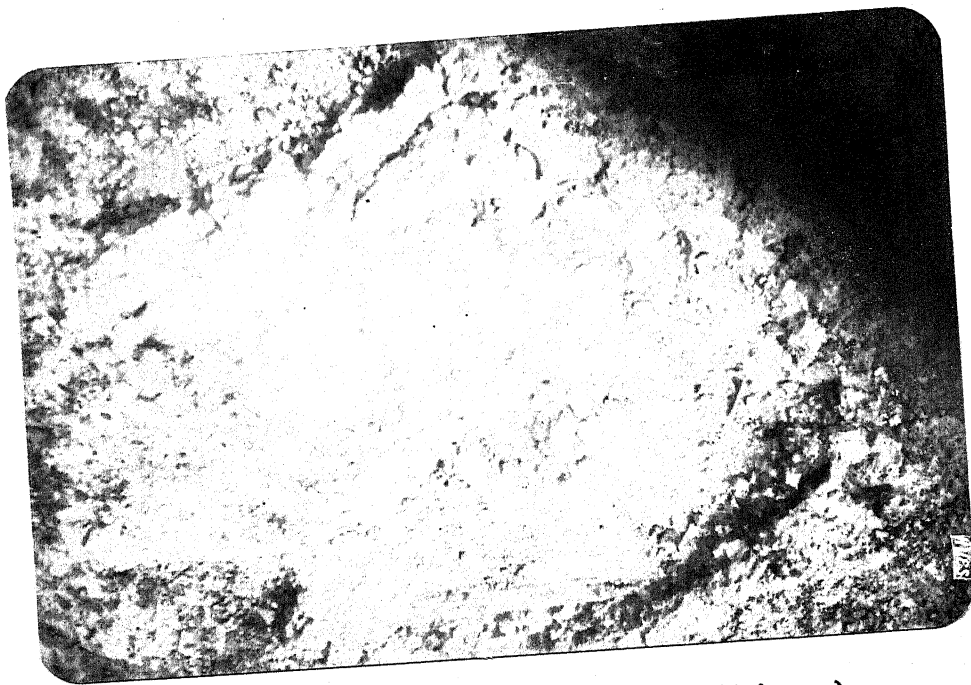
फलक 52 : डिहवा दौलतपुर : भट्ठियों के अवशेष
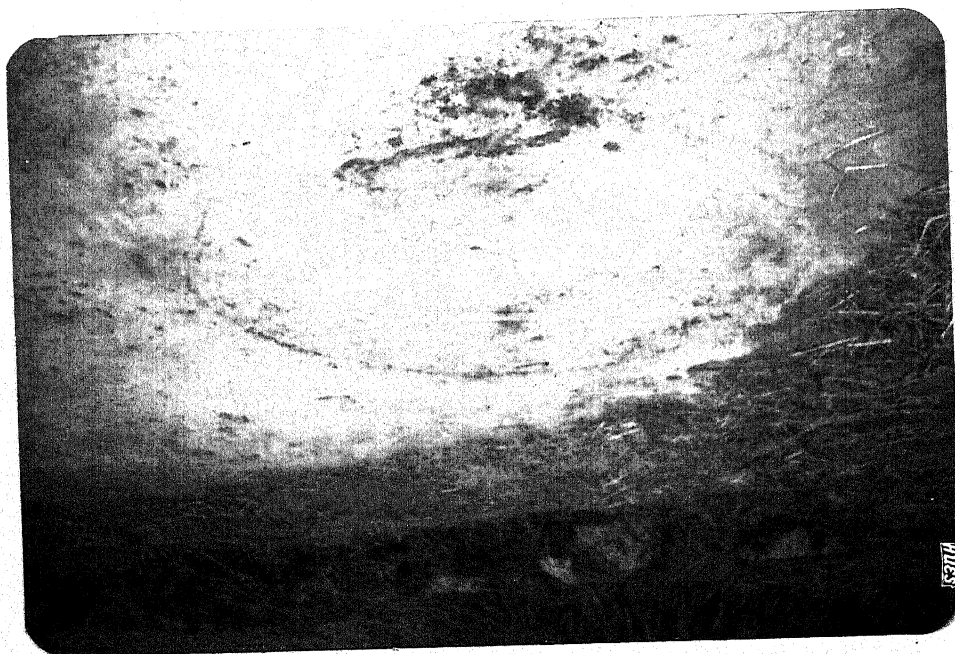
फलक 53 : डिहवा दौलतपुर : भट्ठियों के अवशेष
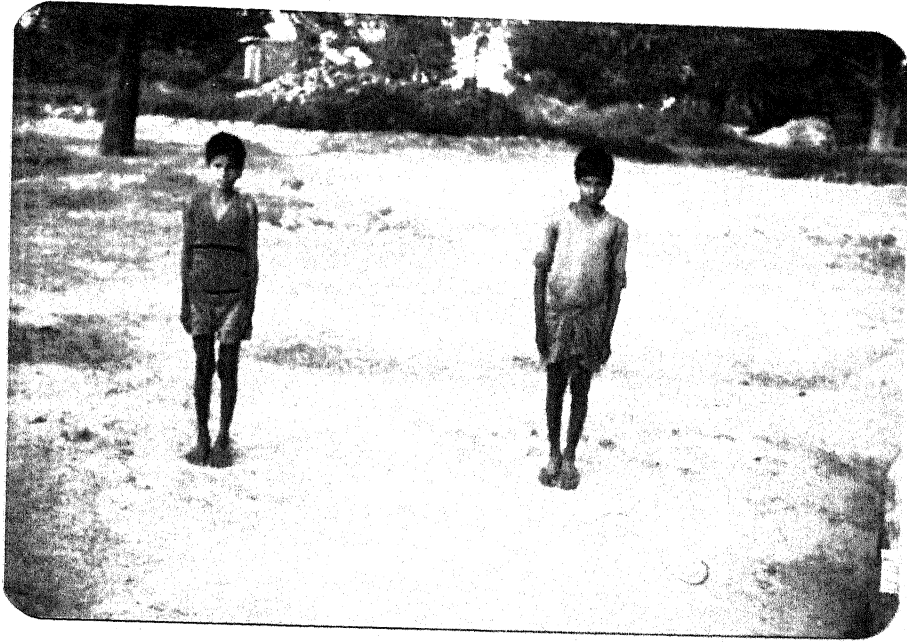
फलक 54 : विहरई : विहंगम दृश्य

फलक 55 : विहरई : कुषाणकालीन हारीति की मृण्मूर्ति

फलक 56 : खैरपुर : विहंगम दृश्य

फलक 57 : विहरोजपुर : विहंगम दृश्य
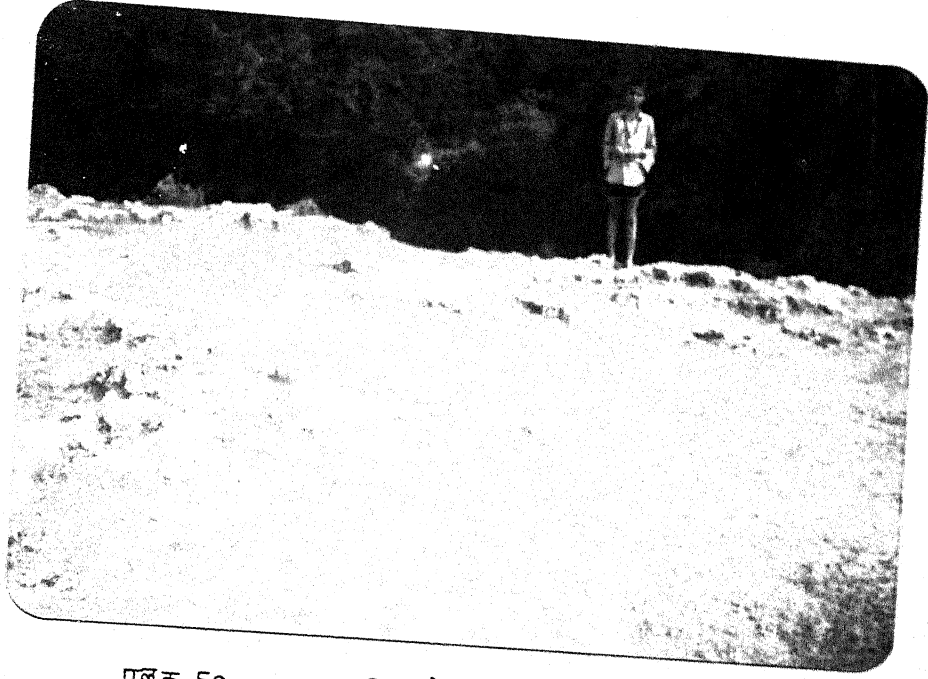
फलक 58 : विहरोजपुर : विहंगम दृश्य
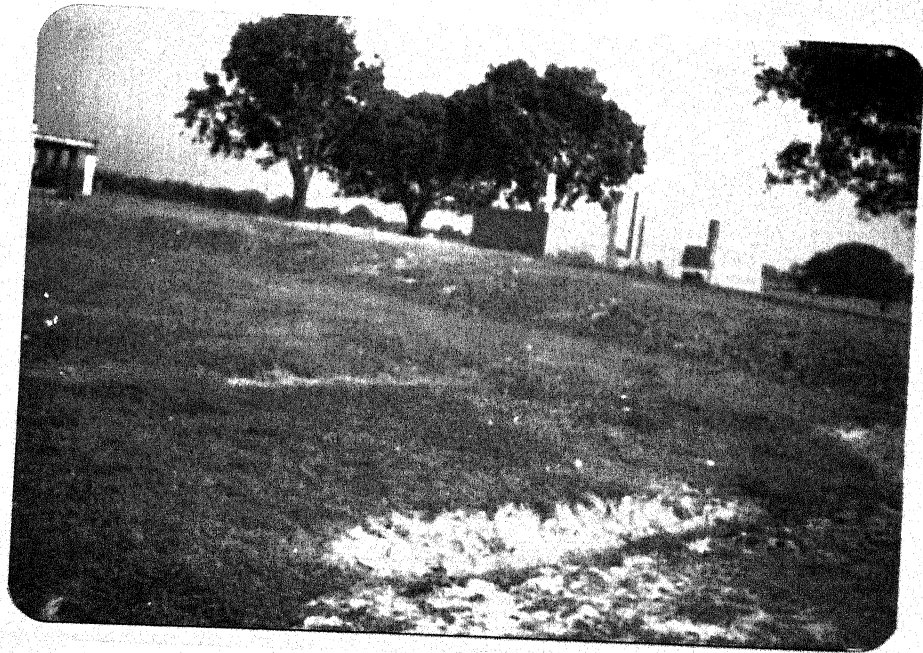
फलक 59 : समसुद्दीनपुर : विहंगम दृश्य

फलक 60 : ब्राहिमपुर सगरा : विहंगम दृश्य

फलक 61 : ब्राहिमपुर-सगरा : लाल पात्र-परम्परा के पात्र-खण्ड

फलक 62 : सुन्थर : विहंगम दृश्य
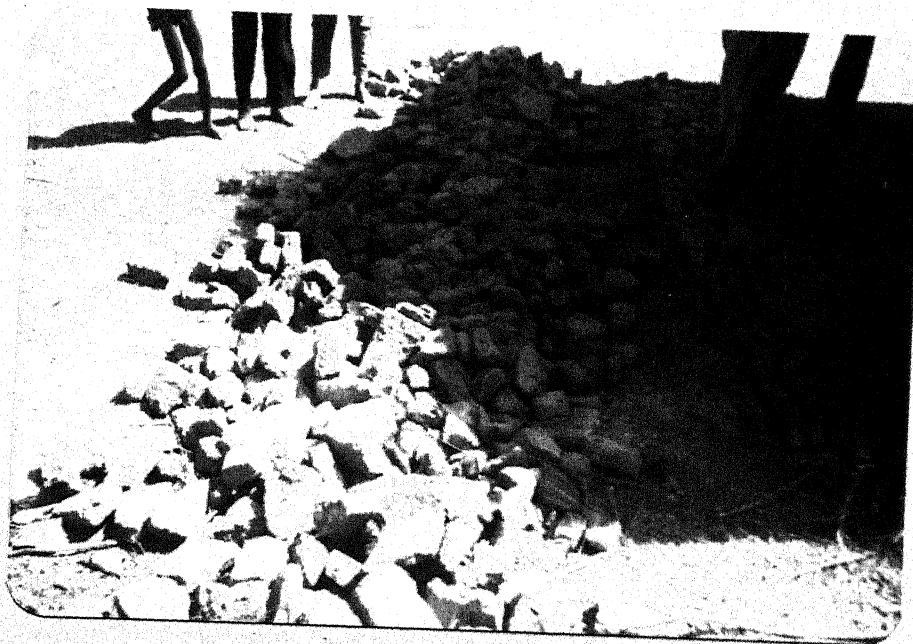
फलक 63 : सुन्थर : बिखरे हुए ईंटों के टुकड़े

फलक 64 : सुन्थर : ईंटों से निर्मित एक गुफा
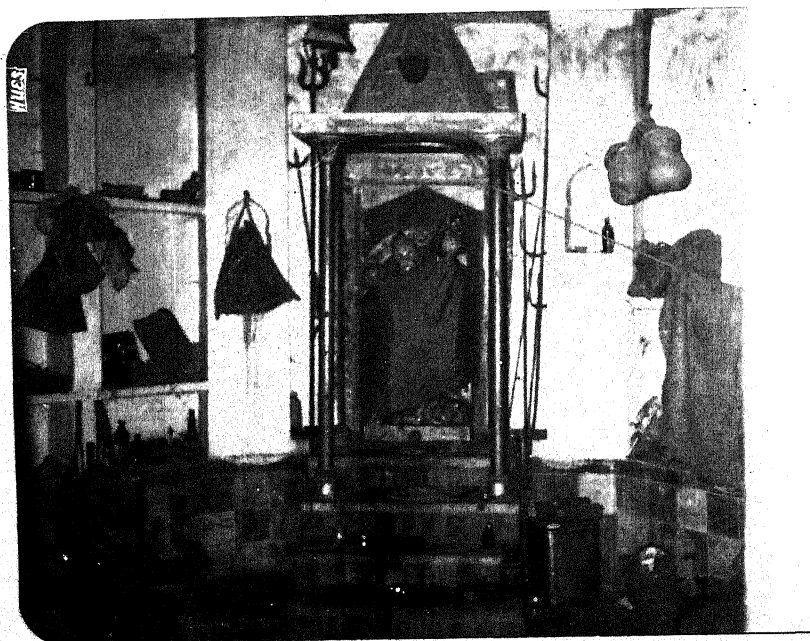
फलक 65 : सुन्थर : हनुमान की प्रतिमा
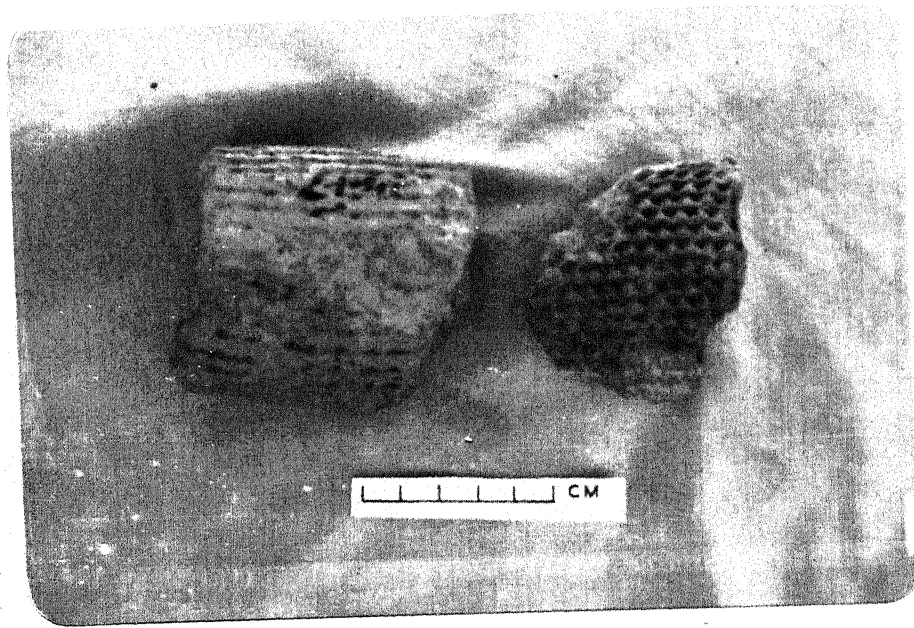
फलक 66 : सुन्थर : पकी मिट्टी से निर्मित अलंकृत गदाकार लोढ़े

फलक 67 : सुलेमपुर कहरा : विहंगम दृश्य

फलक 68 : सुलेमपुर कहरा : लाल पात्र-परम्परा के पात्र-खण्ड

फलक 69 : सम्सपुर-रुकुनुद्दीनपुर : विहंगम दृश्य
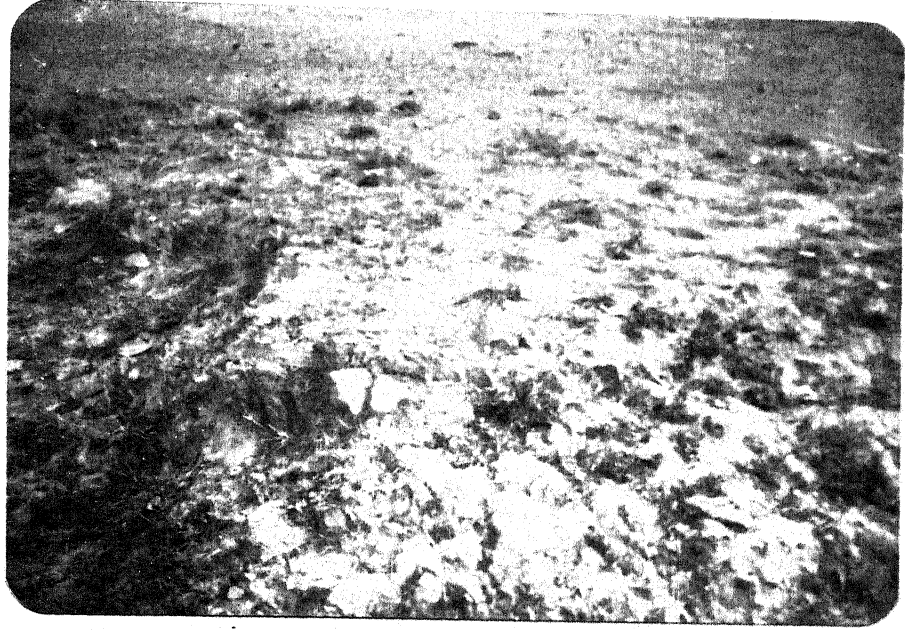
फलक 70 : सम्मसपुर-रुकुनुद्दीनपुर : विहंगम दृश्य

फलक 71 : पक्खरपूर : विहंगम दृश्य

फलक 72 : पक्खरपुर : भट्ठी के अवशेष

फलक 73 : गौसपुर ककरहिया : विहंगम दृश्य

फलक 74 : गौसपुर ककरहिया : विहंगम दृश्य

फलक 75 : एकुनपुर : विहंगम दृश्य
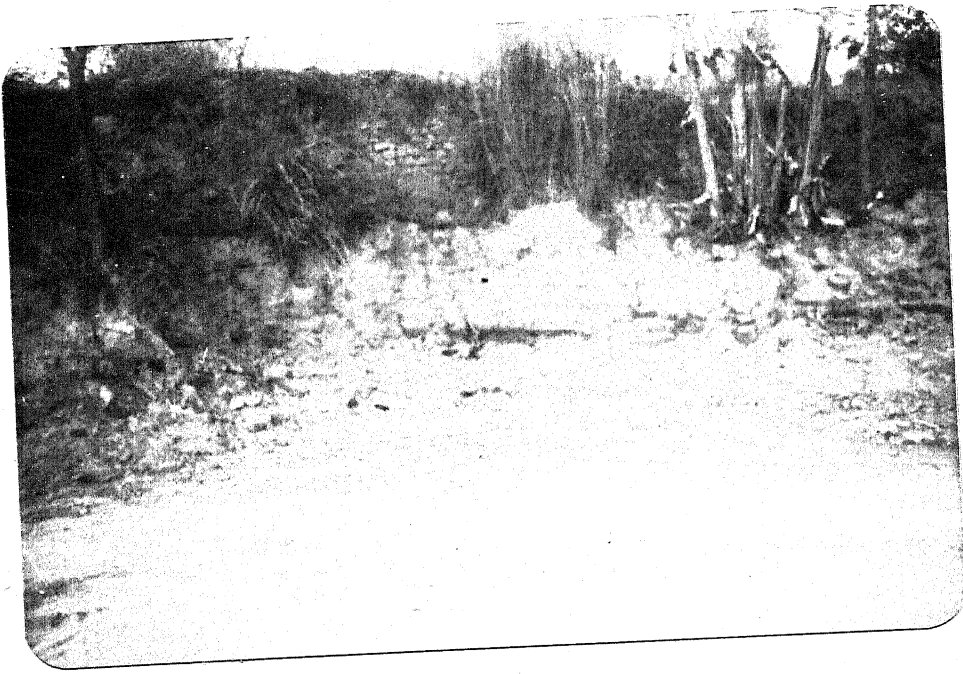
फलक 76 : रुकुनपुर : विहंगम दृश्य
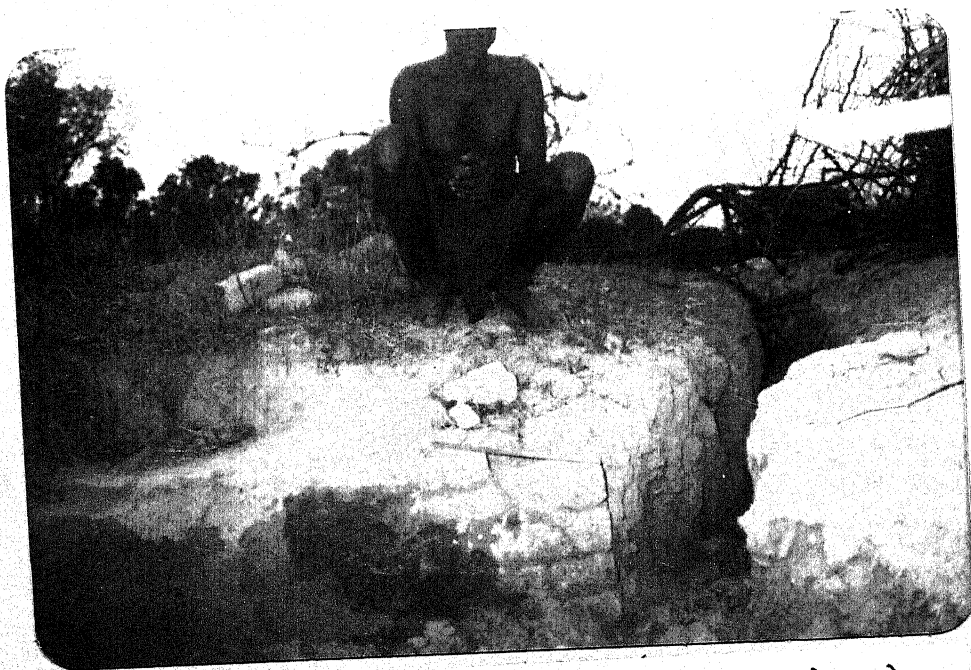
फलक 77 : रुकुनपुर : पकी ईंटों की दीवाल के अवशेष
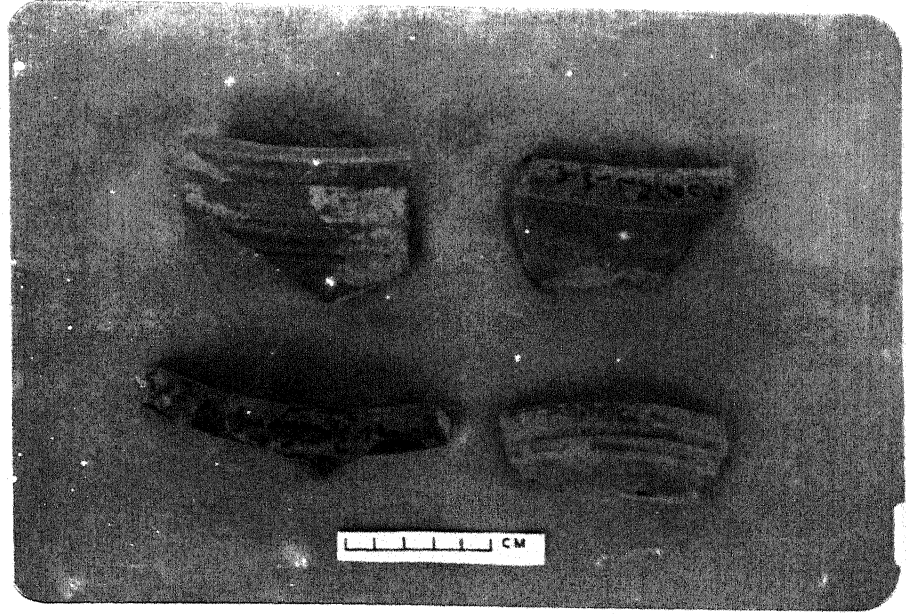
फलक 78 : एनलपुर-भिटौरा : (विहंगम दृश्य)

फलक 79 : महुअल : विहंगम दृश्य

फलक 40 : मड़हरा : विहंगम दृश्य

फलक 41 : मित्तूपुर : विहंगम दृश्य

फलक 82 : अयोध्या ।जन्मभूमि। के उत्खनन से प्राप्त विशाल दीवाल ।रक्षा प्राचीर। के प्रमाण

फलक 83 : अयोध्या ।हनुमान गढ़ी के पास। के उत्खनन से प्राप्त देज आकार के ईंटों का कुँआ, राजावासुदेव की मिट्टी की मुहर, जैन मृण्मूर्ति, राउलेटेड-वेयर के पात्र-खण्ड

फलक 84 : अयोध्या : एन0बी0पी0 काल की मृण्मूर्ति

फलक 85 : अयोध्या : गुप्तकालीन भवन के अवशेष